नेताजी की वाणी

अर्थात्

[नेताजी श्री सुभाषचन्द्र बोस के अब तक के महत्वपूर्ण व्याख्यान और लेखों का अपूर्व संग्रह]

सम्पादक—
श्री गिरीशचन्द्र जोशी

प्रकाशक :—
आदर्श हिन्दी पुस्तकालय
४१९ अहियापुर
इलाहाबाद

प्रथम संस्करण | नवम्बर सन् १९४६ | मूल्य ३॥)

प्रकाशक—
सुशीलकृष्ण शुक्ल
आदर्श हिन्दी पुस्तकालय
४१९ अहियापुर
इलाहाबाद

नेहरूजी की वाणी

इस पुस्तक में पं० जवाहरलाल नेहरू के अब तक के महत्व-पूर्ण व्याख्यान और लेखों का अपूर्व संग्रह है। नेहरूजी की प्रतिभा, उनकी अटल देशभक्ति, त्याग और तपस्या संसार विदित है। ऐसे महान् प्रतिभाशाली व्यक्ति की वाणी से निकले हुए एक-एक शब्द अमूल्य हैं। इस महत्वपूर्ण पुस्तक द्वारा माननीय नेहरूजी के विचार और उपदेश का घर-घर प्रचार होना चाहिये। मूल्य २५० से अधिक पृष्ठ की पुस्तक का २।।) डाक खर्च अलग।

आदर्श हिन्दी पुस्तकालय,
४१९ अहियापुर, प्रयाग।

मुद्रक—
भगमलाल जायसवाल, जायसवाल प्रेस,
कीडगंज, प्रयाग।

विषय-सूची

विषय		पृष्ठ संख्या

नेताजी की वाणी

भारत और विश्व

[ग्रेट ब्रिटेन ने शासन और विभाजन की नीति का प्रयोग जिस कौशल, सिलसिले और निर्ममता से किया है, संसार के अन्य किसी साम्राज्यवादी ने नहीं किया। इसी पालिसी के अनुसार आयर्लैंड को वास्तविक सत्ता सौंपने के पहले अलस्टर बनाया गया और अरबों को पेलेस्टाइन की सत्ता देने के पहले उन्हें यहूदियों से अलग कर दिया जायगा। मगर ब्रिटेन स्वयं इस वैधनीति के जाल में फँस गया है, वह हिन्दुओं को खुश करे ? या मुसलमानों को ? अरबों को या यहूदियों को ?]

श्रीमान् चेयरमैन साहब और बन्धुओं !

आगामी वर्ष के लिये अखिल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का सभापति चुनकर आपने मेरा जो सम्मान किया है उसके प्रति गम्भीर अनुभूति अनुभव करता हूँ। मैं इतना आत्म-विश्वासी नहीं हूँ कि एक क्षण के लिये भी सोचूँ कि मैं इतने महान् सम्मान के किसी भी तरह योग्य हूँ। मैं इसे आपकी उदारता का प्रतीक मानता हूँ और देश के युवकों के यौवन की स्वीकृति समझता

हूं, राष्ट्रीय संग्राम में जिनके प्रतिदान के बिना, जहाँ आज हम हैं, वहाँ नहीं होते। भय और अज्ञान आशंका के भाव से मैं इस महा सम्मान को ग्रहण कर रहा हूं जो अब तक मातृ भूमि के श्रेष्ठ पुत्रों और पुत्रियों को प्राप्त हुआ है। मैं अपनी अनगनित सीमाओं से परिचित हूं, अतएव मैं आशा करता हूँ और भगवान से प्रार्थना करता हूं कि आपने मुझे जिस इन्छासन पर बैठने को कहा है, आपके सहयोग और सहानुभूति को लेकर उस इन्छासन के अनुकूल कुछ कर सकू।

सर्व प्रथम मैं आपकी भावनाओं को ध्वनित करता हुआ माता स्वरूप रानी नेहरू, आचार्य जगदीशचन्द्र बोस, डाक्टर शरत्-चन्द्र चटर्जी की मृत्यु पर शोक प्रकट करता हूं। श्रीमती स्वरूप रानी नेहरू हमारे लिये सिर्फ पण्डित मोतीलालजी नेहरू की योग्य सहधर्मिनी और पण्डित जवाहरलालजी नेहरू की श्रद्धेय माता ही नहीं थीं, देश के लिये उनका कष्ट सहन और त्याग ऐसा था जिसके लिये कोई भी व्यक्ति गौरव अनुभव कर सकता है। सहयोगी के नाते हम उनके देहावसान से दुखी हैं और हमारे हृदय पण्डित नेहरू और वीर परिवार के सदस्यों के प्रति सहानुभूति से भरपूर है। वर्तमान वैज्ञानिक संसार में भारत का उचित स्थान प्राप्त करने के कारण भारत हमेशा आचार्य जग-दीशचन्द्र बोस को स्मरण रखेगा। आचार्य ने विज्ञान के लिये नहीं भारत के लिये अपना जीवन दिया। भारत इन्हें जानता और मानता है और आचार्य के प्रति हमेशा कृतज्ञ रहेगा। हम श्रीमती बोस के प्रति सहानुभूति प्रकट करते हैं। डाक्टर शरत्-

चन्द्र की असामयिक मृत्यु से साहित्य का सबसे अधिक चमकता सितारा अस्त हो गया। शरत् बाबू महान् साहित्यिक थे तो उससे बढ़कर देश भक्त थे। उनके अवसान से बङ्गाल की बड़ी हानि हो गयी! हम उनके परिवार वालों को अपनी हार्दिक समवेदना भेजते हैं!

फैजपूर कांग्रेस के बाद से जिन्होंने अपने देश के चरणों पर अपने प्राणों को बलि चढ़ा दी, उनके प्रति श्रद्धापूर्वक मस्तक नवाता हूँ। मैं विशेषकर उनका उल्लेख करता हूँ, जिन्होंने जेल में या नजर बन्दी में या दोनों बन्धनों से मुक्त होने के बाद संसार से नाता तोड़ लिया। ढाका सेण्ट्रल जेल में अनशन कर जीवनोत्सर्ग करने वाले श्री हरेन्द्रनाथ मुन्शी का विशेष उल्लेख आवश्यक है। मैं और कुछ न कह कर यही कहूँगा, कि वास्तव में अवश्य कुछ भयानक गड़बड़ी है जिसकी वजह से श्री जतीनदास, सरदार महावीर सिंह, राम कृष्ण मोहन मैत्रा, हरेन्द्र मुन्शी जैसी समुज्वल आत्माएं जीवित न रह कर मरना बेहतर समझती हैं।

मानव इतिहास पर विहंगम दृष्टि डालते ही हमारी दृष्टि साम्राज्यों के उत्थान और पतन पर पड़ती है। पूर्व और पश्चिम में साम्राज्यों का क्रमशः विकाश हुआ और वे अपनी उन्नति तथा समृद्धि की चरम सीमा पर पहुँचे और फिर धीरे-धीरे वे नगण्य अवस्था में पहुँच गये तथा कभी-कभी उनका नाश भी हो गया। पूर्व काल का रोमन साम्राज्य और अर्वाचीन काल के तुर्की और आस्ट्रो हंगेरियन साम्राज्य इसके उदाहरण हैं। भारत के साम्राज्य—मौर्य, गुप्त और मुगल भी इस नियम के

अपवाद नहीं है। इतिहास के इन तथ्यों के रहते हुए भी क्या कोई इतना साहसी हो सकता है जो कहे कि ब्रिटिश साम्राज्य के भाग्य में और कुछ लिखा है ? ब्रिटिश साम्राज्य आज इतिहास के उसी चौराहे पर खड़ा है, या तो उसे उन्हीं साम्राज्यों के रास्ते पर जाना होगा या उसे स्वतन्त्र देशों के संघ में शामिल होना होगा। उसके लिये फिलहाल दोनों मार्ग खुले हैं ? सन् १९१७ में जारशाही साम्राज्य नष्ट हो गया और उसके ध्वंसावशेष से "रशियन सोवियट सोशलिस्ट रिपब्लिक" संस्था का उदय हुआ। ग्रेट ब्रिटेन के लिये अभी भी मौका है कि वह रशियन इतिहास से शिक्षा ग्रहण करे ? ब्रिटेन ऐसा करेगा ?

ब्रिटिश साम्राज्य राजनीति में—कहीं का ईंट का कहीं का रोड़ा, भानभती ने कुनबा जोड़ा, कहावत चरितार्थ करता है। स्वशासित देशों, अर्द्ध स्वशासित अविदित देशों और शासित देशों का समुच्चय है। वैधानिक साधनों और मानवीय कौशलों से इसे कुछ काल के लिये उभाड़ा जा सकता है, लेकिन हमेशा के लिये नहीं। अगर भीतरी दोष ठीक समय में दूर न किये गये तो, बिना बाहरी दबाव के साम्राज्य खुद अपने बोझ से ही गिर पड़ेगा। लेकिन क्या ब्रिटिश साम्राज्य एक सा कहीं अपने आपको स्वतन्त्र देशों के संघ में परिवर्तित कर सकता है ? हाँ इस सवाल का जवाब ब्रिटिश जनता को देना है ! यह परिवर्तन तभी सम्भव हो सकता है जब ब्रिटिश जनता अपने ही देश में स्वतन्त्र हो जाय—ग्रेट ब्रिटेन समाजवादी राज हो जाय। ग्रेट ब्रिटेन की

पूँजीवादी शासक श्रेणियों और उपनिवेशों में अविच्छेद सम्बन्ध रहे। जैसा कि लेनिन ने कहा है ?

"Reaction in Great Britain is strengthened and fed by the enslavement of a number of nations" ब्रिटिश अभिजात्य और धनिवर्ग का अस्तित्व प्रधानतः उपनिवेशों और शासित देशों के शोषण पर निर्भर है। उपनिवेशों और शासित देशों का उत्कर्ष ग्रेट ब्रिटेन की शासक जाति की जड़ पर कुठाराघात है और साथ ही ग्रेट ब्रिटेन में समाजवादी राज की स्थापना की तैयारी है। औपनिवेशिक शासन का श्राद्ध किये बिना किसी तरह का फल पाना असम्भव है। हम जो अपने देश भारत की राजनैतिक स्वाधीनता और अन्य देशों की परतन्त्रता के विरुद्ध युद्ध कर रहे हैं, ब्रिटिश जनता की आर्थिक उन्नति के लिये लड़ रहे हैं।

यह सब जानते हैं कि हर साम्राज्य विभाजन और शासन की नीति पर आश्रित है। लेकिन मुझे सन्देह है कि ग्रेट ब्रिटेन ने इस नीति का प्रयोग जिस कौशल सिलसिले और निर्ममता से किया है, संसार में अन्य किसी साम्राज्यवादी ने नहीं किया। इसी पालिसी के अनुसार आयर्लैण्ड को वास्तविक सत्ता सौंपने के पहले अलस्टर आयर्लैंड से अलग कर दिया गया, इसी प्रकार पेलेस्टाइन की सत्ता देने के पहले यहूदियों को अरबों से अलग कर दिया जायगा। सत्ता हस्तानन्तरित करने के कार्य को निस्तेज बनाने के लिये आन्तरिक विभाजन आवश्यक है। नवीन भारतीय विधान में यही विभाजन का सिद्धान्त भिन्न रूप में वर्तमान

है। नवीन भारतीय विधान में हम विभिन्न सम्प्रदायों को विभाजित कर, उन्हें अलग-अलग बाद करने की चेष्टा देखते हैं। भारतीय संघ योजना में देशी नरेशों और ब्रिटिश भारत से निर्वाचित प्रतिनिधियों का विचित्र सम्मेलन है। और अगर नवीन भारतीय विधान अस्वीकृत कर दिया गया—चाहे ब्रिटिश भारत के विरोध या देशी भारत की अस्वीकृति के कारण तो मुझे जरा भी सन्देश नहीं है कि ब्रिटिश चतुर, किसी दूसरे तरीके से भारत को विभाजित करने की कोशिश करेगें और इस प्रकार वे भारत की सत्ता हस्तानन्तरित करने के कार्य को टाल देंगे। इसीलिये ह्वाइट हाल से आने वाले हर विधान की पूर्ण सावधानी से परीक्षा करनी चाहिये।

विभाजन और शासन की नीति में प्रकट सुविधाएँ तो हैं ही साथ ही वह शासक जाति के लिये कुछ दिक्कतें भी खड़ी कर देती हैं। यह नीति नयी समस्याएँ और नये झंझट पैदा करती है? विभाजन और शासन की द्वैध नीति के फल स्वरूप ग्रेट ब्रिटेन खुद इसके जाल में फँस गया है। वह मुसलमानों को खुश करे या हिन्दुओं को? वह पेलेस्टाइन में अरबों का पक्ष ले या यहूदियों का? ईराक में वह अरबों की हिदायत करे या कुर्दों की? मिस्र में बादशाह की तरफदारी करे या वफ्द दल की? साम्राज्य के बाहर भी यही द्वैधवाद दिखलायी पड़ता है। स्पेन में भी फ्रांको और वहाँ की सरकार का सवाल है तो युरोप में फ्रांस और जर्मनी के सम्बन्ध में ब्रिटिश राजनीतिज्ञों के दल बटे हुए हैं। असम्बद्धता और विरोधाभास, जो हमें ब्रिटेन की वैदेशिक

नीति में दिखलाई पड़ता है, उसके ब्रिटिश साम्राज्य के स्वरूप के कारण है। ब्रिटिश केबिनेट के यहूदियों को प्रसन्न करना होगा, क्योंकि यहूदी धन की उपेक्षा नहीं की जा सकती, दूसरी तरह इण्डिया आफिस और फोरेन आफिस को अरबों को खुश रखना है क्योंकि पूर्व एशिया और भारत में साम्राज्य स्वार्थों की रक्षा करना है। इस विरोधाभास और असम्बद्धता से ब्रिटेन तभी मुक्त हो सकता है जब वह अपने साम्राज्य को स्वतन्त्र देशों के संघ में परिवर्तित कर दें। अगर वह ऐसा कर सकेगा तो वह इतिहास में अभूतपूर्व कार्य कर सकेगा। लेकिन अगर ऐसा न कर सका तो उसे जिस साम्राज्य पर से सूर्य कभी अस्त नहीं होता, उस साम्राज्य की सहायता से वंचित होना होगा। ब्रिटिश जनता को अस्ट्रो हंगेरियन साम्राज्य से मिलने वाले सबक को न भुलाना चाहिये।

फिलहाल ब्रिटिश साम्राज्य अनेक स्थानों पर क्षत-विक्षत हो रहा है। साम्राज्य के अन्दर एक दम पश्चिम में आयर्लैंड और एकदम पूर्व में भारत है, बीच में पेलेस्टाइन, मिश्र और ईराक है। साम्राज्य के बाहर, मेडिटेरियम में इटली और सुदूरपूर्व में जापान दबाव डाल रहा है। ये दोनों ही देश, साम्राज्यवादी सैनिक वृत्ति के साम्राज्यवादी देश हैं। इस अस्थिर पृष्ट भूमि के सामने सोवियट रूस है जो हर साम्राज्यवादी राज की शासक जाति के हृदय में त्रास उत्पन्न करता है। ब्रिटिश साम्राज्य कब तक इस दबाव और क्षत-विक्षत अवस्था को सह सकेगा?

आज ब्रिटेन अपने को समुद्रों का राजा नहीं कह सकता।

समुद्री शक्ति के कारण ही १८वीं १९वीं शताब्दी में उसका परम उत्थान हुआ ? बीसवीं सदी में एक नयी शक्ति—हवाई शक्ति की उद्भावना से उसकी साम्राज्य शक्ति क्षीण हो रही है। इसी हवाई शक्ति के कारण ही इटली जैसा छोटा देश मध्यसागर की शक्तिशाली ब्रिटिश नौशक्ति को ललकार सकता है। उसके युद्धपोत हवाई हमले चाहे सह सकें, पर यह नयी हवाई ताकत रहने के लिये जन्मी है। स्थान का व्यवधान मिट गया और हवाई हमला बचाव का इन्तजाम होने पर भी लन्दन किसी भी बाहरी देश के हवाई बम बाजों के जत्थे की दया के भरोसे हैं। हवाई शक्ति ने युद्ध प्रणाली में क्रान्ति कर दी और संसार की राजनीति में जो शक्ति सन्तुलन था उसे छिन्न भिन्न कर दिया।

विश्व शक्तियों की इस अन्तर-क्रीडाके बीच भारत शक्तिशाली प्रकट हो रहा है। जितना पहले कभी नहीं था। हमारा देश भारत महान् देश है जिसकी जन-संख्या ३५करोड़ है। अभी तक हमारे देश का विस्तार और हमारी विस्तृत जन-संख्या कमजोरी का स्रोत थी। आज वही शक्ति का स्रोत है, बशर्ते हम एक साथ खड़े हों और दृढ़ता से उन सबों का सामना करें! भारतीय एकता की दृष्टि से सबसे पहले यह याद रखना चाहिये, ब्रिटिश भारत और देशी रियासतों का विभाजन, बिलकुल बनावटी है। भारत एक है, और भारतीय भारत और ब्रिटिश भारत की आशा अकांक्षा एक है। हमारा लक्ष्य एक स्वाधीन भारत है और यह लक्ष्य गणतन्त्र संघ द्वारा ही पूर्ण हो सकता

है जिसमें प्रान्त और रियासतें स्वेच्छा से शामिल होंगी। भारतीय भारत में प्रजातन्त्रीय सरकार की स्थापना के आन्दोलन में कांग्रेस ने अपना समर्थन और सहानुभूति बार-बार प्रकट की है। यह हो सकता है कि फिलहाल कार्याधिक के कारण रियासती सहयोगियों के लिये कुछ अधिक न कर सके फिर भी कांग्रेसी व्यक्तिगत तौर पर उनके संग्राम में भाग ले सकते है। मेरे जैसे कांग्रेस में बहुत से लोग है जो देखना चाहते हैं कि कांग्रेस इस दशा में अधिक कार्य करे। मैं आशा करता हूँ कि निकट भविष्य में यह सम्भव हो सकेगा कि कांग्रेस आगे बढ़कर रियासती सहयोगियों को अधिक सहायता दे सकेगी। हमें यह न भूलना चाहिये कि उन्हें हमारी सहायता और सहानुभूति की जरूरत है।

भारतीय एकता के विषय में दूसरा सवाल अल्प संख्यकों का है। इस प्रश्न पर कांग्रेस ने समय-समय पर अपनी नीति प्रकट की है। अक्टूबर १९३७ में आ० भा० कांग्रेस कमेटी ने इस विषय में घोषणा की है। इस घोषणा में साफ कहा गया है कि हर भारतीय को अपनी राय प्रकट करने, आपस में मिलने-जुलने, कानून और नैतिकता के विरुद्ध न हो तो निशस्त्र एकत्र होने का हक है। हर शख्स अपनी आत्मा के अनुकूल किसी भी धर्म मत का पालन कर सकता है। अल्पसंख्यकों की संस्कृति भाषा, लिपि, और भाषा के आधार पर स्थित क्षेत्रों की रक्षा की जायगी। बिना धर्म, जाति, स्त्री, पुरुष के भेद-भाव के सब कानून की दृष्टि में बराबर हैं। राज द्वारा बनाये गये, या चन्दे तथा किसी व्यक्ति विशेष द्वारा सार्वजनिक उपयोग के लिये

तैयार करवाये गये, कुएँ, तालाब, पथ, स्कूल, सार्वजनिक स्थानों पर सब का समान अधिकार है। राज सब तरह के धर्मों से निष्पक्ष है। हर बालिग व्यक्ति को मताधिकार प्राप्त होगा। हर नागरिक भारत में कहीं भी आ जा सकता है, उसके किसी भी भाग में बस सकता है, सम्पत्ति खरीद सकता है, व्यापार या कोई भी पेशा कर सकता है। हर भारतीय कानून की रू और हिफाजत का समान रूप से हकदार है। आधार भूत स्वत्वों की ये धारणा और कांग्रेस प्रस्ताव स्पष्ट करता है कि व्यक्तिगत विश्वास धर्म और संस्कृति में कोई हस्तक्षेप न होना चाहिये, और अल्पमत अपने व्यक्तिगत नियमों का पालन कर सकता है, उस पर बहुमत कोई निर्णय नहीं लाद सकता।

साम्प्रदायिक निर्णय के सम्बन्ध में कांग्रेस का रुख प्रस्तावों और पिछले चुनाव के द्वारा स्पष्ट कर दिया गया है। कांग्रेस साम्प्रदायिक निर्णय के खिलाफ है, क्योंकि यह अराष्ट्रीय, अप्रजातन्त्रीय और भारतीय स्वाधीनता का बन्धन और भारतीय एकता के विकाश में बाधक हैं। साथ ही कांग्रेस ने घोषित कर दिया है, परिवर्तन या उच्छेद सम्बन्धित दलों के समझौते से हो सकता है। समझौते द्वारा इस तरह के परिवर्तन के हर अवसर के लिये कांग्रेस तैयार है।

भारत के अल्प संख्यकों से सम्बन्धित हर मामले में कांग्रेस उनके सहयोग से आगे बढ़ना चाहती है। उनकी सदिच्छा और सहयोगिता से वह समान लक्ष्य स्वाधीनता और भारतीय जनता की उन्नति चाहती है।

इस समस्या के अन्तिम समाधान के लिये फिर से चेष्टा करने का वक्त आ गया है। मैं समझता हूँ, मैं सब कांग्रेसियों की भावना व्यक्त करता हूँ। जब मैं कहता हूँ कि, हम, सर्व सम्मत समझौते पर पहुँचने के लिये अपनी पूरी कोशिश करने के लिये उत्सुक हैं जो राष्ट्रीयता के आधार भूत सिद्धान्तों से सम्बद्ध हो। पिछली कांफ्रेंसों और आपसी भेंट-मुलाकातों से जमीन तैयार हो गयी है। धार्मिक मामलों में "जिओ और जीने दो" और राजनैतिक तथा आर्थिक मामलों में समझा-बुझाकर चलने की नीति हमारा लक्ष्य होना चाहिये। यद्यपि जब हम अल्प संख्यकों पर विचार करते हैं, मुस्लिम समस्या आ जाती है और हम यह समस्या हल करना चाहते हैं, मैं कहना चाहता हूँ, हरिजनों के सम्बन्ध में भी कांग्रेस उतनी ही उत्सुक है। मैं अल्प संख्यकों पर ही यह भार छोड़ता हूँ कि वे खुद निष्पक्ष भाव से निर्णय करें कि कांग्रेस कार्य-क्रम व्यवहार में आने पर उनके भय करने का कोई कारण है? कांग्रेस समस्या भारतीयों के राजनैतिक तथा आर्थिक अधिकारों की हामी है। अगर कांग्रेस अपना कार्य-क्रम व्यवहार में लाने में सफल हुई तो अल्प संख्यकों को भी उतना ही लाभ होगा, जितना अन्य लोगों को। राजनैतिक सत्ता पर कब्जा कर लेने के बाद अगर राष्ट्रीय पुनर्गठन समाजवादी तरीकों पर होता है, जिसमें मुझे जरा भी शक नहीं है, तो जो दीन-हीन हैं उन्हें ही फायदा होगा और भारतीय जनता इसी श्रेणी की है, जिसके पास कुछ नहीं है। अल्प संख्यकों के लिये चिन्ता की एक ही बात रह जाती है! यह धर्म और धर्म के आधार पर बनी संस्कृति

की समस्या है। इस सम्बन्ध में कांग्रेस की नीति "जीओ और जीने दो" की है। यह किसी के आत्मविश्वास, धर्म-संस्कृति या भाषा के आधार पर बने क्षेत्रों में हस्तक्षेप नहीं करना चाहती। भारत के स्वाधीनता पाने पर मुसलमानों के लिये डरने की कोई बात नहीं है बल्कि उनका हर तरह से फायदा है। तथा कथित अछूतों की सामाजिक और धार्मिक पाबन्दियों के सम्बन्ध में पिछले १७ वर्षों से कांग्रेस ने हमेशा उन्हें दूर करने का प्रयत्न किया है। मुझे शक नहीं है कि वह दिन पास है जब ये सब पाबन्दियाँ भूतकाल की चीज हो जायँगी।

मैं अब उन तरीकों पर विचार प्रकट करना चाहता हूँ जिन्हें आगामी वर्ष में काग्रेस को अपनाना चाहिये और इस विषय पर भी प्रकाश डालूँगा कि आगामी संग्राम में कांग्रेस का क्या भाग होगा? मेरा विश्वास है कि हमारा तरीका सत्याग्रह या अहिंसात्मक असहयोग होना चाहिये, जिसमें सविनय कानून भंग भी शामिल है। मेरे विचार से हमारे इस तरीके को निष्क्रिय प्रतिरोध नहीं कहा जाना चाहिये। सत्याग्रह जैसा कि मैं समझता हूँ सिर्फ निष्क्रिय प्रतिरोध नहीं है बल्कि सक्रिय प्रति-रोध भी है यद्यपि उसका रूप अहिंसात्मक होना चाहिये। हमें अपने देशवासियों को याद दिला देना चाहिये कि सत्याग्रह संग्राम फिर चलाना होगा। प्रान्तों में मंत्रिमंडलत्व ग्रहण करना प्रयोगात्मक कदम है, इससे यह धारणा उत्पन्न नहीं होने देना चाहिये कि हमारी भावी कार्यवाही पूर्ण वैधानिकता के अन्दर सीमित रहेगी। इस बात की पूरी संभावना है कि जबरन

संघ योजना की स्थापना का दृढ़ विरोध करने के लिये हमें सविनय कानून भंग आन्दोलन छेड़ना पड़े।

हमारे स्वाधीनता-संग्राम में हम दो प्रकारान्तर ग्रहण कर सकते हैं। जब तक पूर्ण स्वाधीनता प्राप्त न हो, तब तक हम अपना संग्राम चलाते चले जायँ और अपने संग्राम में आगे बढ़ते हुए हम जो अधिकार प्राप्त करें उनका उपयोग न करें या हम उनका उपयोग कर अपनी स्थिति को दृढ़ करते हुए पूर्ण स्वराज्य संग्राम जारी रखें। सैद्धान्तिक दृष्टिकोण से दोनों प्रकारान्तर ग्रहण-योग्य हैं, लेकिन हमें हर वक्त यह विचार करना चाहिये कि कौनसा प्रकार राष्ट्रोत्थान के लिये अधिक उपयुक्त होगा। हर हालत में हमारे अग्रगमन की अन्तिम अवस्था ब्रिटेन से सम्बन्ध-विच्छेद होगा। जब सम्बन्ध-विच्छेद होगा और ब्रिटिश आधिपत्य का कोई चिह्न न रह जायगा तब हम इस स्थिति में होंगे कि ग्रेट ब्रिटेन के साथ भावी सम्बन्ध के विषय में निर्णय करें। ग्रेट ब्रिटेन के साथ हमारा क्या सम्बन्ध होगा, इस वक्त यह बताना समय से बहुत पूर्व है। यह अधिकांशतः ब्रिटेन की जनता पर निर्भर करेगा। इस विषय में प्रेसीडेंट डी० वेलरा के रुख से मैं बहुत प्रभावित हूँ। उनकी तरह मैं कहना चाहता हूँ कि ब्रिटिश जनता से हमारी कोई दुश्मनी नहीं है। हम ग्रेट ब्रिटेन से युद्ध कर रहे हैं और उसके साथ भावी सम्बन्ध निर्णय में हम पूरी आजादी चाहते हैं, लेकिन जब हमें आत्म-निर्णय का पूरा अधिकार हो जायगा तब कोई वजह नहीं है कि हम ब्रिटिश जनता के साथ सम्बन्ध स्थापित न करें।

मुझे आशंका है कि बहुत से कांग्रेसियों के दिमाग में इस विषय की स्पष्ट धारणा नहीं है कि भावी आन्दोलन में कांग्रेस का क्या रुख होगा ? मै जानता हूँ, कुछ मित्र सोचते हैं कि स्वाधीनता प्राप्त करने के बाद, कांग्रेस अपना लक्ष्य पा लेने के कारण, कांग्रेस अलग हट जायगी। यह ख्याल बिलकुल भ्रमात्मक है। जो कांग्रेस भारत की स्वाधीनता प्राप्त करेगी, वही कांग्रेस स्वाधीनता प्राप्त करने के बाद युद्धान्तर राष्ट्रनिर्माण का कार्य करेगी। जिन्होंने अधिकार प्राप्त किये है वे ही उन अधिकारों का ठीक से व्यवहार कर सकते है। अगर अन्य व्यक्तियों को शासनासन पर बिठा दिया जायगा तो उनमे क्रान्तिकारी राष्ट्र-गठन के लिये आवश्यक शक्ति, आत्मविश्वास और आदर्शवाद का अभाव होगा। प्रान्तीय स्वायत्त शासन स्वशासन के अन्तर्गत बनें। कांग्रेसी और गैर कांग्रेसी मंत्रिमण्डलों में यही फर्क है।

राजनैतिक स्वाधीनता प्राप्त करने के बाद, काग्रेस के हट जाने का कोई सवाल पैदा नहीं हो सकता। बल्कि कांग्रेस को शासन सत्ता संभालनी होगी, शासन की जिम्मेदारी लेनी होगी और राष्ट्रगठन का कार्य करना होगा। तभी कांग्रेस अपना कार्य पूर्ण रूप से पूरा कर सकेगी, अगर वह जबरन अपने आपको दायित्व से अलग कर लेती है तो देश में विशृंखलता फैल जायगी। युद्धोत्तर युरोप को देखने से हम यही पाते हैं कि जिस देश में अधिकार प्राप्त करने वाले दल के हाथ में राष्ट्रगठन का कार्य रहा है, उन्हीं देशों ने उन्नति की है। मैं जानता हूँ कि यह तर्क किया जायगा कि वे वैसी स्थिति में, उस दल का राज

के साथ रहना, राज को एकाधिपत्य राज में परिवर्तित कर देगा। लेकिन मैं इस अभियोग को स्वीकार नहीं करता किसी भी देश का राज तभी एकाधिपत्य राज हो सकता है, जब उस देश में रूस, जर्मनी, इटली की तरह एक ही पार्टी हो। लेकिन कोई वजह नहीं है कि अन्य पार्टियों पर रुकावट डाली जाय। इसके सिवा पार्टी खुद ही प्रजातन्त्रीय आधार पर होगी, इसका आधार नाजी पार्टी की तरह 'एक नेता' एक पार्टी की तरह नहीं होगा। एक से अधिक पार्टी की मौजूदगी और कांग्रेस पार्टी का प्रजातन्त्रीय आधार पर गठन भावी भारतीय राज को एक पार्टी राज नहीं होने देगा। इसके सिवा प्रजातन्त्रीय आधार होने के कारण नेता, जनता पर लादे नहीं जायेंगे बल्कि नेता जनता से आयेंगे।

यह हो सकता है कि भावी राष्ट्र संगठन की विस्तृत योजना इस वक्त रखना, समय से कुछ पूर्व कहा जा सकता है, लेकिन हम उन कुछ सिद्धान्तों पर विचार कर सकते हैं, जिनके आधार पर भावी समाज का संगठन होगा। मुझे शक नहीं है कि हमारी भावी प्रधान राष्ट्रीय समस्याएँ—दरिद्रता, अशिक्षा, रोगों को दूर करना और जीवनोपयोगी वस्तुओं का वैज्ञानिक उत्पादन और वितरण, समाजवादी तरीकों से अच्छी तरह हल हो सकती है। हमारी भावी राष्ट्रीय सरकार को सबसे पहला काम राष्ट्र पुनः निर्माण की योजना बनाने के लिये एक कमीशन नियुक्त करना होगा। इस योजना के दो भाग होंगे, एक जो तुरन्त अमल में लाया जाय और दूसरा दीर्घकालीन। तुरन्त

अमल में लायी जाने वाली योजना में तीन तरह का कार्य-क्रम होगा। पहला—देश को आत्म-बलिदान के लिये तैयार करना, दूसरा भारत में सबों का एक रास्ता बनाना, तीसरा स्थानीय और सांस्कृतिक स्वायत्त सत्ता के लिये क्षेत्र तैयार करना। दूसरा और तीसरा कार्य परस्पर विरोधी हो सकता है—लेकिन दरअसल ऐसा नहीं है। सार्वजनिक रूप से हमारे देश में जो भी राजनैतिक योग्यता और मौलिकता है, उसे हमें इन दोनों उद्देश्यों की पूर्ति के लिये लगाना चाहिये। हमें भारत में एक रूपता लाना होगा, ताकि हम विदेशी आक्रमण से भारत की रक्षा कर सकें। सुदृढ़ केन्द्रीय सरकार द्वारा देश की एक रूपता का यन्त्र रखते हुए हमें सब प्रान्तों और सब अल्प संख्यक सम्प्रदायों को उनके भरोसे छोड़ देना होगा और उन्हें अपने शासन तथा सांस्कृतिक कार्यों में काफी हद तक स्वाधीन छोड़ देना होगा। जब विदेशी आधिपत्य का बोझ हट जायगा, तब देश की जनता को एक साथ रखने के लिये विशेष प्रयत्न करने होंगे। क्योंकि विदेशी शासन ने हमें एक हद तक कमजोर और असंगठित कर दिया है। राष्ट्रीय एकता बढ़ाने के लिये हमें अपनी राष्ट्र भाषा और राष्ट्रलिपि का विकाश करना होगा। इसके सिवा, हवाई जहाज, टेलीफोन, रेडिओ, फिल्म, टेलिवीजन आदि आधुनिक वैज्ञानिक साधनों द्वारा हमें भारत के विभिन्न भागों को नजदीक कर देना होगा और एक सी शिक्षानीति द्वारा समस्त जनता में एक लिपि का प्रचार करना होगा। जहाँ तक हमारी राष्ट्रभाषा का सम्बन्ध है, मेरे विचार से हिन्दी और उर्दू का भेद बनावटी

है। स्वाभाविक राष्ट्रभाषा दोनों का मिश्रण होना चाहिये, जैसा कि दैनिक जीवन में हम व्यवहार करते है, यह राष्ट्रभाषा चाहे नागरी लिपि में लिखी जाय या उर्दू में। मैं जानता हूँ एक दूसरी लिपि के खिलाफ बहुत से हैं। लेकिन हमारी नीति किसी भी लिपि के बहिष्कार की न होनी चाहिये। मेरे ख्याल से हमें ऐसी लिपि को ग्रहण करना चाहिये जो हमें दुनिया के साथ कर दे। रोमन लिपि की बात सुनकर कुछ आशंकित हो सकते हैं, पर मैं उनसे प्रार्थना करता हूँ कि वे इस विषय पर वैज्ञानिक और ऐतिहासिक दृष्टि से विचार करें। नागरी लिपि, जैसी कि आज है, विकास की अनेक परिस्थितयों को पार कर हुई है। इसके सिवा ज्यादातर प्रान्तों की लिपि अपनी है, फिर उर्दू लिपि का उपयोग भी पञ्जाब और सिन्ध के मुसलमान और हिन्दू करते हैं, ऐसी विभिन्नताओं के रहते हुए अखिल भारतीय लिपि का चुनाव वैज्ञानिक दृष्टि से निष्पक्ष होकर करना चाहिये। मैं स्वीकार करता हूँ कि एक समय मैं खुद अनुभव करता था कि विदेशी लिपि ग्रहण करना अराष्ट्रीय है, लेकिन सन् १९३४ में तुर्की की यात्रा ने मेरा मत बदल दिया। उस समय मैंने जाना कि संसार की लिपि अपनाने में कितना महान लाभ है। हमारी जनता में ९० प्रतिशत अशिक्षित हैं और किसी लिपि से परिचित नहीं हैं, उनके लिये कोई बात नहीं है कि उन्हें शिक्षित करते समय हम किस लिपि का व्यवहार करते हैं। इसके सिवा रोमन लिपि में उन्हें युरोप की भाषाएँ सीखने में सुविधा होगी, मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि रोमन लिपि का ग्रहण किया जाना

हमारे देश में कितना नापसन्द किया जायगा। फिर भी मैं अपने देशवासियों से प्रार्थना करता हूँ कि वे इस बात पर विचार करें कि भविष्य के लिये कौन सा हल सर्वाधिक बुद्धिमत्ता पूर्ण होगा।

स्वतन्त्र भारत की दीर्घकालीन योजना के सम्बन्ध में सबसे पहली समस्या हमारी बढ़ती हुई जनसंख्या है। मैं इस विवाद में नहीं पड़ना चाहता कि भारत में जनाधिक्य है या नहीं। मैं सिर्फ इस ओर ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ कि जिस देश में गरीबी, भुखमरी और रोगों का दौर-दौरा है, उस देश में एक पीढ़ी में तीन करोड़ की जनवृद्धि नहीं सही जा सकती। पिछले युग की तरह जनसंख्या अनावश्यक बढ़ती ही गई तो हमारी योजनाएँ व्यर्थ हो जायगी। इसलिये यह वांछनीय है कि वर्तमान भारत को भोजन, वसन, शिक्षा का जब तक इन्तजाम न हो जाय तब तक जनवृद्धि पर अंकुश रहे। यह आवश्यक नहीं है कि जनवृद्धि के रोकने के तरीकों पर प्रकाश डाला जाय, लेकिन जनता का ध्यान इस विषय की ओर आकर्षित करना चाहिये।

राष्ट्र पुनर्निमाण में हमारी प्रधान समस्या होगी देश से गरीबी किस तरह दूर की जाय। इसके लिये जमींदारी का नाश और जमींन सम्बन्धी व्यवस्था में क्रान्तिकारी परिवर्तनों की आवश्यकता होगी। किसानों की आर्थिक हीनता दूर करनी होगी और ग्रामीण जनता के लिये सस्ते ब्याज में कर्ज मिल सके, ऐसी व्यवस्था करनी होगी। उत्पादक और ग्राहक

दोनों के लाभ के लिये पारस्परिक सहयोग आन्दोलन बढ़ाना होगा और जमीन की उपज बढ़ाने के लिये खेती का आधार वैज्ञानिक करना होगा।

आर्थिक समस्या के समाधान के लिये कृषि विषयक उन्नति ही पर्याप्त नहीं है, राज की मिल्कियत और नियंत्रण में औद्योगिक विकास की योजना अपनानी होगी। पुरानी उद्योग प्रणाली के स्थान पर नई उद्योग प्रणाली जमानी होगी। जो प्रणाली विदेशी के अत्यधिक उत्पादन और देश में विदेशी शासन के कारण नष्ट-भ्रष्ट हो चुकी है। राष्ट्र निर्माण योजना समिति को निर्णय करना होगा कि आधुनिक फैक्टरियों की प्रतियोगिता के रहते हुए भी कौनसा गृह उद्योग फिर से चालू किया जाना चाहिये और कहाँ पर बड़े पैमाने पर उत्पादन के कार्य को बढ़ावा देना चाहिये। आधुनिक उद्योगवाद को हम चाहे जितना नापसन्द करें और उससे उत्पन्न बुराइयों की चाहे जितनी निन्दा करें, लेकिन चाहने पर भी हम पूर्व-उद्योगकाल में नहीं जा सकते। इसलिये औद्योगीकरण को अपनाते हुए हमें उसकी बुराइयाँ दूर लाने के तरीके निकालने चाहियें और जहाँ पर फैक्टरियों की प्रतियोगिता में भी गृह-उद्योग चल सकें, वहाँ उन्हें फिर से चलाना चाहिये। भारत जैसे देश में गृह-शिल्प के लिये काफी गुंजाइश होगी, खासकर कताई और बुनाई जैसे शिल्पों के लिये।

योजना समिति की सलाह पर राज को कृषि और उद्योग के राष्ट्रीयकरण को अपनाना होगा और इसके लिये देश या विदेश

से कर्ज लेकर अथवा मुद्रा बढ़ाकर नयी पूंजी की व्यवस्था करनी होगी।

भारत के ग्यारह प्रान्तों में से सात में मंत्रिमण्डल बना लेने के बाद विधान के प्रान्तीय भाग का विरोध या प्रतिरोध करना संभव नहीं है। जब जो कुछ किया जा सकता है, कांग्रेस की स्थिति दृढ़ करने के लिये किया जा सकता है। मैं मंत्रिपद ग्रहण करने के पक्ष में नहीं हूं, इसलिये नहीं कि पद ग्रहण करने में ही कुछ बुराई है या इस नीति से कुछ भलाई नहीं हो सकती। बल्कि इसलिये कि कहीं पद ग्रहण की बुराइयाँ अच्छाइयों पर हावी न हो जायँ। मैं आशा करता हूँ मेरी आशंका निराधार साबित होगी।

कांग्रेस मंत्रिमंडलों के रहते हुए हम कांग्रेस को कैसे मजबूत और गठित कर सकते हैं। पहला काम ब्यूरोक्रेसी का रूप बदल देना। अगर ऐसा नहीं किया गया तो बुरा होगा। हर देश में, मन्त्रिमण्डल आते जाते रहते हैं, लेकिन सरकार चलानेवाले लोगों का ढाँचा बना रहता है। अगर इसका रूप और बनावट न बदली गई तो सरकारी पार्टी और उसका मन्त्रिमण्डल अपने सिद्धान्तों को कार्य रूप में परिणत करने में बेअसर हो सकता है। युद्धोत्तर जर्मनी में सोशलडेमोक्रेटिक पार्टी की यही दशा हुई, यही बात शायद १९९४-१९२९ में ग्रेट ब्रिटेन में लेबर पार्टी के लिये भी कही जा सकती है। भारत में भी यह अँग्रेजी की सृष्टि है और उच्च पदों पर ज्यादातर अंग्रेज हैं, जिनका दृष्टिकोण ज्यादातर न तो भारतीय है और न राष्ट्रीय और राष्ट्रीय नीति-व्यवहार में नहीं बर्ती जा सकती। जब तक कि नौकरशाही का

दृष्टिकोण राष्ट्रीय न हो। लेकिन परमानेण्ट सर्विसें सीधे भारत सचिव के अधिकार में होने से उनका बदला जाना आसान नहीं होगा।

विभिन्न प्रान्तों में कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलों को शिक्षा, स्वास्थ्य, मद्यनिषेध, जेल सुधार, सिंचाई, उद्योग, भूमि संस्कार श्रमिक-कल्याण आदि की योजनाएँ कार्यान्वित करनी चाहिये। इस सम्बन्ध में जहाँ तक संभव हो समस्त भारत के लिये एक नीति होनी चाहिये। इसके दो तरीके हैं, एक तो यह कि विभिन्न प्रान्तों के कांग्रेसी मंत्री एक जगह एकत्र हों, जैसे कि सन् १९३५ में सब लेबर मंत्रिगण एकत्र हुए थे, और एक योजना तैय्यार करें। इसके सिवा कांग्रेस विशेषज्ञों से सलाह प्राप्त कर कांग्रेस नियन्त्रित मंत्रिमण्डलों के विभिन्न भागों को वह सलाह दे सकती है। इसका अर्थ होगा कि प्रान्तीय सरकारों के सामने जो समस्यायें आयें उनसे कांग्रेस कार्य-कारिणी के सदस्य वाकिफ हों, यह आशय नहीं है कि वे शासन के विवरण में जायें। यह आवश्यक है कि विभिन्न समस्याओं की उन्हें जानकारी हो और वे नीति की रूप रेखा सामने रख सकें। इस मामले में कांग्रेस ने अब तक जो कुछ किया उससे अधिक करना चाहिये, नहीं तो कांग्रेस मंत्रिमण्डलों को नियन्त्रित कैसे रखा जा सकेगा ?

मैं कांग्रेस वर्किङ्ग कमेटी के सम्बन्ध में भी कुछ कहना चाहता हूँ, यह कमेटी मेरी राय में राष्ट्रीय संग्राम का संचालन करने वाली कमेटी ही नहीं है, यह स्वाधीन भारत के मंत्रि-मण्डल की छाया है, और इसे उसी तरह काम करना चाहिये। यह मेरा निजी आविष्कार नहीं है। राष्ट्रोत्थान का काम करने

वाली अन्य कमेटियों ने भी अन्य देशों में यही किया है। मै स्वाधीन भारत के रूप में सोचना-विचारता हूँ, मेरा ध्यान है कि हमें अपने जीवन में ही शीघ्र ही अपने देश में राष्ट्रीय सरकार स्थापना का अवसर मिलेगा। इसलिये मै चाहता हूँ कांग्रेस कार्य-कारिणी स्वतन्त्र भारत के मन्त्रिमण्डल की छाया की भांति कार्य करे। आयर्लैंड और मिस्र में यही हुआ। कांग्रेस कार्य-कारिणी के सदस्यों को दैनिक कार्य करते हुए उन समस्याओं का अध्ययन करना चाहिये, जिनका उन्हें भविष्य में सामना करना पड़ेगा।

कांग्रेस मन्त्रिमण्डलों के व्यवस्थित कार्य सम्पादन से बढ़-कर सवाल है कि किस प्रकार संघ योजना के श्रीगणेश का विरोध किया जाय! संघ योजना के सम्बन्ध में कांग्रेस का दृष्टिकोण फिर वही १९१८ के प्रस्ताव में स्पष्ट किया गया है। जो विषय निर्वाचिनी समिति के विचार के बाद कांग्रेस के सामने पेश किया जायगा। संघ योजना के लादे जाने का हमें हर तरह से विरोध और प्रतिरोध करना है।

निकट भविष्य में सुचारु रूप से संग्राम चलाने के लिये यह जरूरी है कि हम अपना घर ठीक करें। पिछले वर्षों में देश में इस कदर जागृति हुई है कि संगठन सम्बन्धी नयी समस्याएँ उत्पन्न हो गयी हैं। पचास हजार जनता की सभाएँ मामूली बात हो गयी है। कभी-कभी ऐसी सभायें और प्रदर्शन नियंत्रण न करने में हमारी मैशीनरी पर्याप्त नहीं होती। इन प्रदर्शनों के अलावा जन बल और जन उत्साह को गठित कर एक दिशा में

ले जाने की समस्या भी है। हमें अब इन सब की व्यवस्था करना चाहिये। शिक्षित अफसरों द्वारा नियुक्त अनुशासित स्वयं-सेवक दल बहुत आवश्यक है। राजनैतिक कार्य कर्ताओं को किताबी और शारीरिक शिक्षा दी जानी चाहिये ताकि वे भविष्य में योग्यतर नेता बन सकें। इस तरह की ट्रेनिङ्ग ब्रिटेन में ग्रीष्म कालीन स्कूलों द्वारा दी जाती है। एक तन्त्रवादी राजों में यह उनकी अपनी विशेषता के साथ दी जाती है। हमारे राष्ट्रीय संग्राम में जिन कार्य कर्ताओं ने गौरवपूर्ण पार्ट अदा किया है उनके प्रति यथा योग्य सम्मान प्रकट करते हुए मैं अवश्य कहूँगा कि हमारी पार्टी में और अधिक कुशल काय-कर्ताओं की आवश्यकता है। यह कमी उदीयमान युवकों को कांग्रेस में भर्ती कर और जो है उन्हें पर्याप्त शिक्षा-दीक्षा दे कर मिटायी जा सकती है। हर शख्स ने देखा होगा कि इस समस्या को युरोपियन देश किस तरह सुलझा रहे हैं। हमारे आदर्श और तरीके उनसे भिन्न है फिर भी हमारे कार्य-कर्ताओं को पूरी शिक्षा दी जानी चाहिये। नाजियों के लेबर सर्विस दल का अध्ययन कर अपने देश की आवश्यकतानुसार उसे अपने सांचे में ढाल कर, वैसी संस्था चलायी जाय तो भारत के लिये उपयोगी हो सकती है।

हमारी पार्टी में अनुशासन कायम रखने के सम्बन्ध में और उस समस्या पर विचार करना चाहिये। जिससे दिक्कतें और परेशानियाँ उत्पन्न होती हैं। ट्रेड युनियन कांग्रेस और किसान सभा और उनके साथ कांग्रेस के सम्बन्ध पर हमें विचार करना चाहिये। इस सम्बन्ध में दो मत है, एक कांग्रेस के बाहर के

संगठनों की निन्दा करते हैं, और दूसरे उनका समर्थन करते हैं ! मेरी राय है कि हम ऐसे संगठनों को उपेक्षा या निन्दा करके उन्हें उठा नहीं सकते। वे हैं और उनका रहना, उनकी आवश्यकता का सबूत है, अन्य देशों में भी ऐसे संगठन पाये जाते हैं। सवाल सिर्फ यह है कि कांग्रेस उनके साथ किस तरह का व्यहार करे। निश्चय ही ये संगठन राष्ट्रीय कांग्रेस को चुनौती देने वाले नहीं होने चाहिये। उन्हें कांग्रेस के आदर्शों से अनुप्राशित होना चाहिये और उन्हें कांग्रेस के साथ सहयोग कर काम करना चाहिये, इसलिये कांग्रेस कार्यकर्ताओं को ट्रेड युनियन के कार्य में काफी संख्या में भाग लेना चाहिये। मेरा विचार है कि ट्रेड युनियन सिर्फ आर्थिक मामलों तक सीमित रहें तो कांग्रेस और अन्य संगठनों में सहयोग हो सकता है। इन सङ्गठनों को देश के राजनैतिक उत्थान के लिये कांग्रेस को सबका रङ्गमञ्च मानना चाहिये।

ऐसा होने से हमारे सामने श्रमिक और किसानों के सङ्गठनों का कांग्रेस के साथ सम्बन्धित होने का सवाल आ जाता है। मेरी व्यक्तिगत राय है कि एक दिन आयेगा जब हमें ऐसे सङ्गठनों का कांग्रेस से सम्बन्ध जोड़ना स्वीकार करना होगा। इसके ढङ्ग और सीमा के सम्बन्ध में मतभेद हो सकता है। रूस में सोवियट श्रमिकों, किसानों और सैनिकों के संयुक्त मोर्चे में अक्टूबर की शान्ति में प्रधान भाग लिया। किन्तु ब्रिटेन में ब्रिटिश ट्रेड युनियन कांग्रेस का दी नेशनल एक्जीक्युटिव आफ नेशनल पार्टी पर साधारण प्रभाव है। भारत में हमें साव-

धानी से सोचना चाहिये कि ट्रेड युनियन और किसान सभायें कांग्रेस पर क्या प्रभाव डालेंगी। सह सम्बन्ध स्वीकार करने पर यह न भूलना चाहिये कि यह सम्भव है कि ट्रेड युनियन का रुख क्रान्तिकारी न हो, अगर उनकी आर्थिक शिकायतें समन्वित न हों। इसके सिवा भी कांग्रेस और अन्य साम्राज्य विरोधी सङ्गठनों में घनिष्ठ सहयोग होना चाहिये।

कांग्रेस के अन्तर्गत दल जैसे—कांग्रेस समाजवादी दल बनाने के सम्बन्ध में काफी वाद विवाद हुआ है, मैं इसका सदस्य नहीं हूँ लेकिन मैं प्रारम्भ से ही इसके सिद्धान्तों और नीति से सहमत हूँ। पहले तो वामपक्षियों के लिये अपने को गठित करने के लिये एक दल बनाना वांछनीय है दूसरे वामपक्ष का अलग अस्तित्व तभी सार्थक है जब वह समाजवादी हो। बहुत से मित्रों को आपत्ति है कि ऐसा 'ब्लाक' पार्टी कहा जाय, लेकिन मेरे विचार से यह कोई बात नहीं कि आप ऐसे ब्लाक को ग्रुप, लीग या पार्टी कहें। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस विधान के अन्तर्गत वामपक्षियों के लिये यह सम्भव है कि वे सोशलिस्ट कार्यक्रम अपनावें। लेकिन कांग्रेस समाजवादी पार्टी या इसी तरह की अन्य पार्टी का रोल वामपक्षीय ग्रह का होना चाहिये। फिलहाल हमारे सामने समाजवाद की समस्या नहीं है, लेकिन समाजवादी प्रचार की जरूरत है ताकि जनता तैय्यार हो जाय और जब राजनैतिक स्वाधीनता प्राप्त हो जाय तो समाजवादी कार्य हो सके। यह प्रचार कांग्रेस समाजवादी पार्टी द्वारा ही हो सकता है जो समाजवाद में विश्वास करती है।

मैं एक प्रश्न की ओर विशेष ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ वह है अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध स्थापित करने के लिये अपनी वैदेशिक नीति। मैं इस कार्य को बहुत महत्वपूर्ण समझता हूँ, क्योंकि मेरा विश्वास है कि भावी अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति हमारे आन्दोलन के पक्ष में होगी। लेकिन हमें संसार की वास्तविक स्थिति की ठीक जानकारी होनी चाहिये। ताकि हम उसका लाभ उठा सकें उदाहरण के तौर पर मिस्र हमारे सामने है। मिस्र ने बिना एक गोली छोड़े हुए ग्रेट ब्रिटेन के साथ सन्धि कर ली, वह सिर्फ इसलिये कि मिस्र जानता था कि भूमध्य सागर में इटली और ब्रिटेन की तनातनी से कैसे फायदा उठाया जाय!

अपनी वैदेशिक नीति के सम्बन्ध में मैं पहला सुझाव यह पेश करना चाहता हूँ कि हमें किसी देश की आन्तरिक स्थिति और उसके राजकीय रूप से प्रभावित नहीं होना चाहिये। हम हर देश में ऐसे स्त्री-पुरुष पावेंगे जिनकी सहानुभूति भारत की स्वाधीनता के प्रति है, फिर उनका अपना राजनैतिक दृष्टिकोण चाहे जैसा क्यों न हो। इस सम्बन्ध में हमें रूस से शिक्षा ग्रहण करना चाहिये। गोकि सोवियट रूस में कम्युनिस्ट राज है, लेकिन वहाँ के राजनीतिज्ञों ने गैर साम्यवादी राष्ट्रों से सम्बन्ध स्थापित करने में हिचकिचाहट नहीं की और कहीं से भी आनेवाली सहानुभूति और सहायता अस्वीकार नहीं की। इस-लिये हमारा लक्ष्य होना चाहिये हर देश में भारत के लक्ष्य के प्रति सहानुभूति प्रदर्शित करने वालों की सहानुभूति ग्रहण

करना। हमें समाचार पत्रों, फिल्मों और कला प्रदर्शनियों द्वारा अपना प्रचार विदेशों में करना चाहिये। अपनी कला प्रदर्शनियों द्वारा चीनी यूरोप में काफी प्रसिद्ध हो गये हैं। व्यक्तिगत सम्बन्ध स्थापित करना भी आवश्यक है, इसके बिना अन्य देशों में भारत को जनप्रिय नहीं बनाया जा सकता। विदेश स्थित भारतीय छात्र भी इस ओर कार्य कर सकते हैं बशर्ते कि हम उनकी आवश्यकताओं की देख-भाल करें। कांग्रेस और भारतीय छात्रों में घनिष्ट सम्पर्क होना चाहिये। अगर हम भारत में बने सांस्कृतिक और शैक्षिक फिल्म बाहर भेज सकें तो भारत काफी जनप्रिय हो जायगा। विदेश स्थित छात्रों और प्रवासियों के लिये ये फिल्म बहुत उपयोगी साबित होंगे।

मैं प्रचार शब्द पसन्द नहीं करता, लेकिन हमें भारत और उसकी संस्कृति से विश्व को परिचित कराना चाहिये, मैं जानता हूँ युरोप और अमेरिका में हर जगह इस प्रयत्न का स्वागत होगा। हमें ग्रेट ब्रिटेन की भी उपेक्षा नहीं करना चाहिये। वहाँ भी हमारे लक्ष्य के प्रति सहानुभूति रखने वाले हैं नयी पीढ़ी के युवकों और विद्यार्थियों में भारत के प्रति सहानुभूति बढ़ रही है। इस कार्य को ठीक से करने के लिये कांग्रेस को अपने विश्वासी एजेण्ट युरोप, एशिया, अमेरिका, अफ्रीका, में रखना चाहिये। अभी तक हमने मध्य और दक्षिण अमेरिका की उपेक्षा की है, जहाँ भारत के प्रति काफी दिलचस्पी है। भारत को हर अन्तर्राष्ट्रीय कांग्रेस या कान्फ्रेंस में भाग लेना चाहिये। अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध स्थापित करने का मतलब ब्रिटेन के खिलाफ

षड़यन्त्र करना नहीं है। भारत के सम्बन्ध में संसार में प्रचार किया जाता है कि भारत असंस्कृत देश है अतएव भारत को सभ्य बनाने के लिये अँग्रेजों की जरूरत है। इसके जवाब में हमें संसार को बतलाना है कि हम क्या हैं और हमारी संस्कृति क्या है। अगर हम ऐसा कर सके तो भारत के पक्ष में संसार की सहानुभूति हो जायगी, और भारत के मामले में संसार की राय अबाध्य हो जायगी।

एशिया और अफ्रीका खासकर जञ्जीबार, केनिया, साउथ अफ्रीका, मलाया, सिलोन में प्रवासी भारतीयों को जिन समस्याओं, दिक्कतों और कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है, कांग्रेस ने उनमें पूरी दिलचस्पी ली है और आगे भी लेती रहेगी। हम उनके लिये कुछ अधिक नहीं कर सके हैं। इसका कारण है कि हम अपने देश में अभी तक गुलाम हैं। स्वाधीन भारत प्रवासी भारतीयों के स्वार्थों की देखभाल कर सकेगा।

हमें अपने पड़ोसी देशों से घनिष्ट सांस्कृतिक सम्बन्ध स्थापित करना चाहिये। परसिया अफगानिस्तान, नैपाल, चीन, बर्मा, श्याम, मलाया, इस्टइण्डीज, सिलोन को भारत अधिक जाने और हम उनके सम्बन्ध में अधिक जानें यह आवश्यक है। बर्मा और सिलोन के साथ हमारा पुराना सांस्कृतिक सम्बन्ध है।

हमारे नजर बन्द और राजनैतिक बन्दियों की मुक्ति का सवाल हाल की भूख हड़तालों के कारण सामने आ गया है और जनता का ध्यान भी इधर आकर्षित हो गया है। उनकी

मुक्ति के लिये सब कुछ किया जाना चाहिये। मुझे आशा है, कांग्रेस मन्त्रिमण्डल जिन प्रान्तों में है, वहाँ राजनैतिक बन्दी या नजरबन्द नहीं रहेंगे। जो जेल से छूटकर आते हैं, उनका स्वास्थ भी भङ्ग हो जाता है। वे रोगों के शिकार हो जाते हैं। जिन्होंने देश की सेवा में अपना सब कुछ अर्पण कर दिया। उनके प्रति हमारा कुछ कर्तव्य नहीं है! हमें उनके प्रति अपना अभिवादन भेजना चाहिये और यथा साध्य उनकी सेवा करनी चाहिये।

आज हमारे सामने गम्भीर समस्या है, कांग्रेस में दक्षिण और वामपंथी हैं। बाहर ब्रिटिश साम्राज्यवाद को चुनौती है, जिसका हमें सामना करना है। इस सङ्कटकाल में हमें क्या करना चाहिये। क्या यह कहने की जरूरत है कि हमें अपने रास्ते के सब तूफानों का डटकर सामाना करना चाहिये और शासकों के चक्कर में नहीं पड़ेंगे। कांग्रेस इस समय जिन आन्दोलन का महान अस्थ है, इसका दक्षिण और वामपक्ष भले ही हों, लेकिन साम्राज्य विरोधी सब सङ्गठनों के लिये कांग्रेस का मञ्च ही, एक मात्र मञ्च है। इसलिये हमें सारे देश को कांग्रेस के झण्डे के नीचे लाना है। मैं वामपक्षियों से अपील करता हूँ कि वे अपनी पूरी ताकत कांग्रेस को प्रजातन्त्रीय बनाने और साम्राज्यवाद विरोधी आधार पर इसका पुनर्गठन करने में लगायें। ब्रिटिश कम्युनिष्ट पार्टी के नेताओं के रुख से मेरा उत्साह बहुत बढ़ा है जिनकी भारत सम्बन्धी नीति भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस से मेल खाती है।

मैं आशा करता हूँ और भगवान से प्रार्थना करता हूँ कि वह

महात्माजी को दीर्घ जीवी करें क्योंकि भारत उनके बिना खाश कर इस मौके पर नहीं रह सकता। हमें उनकी जरूरत है ताकि हमारा संग्राम घृणा और कटुता से रहित हो। हमें भारतीय स्वाधीनता के लिये उनकी जरूरत है। हमें मानवता के कल्याण के लिये उनकी जरूरत है। हमारा संग्राम सिर्फ ब्रिटिश साम्राज्य-वाद के खिलाफ नहीं है, बल्कि विश्व भर के सम्राज्यवाद के खिलाफ है, जिसका सबसे बड़ा प्रतीक ब्रिटिश साम्राज्यवाद है। इसलिये हम भारत के हित के लिये ही नहीं बल्कि मानव जाति के हित के लिये लड़ रहे हैं। भारत की स्वाधीनता का अर्थ है मानवता की रक्षा।

बन्देमातरम

नोट—हरिपूरा कांग्रेस के सभापति की हैसियत से १९ फरवरी १९३८ को दिया गया भाषण।

छात्र और उनका आदर्श

—::०::—

[नेताजी ने यू० पी० के छात्रों को चन्द चुने हुए बहुमूल्य शब्दों में जो सन्देश भेजा था, वह समस्त भारत के छात्रों का पथ प्रदर्शन करता है।]

कई कारणों से मैं भारत के छात्र आन्दोलनों के निकट सम्पर्क में रहा हूँ। वर्षों पहले छात्र की हैसियत से मैंने जो अनुभव प्राप्त किये थे, उन्होंने मुझे विश्वास दिला दिया था कि अगर छात्र व्यक्तिगत तौर से सम्मानित व्यक्ति की तरह रहना चाहते हैं और इस महान देश के नागरिक की हैसियत से अपना जीवन व्यतीत करना चाहते हैं तो उन्हें अपना एक सङ्गठन बनाना चाहिये। जब मैं शाब्दिक अर्थ में छात्र नहीं रहा, मैंने मन-ही-मन संकल्प किया कि अगर जरूरत पड़ी तो मैं देश की भावी पीढ़ी को सहायता दूँगा। यह सिर्फ सच ही नहीं है कि आज के छात्र कल के नेता हैं या वे देश की आकांक्षा और आशा के मूर्तिमान प्रतीक हैं। छात्र देश के आदर्शात्मक भाग का प्रतिनिधित्व करते हैं, इसी आदर्शवाद के कारण समस्त विश्व के छात्र अपने को एक महान् विश्व बन्धुत्व के सदस्य समझते हैं। हमें इस भावना को छात्रों में बढ़ाना चाहिये, ताकि उनके द्वारा भारतीय जनता एक राष्ट्र के रूप में सदा के लिये गठित हो जाय।

स्वतन्त्र देशों के छात्रों को स्वतन्त्र स्त्री-पुरुषों के अधिकार रहते हैं, किन्तु हमारे देश में यह बात नहीं है। हमारे छात्र उन खामियों से ग्रसित हैं जिन्हें गुलाम जाति के लोग रोक नहीं सकते। उनके अभिभावक उन्हें नाबालिग समझते हैं और बाहर राज भी उन्हें नाबालिग समझता है। वे राजनैतिक संदिग्ध व्यक्ति समझे जाते हैं। कांग्रेस मन्त्रिमण्डलों की स्थापना से परिस्थति सुधरी है। इन परिस्थियों में छात्रों को अपने पैरों पर खड़ा हो, खुद अपनी सहायता करना चाहिये। उन्हें इस बात पर जोर देना चाहिये कि उनके साथ बालिग स्त्री-पुरुषों का-सा व्यवहार किया जाय, और उन हकों को माँगना चाहिये, जो स्वाधीन देश के स्वतन्त्र सैनिकों को प्राप्त हैं।

सरकारी और शिक्षा अधिकारियों से छात्रों का अक्सर संघर्ष हो जाता है। शिक्षा अधिकारियों से संघर्ष साधारणतया तब होता है जब वे उनके छात्र के अधिकारों को अस्वीकार करते हैं और सरकारी अधिकारियों के साथ तब जब उनके नागरिक अधिकारों को नहीं माना जाता। हर हालत में छात्र तभी सफल हो सकते हैं जब वे संगठित हों। इसलिये सङ्गठन प्रथम और सर्वोपरि है। छात्रों के अधिकारों को मनवा लेना ही काफी नहीं है। छात्र संगठन को छात्रों की शारीरिक बौद्धिक, नैतिक शिक्षा अपना लक्ष्य जानना चाहिये ताकि व्यक्तिगत और सामूहिक रूप से वे उत्तम व्यक्ति और श्रेष्ठ नागरिक हों।

मेरा निश्चित मत है कि छात्रों का मञ्च विस्तृत आधार पर

होना चाहिये और यह विभिन्न मत पोषण करने वाले सभी छात्रों के लिये खुला रहना चाहिये। यह बहुत बुरा होगा कि किसी खास दल या मत पोषक औरों के बाद खुद सब पदों पर आसीन हो जाय। यदि ऐसा हुआ तो छात्र आन्दोलन छिन्न-भिन्न हो जायगा और छात्र कांफ्रेंस बन जायँगी। आपको स्वाधीनता, विश्व बन्धुत्व, समानता, उन्नति के आदर्शों पर लक्ष्य रखना चाहिये और हमेशा याद रखना चाहिये। स्वाधीनता माने राजनैतिक सामाजिक आर्थिक हर तरह की उन्नति है।

नोट—यू० पी० छात्र कांफ्रेंस को दिया गया सन्देश। २९ अक्टूबर १९३८।

युवा आन्दोलन क्या है ?

—::०::—

[भारत के युवा आन्दोलन का महत्व उतना ही जितना कि मानव-जीवन का, क्योंकि युवा आन्दोलन जीवन के हर भाग की पूर्ण स्वाधीनता चाहता है ताकि जीवन का हर भाग पूर्ण विकसित और भरपूर हो।]

बन्धुओं ! इस देश में कुछ लोग हैं और उनमें अनेक सार्वजनिक जीवन में प्रमुख हैं जो युवक आन्दोलन को पसन्द नहीं करते, या कहते हैं कि वे युवा आन्दोलन का महत्व और आवश्यकता नहीं समझते। कुछ लोग हैं जो युवा आन्दोलन का भीतरी मतलब नहीं समझते। फिर भी इस आन्दोलन में शामिल हो गये हैं संभवतः इस भावना से कि ऐसा कोई आन्दोलन नहीं बढ़ने देना चाहिये जिसमें वे शामिल नहीं हैं।

भारत के वर्तमान जागरण के ऊषाकाल से ही एक के बाद एक हलचलें और आन्दोलन उठे। इन आन्दोलनों के बावजूद युवा आन्दोलन का उठना उसकी आवश्यकता का प्रमाण है। इसमें कोई शक नहीं कि व्यक्ति और देश के हृदय में एक आकांक्षा है ? जिसकी पूर्ति युवक आन्दोलन को करना है। यह आकांक्षा क्या है ? यह स्वाधीनता और आत्म-पूर्ति है।

देश को इस समय ऐसे आन्दोलन की जरूरत है जो व्यक्ति और देश की उन्नति करे और सब तरह के बंधनों से मुक्त कर

दे। आध्यात्मिक व्यक्ति और आत्म-पूर्ति के सब अधिकार प्राप्त करे। कुछ लोग हैं जो युवा-आन्दोलन को कांग्रेस का पृष्ठ भाग बनाना चाहते हैं, वे युवा आन्दोलन का महत्व और उद्देश्य बहुत कम समझते हैं।

राष्ट्रीय कांग्रेस राजनैतिक संस्था है अतएव उसका क्षेत्र सीमित है। अभी तक इसका उद्देश्य पूर्ण स्वाधीनता घोषित नहीं किया गया। इसलिये यह आश्चर्य की बात नहीं है कि जो स्त्री-पुरुष जिस जीवन को पूर्ण देखते हैं और जीवन के हर पहलू में स्वाधीनता चाहते हैं वे राष्ट्रीय कांग्रेस जैसी राजनैतिक संस्था से परितृप्त न हों और ऐसा आन्दोलन चलाना चाहें जो मानव हृदय की हर आकांक्षा को और जीवन की हर आवश्यकता को पूर्ण कर सके। इससे यह झलकता है कि युवा-आन्दोलन सिर्फ राजनैतिक नहीं है, यह अराजनैतिक भी नहीं है। अपने क्षेत्र में यह जीवन की ही तरह विस्तृत है, यह निश्चय है कि युवा आन्दोलन की बढ़ती हमारे राजनैतिक विकास को पुष्ट करेगा।

युवा आन्दोलन हमारे असन्तोष का प्रतीक है। यह सदियों के पुराने बन्धन अत्याचार और दमन के प्रति विद्रोह है। यह सब तरह की बेड़ियाँ तोड़ कर अपने और मानवता के लिये नया और उत्तम संसार गढ़ना चाहता है और मानव जाति की रचनात्मक कामों के लिये पूरा क्षेत्र देना चाहता है। यह वास्तविक स्वतंत्र आन्दोलन है जिसका स्रोत मानव सभाव में निहित है।

यह आन्दोलन इसलिये अस्तित्व में आया कि यह समय की चिल्लाती हुई आवश्यकता है और मानव आकांक्षा द्वारा प्रसूत

है। अगर कोई आन्दोलन के भीतरी मर्म और उद्देश्य न समझे, तो वह सिर्फ आन्दोलन में शामिल होकर या युवा सम्मेलन के पद पर आसीन होकर कुछ नहीं कर सकता। जैसा कि मैंने कहा है सब युवा आन्दोलन वर्तमान अवस्था से असन्तुष्ट हैं और नयी व्यवस्था चाहते हैं। वे बन्धन से मुक्ति चाहते हैं और रूढ़ि और अधिकार के प्रति विद्रोह करते हैं। जहाँ रूढ़ि और अधिकार मानव आत्मा की आवाज के खिलाफ खड़े होते हैं। उनके आदर्श वाक्य हैं आत्म विश्वास और आत्म निर्भरता। वे अन्ध श्रद्धा और अन्धानुकरण नहीं मानते। ऐसी हालत में क्या आश्चर्य है कि हमारे कुछ बड़े युवा आन्दोलन को नापसन्द करें और पक्ष न लें।

युवा आन्दोलन का उद्देश्य जीवन में नव जीवन लाना है और नये आदर्श की प्रेरणा में साँस लेना है। यही आदर्श है, हम जो नया जीवन रखें उसका नया अर्थ और नया महत्व होगा। यह आदर्श पूर्ण सर्वमुखी स्वतंत्रता और पूर्ण आत्म-पूर्ति है। स्वतंत्रता और आत्म-पूर्ति का अविच्छेद सम्बन्ध है, बिना स्वतंत्रता के आत्म-पूर्ति नहीं हो सकती और स्वतंत्रता का मूल्य इसीलिये है कि वह आत्म-पूर्ति की ओर ले जाती है।"

युवा आन्दोलन अपने क्षेत्र में जीवन के साथ है, यानी युवा आंदोलन के उतने विभाग हैं जितने जीवन के। अगर हमें शरीर को नव-जीवन देना है तो कसरत, खेल-कूद आदि आवश्यक है। मानसिक संस्कार शिक्षा के लिये नया साहित्य, अच्छे और उत्तम प्रकार की शिक्षा और नैतिकता की जरूरत है, अगर हमें

समाज को नव-जीवन देना है तो पुराने विचार और तरीकों की जगह नये विचार आदर्श, और तरीके अपनाने होंगे। इसके सिवा हमें वर्तमान स्थिति के अनुसार नैतिकता का माप दण्ड बनाना होगा।

नये विचारों के प्रचार और नये कार्य के लिये यह स्वाभाविक हो जाता है कि वह पुराने विचार और तरीकों, स्थापित स्वार्थ, और वर्तमान सत्ता के विरुद्ध पड़े। लेकिन इससे हमें डरना नहीं चाहिये। भयानक विरोध रहते हुए भी हमें युवा आन्दोलन की प्रगति करनी है। ऐसे अवसर आयेंगे जब हम चारों ओर से घिर जायेंगे और ऐसा लगेगा मानों हम संसार से विलग हो गये। ऐसे संकट काल में हमें उन देशभक्त आयरिश के वाक्यों को याद करना चाहिये जिनका एक आदमी आयर्लैण्ड को बचा सकता है, जैसे कि एक आदमी ने दुनिया की रक्षा कर ली। युवा आन्दोलन के प्रचारक की हैसियत से जब आप जीवन के हर पहलू में स्वतन्त्रता का सिद्धान्त लागू कर देते हैं तभी आप सब तरफ दुश्मन खड़े कर लेते हैं और आपके प्रचार से जिनके स्वार्थों पर आघात पहुँचता है वे सब आपको दबाने के लिये एक साथ खड़े हो सकते हैं। यह सम्भव है कि शक्ति-शाली दुश्मन के साथ एक मोर्चे पर भिड़ा जा सके, लेकिन सब मोर्चों पर एक साथ शत्रुओं से लड़ना आसान नहीं है। इसलिये युवा आन्दोलन को छोटे-बड़े सभी मोर्चों पर शक्तिशाली दुश्मनों का मुकाबिला करने के लिये तैयार रहना चाहिये।

युवा आन्दोलन को एक और कठिनाई की सम्भावना पर विचार करना चाहिये और उससे हमें पहले ही से सावधान रहना चाहिये। राजनैतिक या श्रमिक आन्दोलन में आपको जिन समूह को अपने नियंत्रण में रखने के लिये उसे अपने हाथ में रखना होगा। उन अवसरों पर आपको उनसे घुल-मिल जाना होगा। लेकिन युवा आन्दोलन में आपको जनप्रियता से नमस्कार करना होगा। आपको जन-मत बनाना होगा और जन भावना का स्रोत बदलना होगा। अगर आप दोषों को दूर करने के लिये तरीके बतलाएँ तो यह गैर मुमकिन नहीं है कि लोग उन्हें न पसंद करें। ऐसे मौके पर साहस की आवश्यकता है। आपको अकेले ही खड़े रहना होगा और बुराइयों से युद्ध करते रहना होगा जब तक विजय न प्राप्त हो जाय। अगर आप राष्ट्रीय जीवन के आधारभूत सिद्धान्तों का फैसला करना चाहते हैं तो आप को अपने साथियों से मीलों आगे बढ़ना होगा। जन-मत ज्यादातर वर्तमान दुरवस्था से निकलकर भविष्य की कल्पना नहीं कर सकता। जो चाहता है कि हमेशा जनता के मत के प्रवाह के साथ तैरे वह जनप्रिय हो सकता है किंतु वह इतिहास में जीवित नहीं रह सकता। हमें अपने पूर्ण निस्वार्थ कार्य के लिये भी जन-लांछन और विरोध के लिये तैयार रहना चाहिये। हमें अपने घनिष्ट मित्र से भी आक्रमण की आशंका करना चाहिये।

लेकिन यह न भूलना चाहिये कि मानव स्वभाव तुलियाद में दैवी है। ना समझी निन्दा का काल चाहे जितना लम्बा हो, एक दिन उसका अन्त होना है। अगर हमारे सत्य विश्वासों के लिये

हमें अपना जीवन देना पड़े तो हम अपना जीवन देकर अमर हो जायँगे। इसलिये हमें हर अवस्था के लिये प्रस्तुत रहना चाहिये। काँटो के कारण ही गुलाब की शोभा दुगुनी है यही बात मानव जीवन के लिये है। बलिदान, यातना और सहिष्णुता के बिना जीवन का निरस नहीं हो जाता।

विस्तृत रूप से युवा आन्दोलन के पाँच रूप हैं, राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक, शारीरिक और सांस्कृतिक। आन्दोलन का उद्देश्य दो मुहा है (१) इन पाँचों तरह के बन्धन को छिन्न-भिन्न करना और इस उत्कर्ष के परिणाम स्वरूप' आत्म-पूर्ति और आत्माभिव्यक्ति को वेग देना। इसलिये यह आन्दोलन संहारात्मक और रचनात्मक दोनों है। बिना संहार के आप रचना नहीं कर सकते। इसी लिये हम प्रकृति में संहार और रचना एक साथ पाते हैं। अगर आप समझते हैं कि संहार बुरा है और रचना उत्तम है, और बिना संहार के रचना संभव है तो आप भूल करते हैं। इसी तरह आप हम यह समझें कि संहार ही शेष है तो भी हम भूल करते हैं। जीवन के किसी भी भाग में स्वतंत्रता की सृष्टि के अर्थ ही हैं संहार, कभी-कभी निर्मम संहार! असत्य, ढोंग बन्धन, असमानता के साथ कोई समझौता नहीं हो सकता। अगर हम इन जंजीरों को तोड़ना चाहते हैं तो हमें प्रहार पर प्रहार करना होगा, और हमें कभी भी पीछे फिर कर नहीं देखना चाहिये जब कि हमारा कर्त्तव्य है आगे बढ़ना।

अगर हमारे अंदर सचमुच जीवन है, अगर हम सिर्फ मिट्टी

के लोग नहीं हैं तो हमें संहार के साथ सृष्टि का काम चलाना ही होगा। भारत और अन्य देशों में जो आन्दोलन हम देखते हैं उनका रूप सुधार (परिवर्तन) मालूम पड़ता है। ये आन्दोलन हमारे जीवन की पुनर्रचना किये बिना उसे जरा घुमा लेते हैं। लेकिन हम सुधार नहीं चाहते हम क्रान्तिकारी पुनर्रचना चाहते हैं। हमारा सम्पूर्ण जीवन, व्यक्तिगत और सामूहिक पुनर्रचना चाहता है। इस नव-जीवन की पूर्ति के लिये हम स्वतंत्रता की नयी व्याख्या चाहते हैं। विभिन्न अवस्थाओं और विभिन्न देशों में स्वतन्त्रता के विभिन्न अर्थ लिये जाते थे लेकिन आज स्वतंत्रता का अर्थ है, जीवन के हर पहलू की चरम उन्नति। यही व्याख्या युवकों को भाती है। हम अब आधी चीज से सन्तुष्ट नहीं हो सकते। हम स्वतंत्रता की पूरी मात्रा चाहते हैं, हम जीवन के हर भाग में स्वतंत्रता चाहते हैं। हम स्वतंत्रता पसन्द करते हैं, इसीलिये हम जीवन में किसी तरह का बन्धन या असमानता बर्दाश्त नहीं कर सकते। राजनैतिक, आर्थिक सामाजिक हर क्षेत्र में स्वतंत्रता के सिद्धान्त का अधिपत्य होना चाहिये। हर मनुष्य-स्त्री और पुरुष बराबर पैदा हुए हैं हर एक को जीवन विकास के लिये समान सुविधाएँ मिलनी चाहिये। यह ऐसा सिद्धान्त है जिसका कहना तो आसान है पर व्यवहार कठिन है।

युवा आन्दोलन के विस्तार और बढ़ती के लिये कार्य-क्रम की विस्तृत रूप रेखा आपके सामने पेश कर मैं आपका अधिक समय नहीं लेना चाहता। मैंने सिद्धान्त, लक्ष्य और उद्देश्यों

का प्रतिपादन कर दिया। हमारा आदर्श बेहद महत्वाकांक्षी है, इतना महत्वाकांक्षी जितना कि हो सकता है। हम अपना सम्पूर्ण जीवन बदल कर अपने और मानव समाज के लिये नया उत्तम संसार बनाना चाहते हैं। इसकी पूर्ति के लिये हमारे अन्दर जो कुछ है उसे पूरी उँचाई तक उठाना होगा। स्वतन्त्रता का जादू स्पर्श ही हमारी शक्तियों को जागृत कर हमें दिन रात कार्य करने की शक्ति दे सकता है। हम अपने आप पहले कैसे इस प्रकार की स्वतन्त्रता की इच्छा जगावें और फिर किस प्रकार अपने देशवासियों में यह इच्छा जागृत करें, यही सबसे बड़ा सवाल है। अगर हम अपने हृदय के अन्तरतम प्रदेश से स्वतन्त्रता की आवाज बुलन्द करना चाहते हैं तो हमें गुलामी का बन्धन अनुभव करना चाहिये। जब गुलामी का बन्धन असह्य होने लगेगा तब हम अनुभव करेंगे कि स्वतन्त्रता के बिना जीवन बेकार है। जैसे-जैसे यह अनुभव बढ़ता रहेगा, एक समय आ जायगा जब हमारी सम्पूर्ण आत्मा स्वतन्त्रता के लिये व्याकुल हो उठेगी।

इसी समय हम स्वतन्त्रता के सन्देश वाहक बन जायेंगे। स्वतन्त्रता से मत्त स्त्री-पुरुष, दरवाजे-दरवाजे, गाँव-गाँव, शहर-शहर स्वतन्त्रता का सन्देश देते फिरेंगे। इस प्रकार के फल-स्वरूप जीवन के हर पहलू में नव-जीवन संचार होगा और संहार तथा रचना एक साथ प्रारम्भ होगी। स्वतन्त्रता और समानता की भावना से राजनीति, समाज, अर्थ की धमनियाँ फड़कने लगेंगी और तब झूठे माप दण्ड, पुराने तौर तरीके,

और सदियों पुराने बन्धन नष्ट-भ्रष्ट कर दिये जायेंगे। और नयी व्यवस्था का उदय होगा। अगर हम स्वतंत्रता समानता और विश्व बन्धुत्व के आधार पर नयी व्यवस्था की सृष्टि कर सकें तो हम सिर्फ राष्ट्रीय समस्या ही न सुलझा सकेंगे बल्कि संसार की समस्या सुलझा लेंगे।

भारत, समस्त संसार का संक्षिप्त स्वरूप है। सूक्ष्मरूप में भारत की समस्यायें, विश्व की समस्यायें हैं। अनगनित कष्ट यातना, बेशुमार बाहरी आक्रमणों के बावजूद आज 'भारत' जीवित है, क्योंकि भारत को विश्व में एक काम करना है। 'भारत' को अपने को बचाना है क्योंकि भारत की रक्षा द्वारा विश्व की रक्षा है। भारत को स्वतंत्रता प्राप्त करना है क्योंकि स्वतंत्रता प्राप्त करने पर भारत संसार की सभ्यता और संस्कृति में अपना दान देगा। संसार भारत के उपहार के लिये प्रतीक्षा कर रहा है, क्योंकि भारत के उपहार के बिना संसार दरिद्रतर रहेगा।

मित्रों! हमारा उत्तरदायित्व महान् है, क्योंकि हर समय, हर जगह, जवान ही स्वतंत्रता की मशाल लेकर चलते रहे हैं। हमें विदेश के युवकों के बराबर रहना है, बाहर उन्होंने जो सफलतायें प्राप्त की हैं, भारत के युवक भारत में निश्चय ही वे सफलतायें प्राप्त कर सकते हैं। हम इस समय महान् काल में रह रहे हैं, भारत का भविष्य युवकों के हाथ में है। मुझे जरा भी संदेह नहीं है कि भारत के युवक अपने महान् उत्तरदायित्व को अनुभव करेंगे। मुझे विश्वास है कि युवकों के त्याग, कष्ट

सहन और उद्योग से, भारत शीघ्र ही स्वतंत्र होगा। यहाँ के स्त्री-पुरुष स्वतंत्र होंगे और हर भारतीय की शिक्षा, दीक्षा, विकाश की समान सुविधाएँ प्राप्त होंगी। भारत स्वाधीन होगा। इसमें जरा भी शक नहीं है, सिर्फ सवाल यह है कि कब स्वाधीन होगा ? हम सब गुलाम पैदा हुए हैं लेकिन हमें सङ्कल्प करना चाहिये कि हम स्वाधीन होकर ही रहेंगे। अगर हम अपने जीवन में भारत को स्वाधीन देख सके तो हमें उसे स्वाधीन करने की चेष्टा में मरना चाहिये। स्वाधीनता का पथ, गोकि कंटीला पथ है किन्तु यही पथ अमरत्व पाने का है। इसी अनुपम अमर पथ पर अग्रसर होने के लिये मैं आपका आह्वान करता हूँ। भाइयों और बहनों, आओ। आगे बढ़ो !

वन्देमातरम्।

नोट—सी० पी० युवा सम्मेलन के सभापति के पद से नागपूर में २९ नवम्बर १९२९ को दिया हुआ भाषण।

छात्र और स्वाधीनता

—::o::—

मित्रों !

अगर मैं अपने भाषण में राजनैतिक प्रश्नों की चर्चा करूँ और उनके हल करने पर अपने विचार प्रगट करूँ तो इसके लिये मैं आपसे क्षमा नहीं माँगूँगा। मैं जानता हूँ कि हमारे देश में कुछ लोग ऐसे हैं, प्रमुख कार्य कर्ताओं में भी ऐसे हैं जो सोचते हैं, गुलाम जाति की कोई राजनीति नहीं होती और खासकर छात्रों से राजनीति का कोई लेन-देन नहीं है। लेकिन मेरी राय है कि गुलाम जाति का राजनीति से सर्वोपरि सम्बन्ध है। पराधीन देश में जिस किसी समस्या पर आप विचार करें अगर आप उसकी तह तक जायँगे तो वहाँ राजनैतिक समस्या मिलेगी। जीवन एक समष्टि है और जैसा कि देशबन्धु चित्तरजंन दास कहा करते थे आप राजनीति को अर्थ और शिक्षा से जुदा नहीं कर सकते। मानव जीवन को आप अलग-अलग कमरों में बन्द नहीं कर सकते। राष्ट्रीय जीवन की सब समस्याएँ एक दूसरे से सम्बन्धित हैं। राजनैतिक गुलामी में ही गुलाम जाति की तमाम समस्याएँ निहित हैं, फलतः छात्र इस सबसे महत्व पूर्ण समस्या देश के राजनैतिक उत्कर्ष से अपने को सम्बंधित रख सकते हैं। मैं नहीं समझ सकता राजनीति में भाग लेने पर इस तरह की खास

पाबन्दी क्यों लगायी जाय ? मेरी समझ में इस तरह की पाबन्दी बेमाने हैं। अगर गुलाम देश में सब समस्याओं की जड़ राजनैतिक समस्याएँ हैं तो सब तरह की राष्ट्रीय गति विधियों का रूप राजनैतिक होगा ही। किसी भी स्वाधीन देश में राजनीति में भाग लेने पर कोई प्रतिबंध नहीं है। बल्कि राजनीति में भाग लेने के लिये छात्रों को उत्साहित किया जाता है। यह उत्साह जान बूझ कर दिया जाता है क्योंकि छात्र समुदाय में ही राजनीति विचारक और राजनीतिज्ञ पैदा होते हैं। अगर भारत में छात्रगण राजनीति में सक्रिय भाग न लेंगे तो फिर हम राजनैतिक कार्यकर्ता और रंगरूट कहाँ से पावेंगे। साथ ही यह भी मान लेना चाहिये कि चरित्र और मानवता के विकाश के लिये राजनीति में भाग लेना जरूरी है। क्योंकि बिना कष्ट के शिक्षा पूरी नहीं होती और न वह चरित्र का निर्माण कर सकती है। इसलिये हर तरह की राजनैतिक, आर्थिक, कला सम्बन्धी हलचलों में भाग लेना आवश्यक है ताकि चरित्र का समुचित गठन और विकाश हो। किताबी कीड़े स्वर्णपदक पाने वाले और आफिस के क्लर्क पैदा करने के लिये ही विश्वविद्यालयों को चेष्टा न करनी चाहिये, बल्कि ऐसे चरित्रवान व्यक्ति बनाने की चेष्टा करनी चाहिये जो अपने जीवन के विभिन्न भागों में देश की महत्ता अर्जितकर अपनी महानता प्राप्त करें।

आजकल छात्र आन्दोलन गैर जिम्मेदार छात्र और छात्राओं का आन्दोलन नहीं है। बल्कि यह आन्दोलन जिम्मेदार छात्र छात्राओं का है जो सिर्फ एक आदर्श से अनुप्राणित हैं, वह

आदर्श है, अपने चरित्र और व्यक्तित्व का विकाश करना और उसके द्वारा देश की सरकार की फायदेमन्द सेवा करना। छात्र आन्दोलन को छात्रों की समस्याओं पर सर्वप्रथम ध्यान देना चाहिये और उन्हें जीवन संग्राम करने के लिये अच्छी तरह तैयार करना चाहिये, इसके लिये उन्हें जीवन संग्राम में प्रवेश करने के पहले ही संग्राम की समस्याओं और गतविधियों से परिचित होना चाहिये।

मैं एक सुझाव की ओर आपका ध्यान खींचना चाहता हूँ। मै चाहता हूँ, छात्र समुदाय के लाभ के लिये छात्र संघ अपने क्षेत्र में को-आपरेटिव स्वदेशी स्टोर्स खोलें। अगर ये स्टोर्स छात्रों द्वारा अच्छी तरह चलाये जा सकें तो इसके द्वारा दो तरह का लाभ होगा, एक तो सस्ते दामों पर छात्रों को स्वादेशी चीजें प्राप्त होंगी और गृह उद्योग को प्रश्रय मिलेगा। दूसरे छात्रों को इस तरह के स्टोर्स चलाने का व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त होगा और वे नये छात्र समुदाय की भलाई में लग सकेंगे। छात्र समुदाय की भलाई के लिये शरीर संस्कार, सभायें, अखाड़े, अध्ययन केन्द्र, वाद-विवाद सभायें, संगीत शालायें, पुस्तकालय, वाचनालय, समाज सेवा परिषदें आदि खोली जानी चाहिये।

छात्र आन्दोलन का दूसरा महत्वपूर्ण कार्य होना चाहिये भावी नागरिकों की शिक्षा। यह शिक्षा व्यावहारिक और बौद्धिक होनी चाहिये। हमारे छात्रों के सामने ऐसे आदर्श समाज का खाका खींचना चाहिये जिसमें अपने भावी जीवन में पूर्ण करने की चेष्टा करें। हो सकता है कि ऐसे कार्यों के लिये अधिका-

रियों के साथ संघर्ष होने की स्थिति उत्पन्न हो जाय किन्तु वास्तविक संघर्ष का होना-न-होना शिक्षाधिकारियों पर बहुत कुछ निर्भर करता है। लेकिन दुर्भाग्य वश संघर्ष हो ही जाय तो छात्रों को पूर्ण निर्भय और आत्म विश्वासी होना चाहिये। अगर हम आदर्शों में क्रान्ति लाना चाहते हैं तो हमें ऐसा आदर्श सामने रखना चाहिये जो हमारे सम्पूर्ण जीवन को चमका सके। यह आदर्श स्वाधीनता है। लेकिन स्वाधीनता के विभिन्न अर्थ लगाये जाते हैं, हमारे देश में भी स्वाधीनता के अर्थ का क्रम विकाश हुआ है। स्वाधीनता से मेरा मतलब सब तरह की स्वाधीनता है। अमीर गरीब सबके लिये स्वाधीनता, सब लोगों और सब जातियों के लिये स्वाधीनता। इस स्वाधीनता के माने सिर्फ राजनैतिक बंधन से छुटकारा नहीं है बल्कि धनसम्पत्ति का समान बटवारा, जातिभेद का नाश, सामाजिक भेदभाव का सर्वनाश, समुदायवाद और धार्मिक असहिष्णुता का मूलोच्छेदन। यह आदर्श, कुन्द दिमागों को भले ही न रुचे, मगर यह आदर्श ही आत्मा को सन्तोष दे सकता है।

स्वाधीनता के विभिन्न प्रकार हैं जैसे जीवन के विभिन्न प्रकार हैं। कुछ लोग जब स्वाधीनता का ज़िक्र करते हैं तो एक खास तरह की स्वाधीनता का जिक्र करते हैं। स्वाधीनता के उस संकुचित दायरे से निकलने में हमें कई पीढ़ियाँ लग गयी और कई पीढ़ियों के बाद अब हम स्वाधीनता की पूर्ण व्याख्या समझ सके हैं। अगर दरअसल हम स्वाधीनता चाहते हैं और आत्म स्वार्थ नहीं चाहते तो हमें मानना चाहिये कि स्वाधीनता के माने हैं, हर

तरह के बन्धनों से स्वाधीनता, यह स्वाधीनता व्यक्तिगत नहीं बल्कि समस्त समाज की स्वाधीनता है। मेरे खयाल से यही आज का सच्चा आदर्श है और जिस कल्पना ने मेरे मानस पटल को आच्छादित कर लिया है, वह पूर्ण मुक्त और उन्नत भारत है।

स्वाधीनता प्राप्त करने का एक मात्र तरीका यह है कि हम अपने को स्वाधीन समझें और स्वाधीन मानव की तरह सोचें विचारें। हमें अपने भीतर पूर्ण क्रान्तिमय होना चाहिये और हमें स्वाधीनता के मद से मत्त होना चाहिये। स्वाधीनता के मद से मत्त स्त्री-पुरुष ही मानवता को स्वाधीन कर सकते हैं। जब स्वाधीन होने की चाह हमारे हृदयों में जग जाएगी तब हम कार्य समुद्र में घुस जायँगे। तब हमें खतरे की संभावना किनारे पर बैठाये न रख सकेगी और सच्चाई तथा उत्कर्ष का आकर्षण हमें अपने लक्ष्य तक ले जायगा।

भारत को स्वाधीन होना ही है। भारत की स्वाधीनता उतनी ही निश्चित है जितना रात के बाद दिन। संसार की कोई ताकत भारत को बंधन में नहीं रख सकती। लेकिन हमें ऐसे भारत का स्वप्न देखना चाहिये जिसके लिये हम सब कुछ दे सकें। अपना जीवन भी और जो अपने जीवन का सब से प्यारा है उसे भी अपने देश के लिये दे सकें।

मैं अपने देश वासियों से कहना चाहता हूँ कि भारत को संसार को अपना सन्देश देना है इसीलिये भारत अभी तक जीवित है। जीवन के हर भाग में संसार की सभ्यता और संस्कृति में भारत को अपना दान देना है अपनी इस पतित और गुलाम

अवस्था में भी भारत संसार को कम नहीं दे रहा है और तब आप जरा सोचिये कि स्वाधीन होने पर संसार के लिये भारत का दान कितना महान् होगा !

देश के कुछ लोग कुछ प्रतिष्ठित लोग भी स्वाधीनता के सिद्धांत को जीवन के हर भाग में इस्तेमाल करने के पक्ष में नहीं हैं। हमें अफसोस है कि हम उन्हें सन्तुष्ट नहीं कर सकते, लेकिन किसी भी हालत में सत्य, न्याय, समानता पर आधारित आदर्श को हम छोड़ नहीं सकते। हम अपने लक्ष्य पर अग्रसर होते जायँगे भले ही आप हमारे साथ न चलें, लेकिन आपको विश्वास होना चाहिये कि चाहे कुछ लोग हमारा साथ छोड़ दें लेकिन हजारों लाखों हमारा साथ देंगे। हमें बन्धन, अन्याय और असमानता के साथ हरगिज-हरगिज समझौता नहीं करना चाहिये।

मित्रों ! भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस में शामिल होने के लिये आप में से बहुतों को तैयार होना चाहिये। कांग्रेस ही देश की सर्वोपरि राजनैतिक संस्था है और हमारी समस्त आशाओं का आधार है। लेकिन कांग्रेस अपनी ताकत, प्रभाव आदि के लिये मजदूर आन्दोलन, किसान आन्दोलन, छात्र आन्दोलन आदि पर निर्भर करती है। अगर हम अपने देश के मजदूरों, किसानों, दलितों, जवानों, छात्रों और महिलाओं को ऊँचा उठा सकें तो हम कांग्रेस को इतनी ताकतवर बना सकेंगे कि वह देश को गुलामी के बन्धन से मुक्त कर सकेगी।

नोट—छात्र सम्मेलन, लाहौर, १९ अक्टूबर १९२९

समाज का पुनर्निर्माण

—::०::—

हम चाहते हैं, आत्म-जागृति ! जो आत्म-जागृति हमारे जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन ला दे। मामूली सुधार से काम नहीं चलेगा। समाज की पुनर्रचना के लिये मामूली सुधारों से कुछ न होगा। हमारे सम्पूर्ण जीवन का रूपान्तर आवश्यक है, सम्पूर्ण क्रान्ति की आवश्यकता है। क्रान्ति के नाम से झेंपिये मत। क्रान्ति की व्याख्या के सम्बन्ध में हमारा मतभेद हो सकता है, लेकिन मैंने अभी तक एक भी ऐसा शख्स नहीं देखा जो क्रान्ति में विश्वास नहीं करता। विकास और क्रान्ति में कोई पैदायशी फर्क नहीं है, क्योंकि क्रान्ति विकास है जो बहुत कम समय में हो जाय ! विकाश वह क्रान्ति है जो दीर्घकाल में हो। क्रान्ति और विकाश दोनों परिवर्तन और उन्नति चाहते हैं और प्रकृति में दोनों के लिये ही स्थान है। बल्कि सच तो यह है कि प्रकृति किसी एक को भी नहीं छोड़ सकती।

मैंने कहा है कि अच्छे और बुरे की हमारी बहुत सी धारणाओं को हमें बदलना होगा। मैंने यह भी कहा है कि हम अपने सम्पूर्ण जीवन का पूर्ण रूपान्तर चाहते हैं। अगर, हम चाहते हैं कि राष्ट्र की हैसियत से हम महान् हों तो यह करना ही होगा, अगर हम विश्व सभा के पाँच राष्ट्रों के मुकाबिले अपने उपयुक्त

स्थान पर बैठना चाहते हैं तो हमें इस रास्ते पर चलना ही होगा। जीवन का अर्थ, मूल्य और महत्व तभी है, जब जीवन किसी आदर्श के लिये हो। किसी भी देश को जीवित नहीं रहना चाहिये, दरअसल उसे जीवित रहने का हक नहीं है, अगर वह उन्नति नहीं चाहता हो और सिर्फ अपने मतलब के लिये ही महत्ता प्राप्त करता हो। उसे मानवता को महान् बनाने के लिये महान् बनना चाहिये, ताकि समस्त संसार सुखी और समृद्ध हो।

भारत में सब तरह के बौद्धिक नैतिक पार्थिव साधन स्रोत उपस्थित हैं जो भारतवासी को महान् बना सकते हैं। और भारत अभी तक जीवित है, क्योंकि उसे फिर एक बार महान् बनना है; क्योंकि उसे संसार को अपना सन्देश देना है। भारत का काम है, पहले अपनी रक्षा करना और फिर संसार की सभ्यता और संस्कृति में अपना दान देना। फिर पचासों प्रकार की दिक्कतों के रहते हुए भी आज भी भारत का दान मामूली नहीं है। जरा कल्पना कीजिये कि भारत को अगर अपनी योग्यता के अनुसार अपने जीवन का विकास करने का अवसर मिला तो वह संसार को कितना महान् दान दे सकेगा।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि हम आश्चर्यजनक कार्य कर सकते हैं, बशर्ते कि हम अविश्रान्त कार्य में लग जावें। मेरा यह भी विश्वास है कि हम एक बार पूरी तौर से जग जाँय तो हम आज के उन्नतिशील देश को पीछे छोड़ देंगे। हमें वह जादू की छड़ी चाहिये जिसकी करामात से हमारा जीवन चमक जाय। हमें आत्म-विस्तार और आत्माभिव्यक्ति के लिये स्वाधीनता

चाहिये, अगर आप स्वाधीनता चाहते हैं तो जो बन्धन आपको बांधे हुए हैं उनके खिलाफ आपको विद्रोह करना होगा। आप बन्धनों के विरुद्ध बगावत करते हैं और सफल बगावत करते हैं तो आप स्वाधीन होंगे और होंगे।

जिनकी नैतिक अनुभूति मर चुकी हैं, उनके सिवा हर शख्स कम या ज्यादा गुलामी के बंधन का अनुभव करता है और दासता की लज्जा से दुखित होता है। जब यह भावना दुरूह हो जाती है और गुलामी और बन्धन असह्य हो जाते हैं तब आदमी में गुलामी के जुए को उतार फेंकने की प्रबल इच्छा जाग्रत होती है। यह स्वाधीनता की इच्छा, स्वाधीन देशों के व्यक्तियों के संसर्ग तथा स्वाधीन देशों के अध्ययन तथा कल्पना द्वारा वास्तविक स्वाधीनता का स्वाद पाने पर और भी बढ़ जाती है। देश की मुक्ति के लिये हमारी तपस्या में हमें राष्ट्रीय असम्मान के प्रति अधिकाधिक भावापन्न होना चाहिये और जातिगत भेदभाव के प्रति तीव्र विरोध द्वारा स्वाधीनता की इच्छा तीव्रतर करना चाहिये। यह इच्छा इतिहास का अध्ययन कर, अपनी वर्तमान पतितावस्था का अनुशीलन कर, जीवनादर्श की स्थापना कर और गुलामी के कारण उत्पन्न अवस्थाओं का स्वाधीन देश की अवस्थाओं से तुलना कर बढ़ायी जा सकती है।

मेरी दृष्टि में दीक्षा का एक अर्थ है, स्वाधीनता के बदले में जीवन। इस प्रकार का पूर्ण आत्मनियोग एक दिन में संभव नहीं है। लेकिन जैसे-जैसे हम स्वाधीनता की इच्छा से अधिकाधिक

सराबोर होंगे, वैसे-वैसे हम स्वाधीनता का अनिर्वचनीय आनन्द अनुभव करने लगेंगे। और तब हम अनुभव करने लगेंगे कि जोवन का एक अर्थ और उद्देश्य है। और तब हमारे विचारों में परिवर्तन होने लगेगा और हमारी भावनाओं और आकांक्षाओं का रूप बदल जायगा। हमारे जीवन में सिर्फ एक चीज की कीमत रह जायगी, वह चीज है—स्वाधीनता। हमारा जीवन उसी आदर्श के लिये हो जायगा। जीवन के इस क्रमिक परिवर्तन का वर्णन असंभव है। लेकिन जीवन का यह परिवर्तन पूर्ण होते ही हमारा नवजन्म होगा, और तब हम असली अर्थ में 'द्विज' कहलायेंगे। इसके बाद हमारे विचार, हमारी भावनायें और स्वप्न भी 'स्वाधीनता' हो जायगे। हमारे सब कार्य सिर्फ एक इच्छा—स्वाधीनता से परिचित होंगे, एक मात्र इच्छा रहेगी, स्वाधीनता प्राप्त करना। एक वाक्य में हम स्वाधीनता-मद मत्त जीव हो जायँगे जिसका जीवन, गति सब कुछ स्वाधीनता में है।

जब एक दफा हमारे हृदयों में स्वाधीनता की चाह उत्पन्न हो जायगी तब वह उसकी पूर्ति के लिये जरिया, पर्याप्त जरिया खोजेगी। इसकी पूर्ति के लिये हमें अपनी शारीरिक, बौद्धिक और नैतिक शक्तियों को लगाना होगा। जो कुछ हमने सीखा है उसमें से बहुत कुछ हमें भूल जाना होगा और जो हमें नहीं सिखाया गया, वह जीवन में पहली बार जानना होगा। शरीर और मन को एक नयी शिक्षा ग्रहण करनी पड़ेगी और स्वाधी-नता प्राप्ति के योग्य होने के लिये हमें नवीन अनुशासन सीखना होगा। हमारे जीवन का बाहरी रूप बदल जायगा अभ्यासी,

आराम-तलबी और सुख-सुविधा की भावना छोड़नी होगी। बुरी आदतें छोड़कर, जीवन के नये तौर-तरीकों को अपनाना होगा। इस प्रकार स्वाधीनता प्राप्त करने के लिये हमारा सम्पूर्ण जीवन एक शुद्ध किया हुआ यंत्र बन जायगा।

आदमी, आखिरकार एक सामाजिक जीव है। अगर उसे समाज से अलग कर दिया जाय तो उसका आत्मपोषण नहीं हो सकता। व्यक्ति अपनी बढ़ती और विकाश के लिये ज्यादातर समाज पर निर्भर है, जैसे समाज, व्यक्ति पर। फिर व्यक्ति की उन्नति का कुछ मूल्य नहीं है अगर व्यक्ति की उन्नति समाज की उन्नति नहीं करती। व्यक्ति द्वारा स्वीकृत किन्तु समाज द्वारा अस्वीकृत आदर्श हमारे सामूहिक जीवन में शामिल न होने के कारण, कुछ विशेष कीमत नहीं रखता। अगर स्वाधीनता हमारे जीवन का प्रधान सिद्धान्त है तो समाज के पुनर्निर्माण का आधार भी स्वाधीनता होनी चाहिये। अगर स्वाधीनता का सिद्धान्त समाज के लिये लागू किया जाय तो तुरन्त मालूम होगा कि भावी समाज का मूलाधार, सामाजिक क्रान्ति के सिवा कुछ नहीं है। सम्पूर्ण समाज के लिये स्वाधीनता का अर्थ है स्त्री और पुरुष दोनों के लिये स्वाधीनता! ऊँची जाति वालों के लिये ही नहीं दलित जातियों के लिये भी स्वाधीनता, सिर्फ धनिकों के लिये ही नहीं गरीबों के लिये भी स्वाधीनता, सिर्फ जवानों के लिये ही नहीं वृद्धों के लिये भी स्वाधीनता, सब विभागों, सब जातियों और सब व्यक्तियों के लिये स्वाधीनता। इस प्रकार स्वाधीनता में समानता समन्वित है और समानता

विश्वबन्धुत्व की सहायिका है। स्वतन्त्र समाज में महिला को पुरुष के समान पद देना होगा, कानूनी और सामाजिक मामलों में उसे समान मानना होगा और जन्म के कारण किसी को नीच बनाने वाले सामाजिक बन्धनों को निर्ममता पूर्वक तोड़ देना पड़ेगा। सामाजिक प्रगति में बाधक आर्थिक असमानता दूर कर सबको शिक्षा और विकाश की समान सुविधाएँ देनी होंगी ताकि सब समाज के पुनर्निर्माण और शासन की जिम्मेदारी उठा सकें। समाज, राजनीति और अर्थनीति में हर शख्स उतना ही स्वाधीन होगा, जितना दूसरा और हर एक की हैसियत समान होगी। सबको समान सुविधाएँ हानी चाहिये, देश की सम्पत्ति का समान बँटवारा होना चाहिये, तमाम सामाजिक बन्धनों का नाश होना चाहिये, हम ऐसे समाज का निर्माण करना चाहते है, जिनमे न जाति-भेद हो और न जो विदेशी शासन के आधीन हो।

स्वाधीन भारत की कल्पना मे पूर्व और पश्चिम का जो कुछ उत्तम है, सब समन्वित। स्वाधीन भारत के उत्तराधिकारी की हैसियत से छात्रों को अपने आपको इस प्रकार प्रस्तुत करना चाहिये कि समाज के पुनर्निर्माण के पुरोहित हों और स्वाधीनता के पथ पर आगे बढ़ने वाले मशालची हों इसमें शक नहीं कि स्वाधीनता का पथ कंटकाकीर्ण है, लेकिन यह पथ ही अमरता प्राप्त करने का पथ है, यही अनश्वर कीर्ति का पथ है। भारत के छात्रों को एक होकर कन्धे से कन्धा भिड़ाकर इसी अमर, अनुपम पथ पर बढ़ना चाहिये।

नोट—अमरोही स्टूडेन्ट कांग्रेस। १ दिसम्बर १९२९.

कांग्रेसी मंत्रिमंडल क्या कर सकते हैं ?

—::o::—

[आठ वर्ष पहले माडर्न रिव्यू में लिखा गया नेताजी का निम्नोक्त लेख आज भी उतना ही महत्व रखता है, जितना आठ साल पहले। कांग्रेस के कर्णधारों द्वारा मध्य कालीन सरकार में शामिल होने पर नेताजी अगर भारत में उपस्थित होते तो उनका क्या रुख होता इसका आभास भी वर्तमान लेख से मिलता है]

अब भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की कार्यकारिणी ने जिन प्रान्तों में कांग्रेस का बहुमत है उनमें मंत्रिमंडल स्थापित करने की आज्ञा दे दी है, इसलिये हमारे सामने जो खतरा है उससे हमें सावधान हो जाना चाहिये। गोकि ग्यारह ब्रिटिश भारतीय प्रान्तों में ६ में कांग्रेसी मंत्रिमंडल स्थापित होंगे। फिर भी इसमें कोई शक नहीं कि सर्व साधारण और कांग्रेसियों का ध्यान विशेषकर कुछ काल तक व्यवस्था-परिषद् के सहायों और मंत्रियों के कार्यों की ओर रहेगा। वैधानिक कार्यवाहियाँ ही रोजमर्रा का काम हो जायँगी और सविनय कानून भंग जैसे आसाधारण तरीके जो अब तक कांग्रेस के प्रधान अस्त्र थे, पीछे रह जायेंगे। इसके परिणाम स्वरूप जनता में मानसिक परिवर्तन होगा, और बहुत से कांग्रेसियों के मन में आफिसों का मोह घर कर लेगा। जिस

विद्रोह भावना को जगाने में कांग्रेस को वर्षों लग गये, उसकी जगह आत्म-तुष्टि और निष्क्रियता ले लेगी।

मैं उनमें नहीं हूँ जो सैद्धान्तिक दृष्टि से पद ग्रहण को गलत समझते हैं! धारा सभाओं में जाना और पद ग्रहण करना निसंशय ब्रिटिश शाह की वफादारी का शपथ लिवाला है, लेकिन मैं इस तरह की शपथों को वैधानिक रस्म अदायगी मानता आया हूँ। सन् १९२२ और १९२४ में जब काग्रेस केन्द्रों में धारा सभा प्रवेश के सवाल पर काफी बहस होती थी उस समय भी यह तर्क मुझे नहीं जंचा था कि धारा सभा में प्रवेश किया जाय तो शाह के प्रति वफादारी की शपथ उठा दी जाय। श्री डी० वेलरा के शपथ लेकर डेल में जाने और वहाँ जाकर शपथ उठा देने में मैं कोई गलती नहीं देखता। दरअसल प्रश्न सिद्धान्तों का नहीं है बल्कि औचित्य और दृष्टिकोण का है।

म्युनिस्पल शासन के अपने अनुभव से मैं जानता हूँ कि शासन क्षेत्र में सफलता पाने के लिये छोटी-छोटी बातों पर प्रभुत्व पाने की क्षमता आवश्यक है। इसलिये शासन सम्बन्धी कामों में पूरा वक्त दे देने के बाद बड़ी समस्याओं के लिये समय और शक्ति शायद ही बच पाती हो। हम शायद ही ऐसा आदमी पायें जो शासन सम्बन्धी सभी बातों में समय देने के साथ-साथ अधिक आधारभूत समस्याओं पर विचार कर सके। मुझे अच्छी तरह याद है जब मैं १९२४ में कलकत्ता कारपोरेशन का चीफ एक्जीक्युटिव अफसर था, मैं कांग्रेस से बिलकुल दूर हो गया था क्योंकि मैं कारपोरेशन के कामों में सर से पैर तक फंस गया

था। लेकिन मैं उस कार्य में आँखे खोलकर घुसा था, मुझे आश्वासन दिया गया था कि पूरी ताकत से कांग्रेस कार्य करने वालों की कमी नहीं है।

मेरी हमेशा यह राय रही है कि स्वाधीनता प्राप्त कर लेने के बाद, स्वाधीनता के लिये युद्ध करने वालों को युद्धोत्तर पुनर्निर्माण का कार्य करना होगा। हमारा कार्य पूर्ण हो गया, इस बहाने से जिम्मेदारी से नहीं हटा जा सकता। इसलिये जैसे ही राजनैतिक दल विजय प्राप्त करे उसे शासन और समाज रचना में अपना पूरा मन लगा देना चाहिये ताकि वह यह दिखा सके कि वह नष्ट कर सकती है तो सृष्टि भी कर सकती है। लेकिन इस तरह की जिम्मेदारी लेने के पहले उसे तय करना होगा कि ठीक वक्त आगया, स्वाधीनता की लड़ाई जीत ली गई! अब हमारे सामने यह सवाल आता है कि क्या १९३५ का भारत विधान जो हम चाहते थे, देता है? और फिलहाल केन्द्रीय सरकार की बात छोड़ भी दें तो क्या यह हमें प्रान्तों में वास्तविक स्वशासन देता है? इसका स्पष्ट उत्तर है, नहीं!

यह तर्क पेश किया जा सकता है कि अस्त्र-शस्त्रों के युद्ध की भांति राजनैतिक संग्राम में भी हमें काम लायक स्थानों पर अधिकार कर अपनी स्थित दृढ़ करनी चाहिये, चूँकि हम अपने लक्ष्य की ओर बढ़ रहे हैं। बहुत ठीक! लेकिन क्या हम निसंशय है कि अधिकार पद पर कब्जा जमाने की चेष्टा में, हम शासन के पचड़े में फंसकर विद्रोह भावना भूलने न लगेंगे! जो विद्रोह भावना सब तरह के राजनैतिक विकाश के लिये आगे

बढ़ने का प्रथम स्थान है। यह स्पष्ट है कि कांग्रेस इस समय भ्रान्ति में पड़ी हुई है। स्वाधीनता का युद्ध जारी रखने के लिये, जो कि अभी तक आधे से भी कम जीता जा सका है, कांग्रेस के लिये यह संभव नहीं है कि वह अपने सब अगुस्थित आदमियों को मंत्रिपदों पर जाने दे। दूसरी ओर जब तक कि प्रथम श्रेणी के कांग्रेसी मंत्रित्व नहीं लेते तब तक विधान द्वारा हमें जो प्रभाव और शक्ति मिलती है, उसका पूरा उपयोग नहीं कर सकते। स्वर्गीय वी० जे० पटेल जैसे प्रथम श्रेणी के राजनैतिक द्वारा ही सन् १९२५-३० में केन्द्रीय धारा सभा की अध्यक्षता करते हुए जनप्रिय कामों को प्रथम स्थान देना, पार्लामेन्टरी परम्परा कायम करना संभव हो सका था। अन्य व्यक्ति होता तो विफल हो जाता। स्वर्गीय वी० जे० पटेल के मुकाबिले श्री सम्मुखम चेट्टि और अबदुररहीम नगण्य मालूम होते हैं।

यह भी कहा जा सकता है या कहा जायगा कि राजनैतिक-पार्टी के लिये शासन सम्बन्धी अनुभव अपरिहार्य है और नया विधान इस तरह का अनुभव प्राप्त करने का क्षेत्र देता है। लेकिन इस तर्क का आसानी से जवाब दिया जा सकता है। शासन का अनुभव और संगठन का अनुभव एक चीज नहीं है और संगठन सम्बन्धी अनुभव जहाँ लाभदायक हो सकता है वहाँ शासन सम्बन्धी अनुभव लाभ की जगह रुकावट हो सकता है। युद्धोत्तर युरोप के महान् से महान् शासक, जैसा कि सब समय और सब देशों में होता आया है, अपेक्षाकृत कम वय के और शासन अनुभव से रहित थे। लेनिन, हिटलर, मुसोलिनी, कमालपाशा के

सफल शासन पर दृष्टिपात करते ही उक्त तर्क की गहराई समझ में आ जाती है! वास्तविकता यह है कि क्रान्ति के बाद (हिंसात्मक या अहिंसात्मक क्रान्ति) नया शासन बिलकुल जुदा तरीके के सिद्धान्त और ढङ्ग चाहता है। नयी परिस्थित का सामना करने के लिये अनुभव उतना फायदेमन्द साबित नहीं होता जितना साहस कल्पना और कार्यशक्ति। क्या अनुभवी शासकों ने रूस की पंच-वर्षीय योजना बनाई थी, या तुर्की के नवीन प्रजातन्त्र की स्थापना की थी? क्या उन्होंने इटली के नये सम्राज्य की सृष्टि की या नवीन फारस को जन्म दिया?

इसमें कोई शक नहीं कि शक्ति और प्रतिक्रिया का दुर्ग (भारत सरकार) अभी भी ब्रिटिश सरकार के हाथ में है, प्रान्तीय शासन हमारे हाथों में आ गया है वह भी पूरा नहीं है। ऐसी परिस्थिति में अपने लक्ष्य से बिच्युत हुए बिना और उत्साह को खोये बिना क्या हम पूर्ण स्वाधीनता का संग्राम जारी रख सकते हैं जब कि हमारे दल का एक महत्व पूर्ण भाग अपने आपको शासन सम्बन्धी तफसीलों में डुबाये रखना पसन्द कर ले! इस प्रश्न के उत्तर का इस समय अधिक मूल्य न होगा, वक्त आने पर घटनाएँ इसका सही-सही उत्तर देंगी। लेकिन पद ग्रहण का पक्ष करने वाली पार्टी के विश्वास के अनुसार ही काम करना है तो हमें तो आनेवाले संकट की चेतावनी दे देना चाहिये। मेरा मतलब उस सवाल को फिर से उठाना नहीं है जिसके बारे में कांग्रेस कार्यकारिणी ने फैसला कर दिया, लेकिन मैं उन चट्टानों का उल्लेख कर देना चाहता हूँ, जिन्हें हमें पार करना

होगा, अगर हम भारत की स्वाधीनता को प्राप्त करना चाहते है !

गरीबी, बेकारी, रोग और अशिक्षा की महान् समस्याएँ भारतीय राजनीतज्ञ को सुलझाना होगा। ये समस्याएँ ऐसी राष्ट्रीय सरकार ही सुलझा सकती है, जिसके अधिकार में देश के साधन स्रोत हों। इन समस्याओं को हल करने के लिये संगठन और अर्थ चाहिये। क्या बड़े पैमाने पर राष्ट्र गठन के कामों को हाथ में लेने लायक संगठन और धन, प्रान्तों में कांग्रेसी मंत्रिमंडलों को मिलेगा ? संगठन के सम्बन्ध में कहा जा सकता है कि ऊँचे पदों पर अँग्रेज भरे पड़े हैं, जो कि बिलकुल भिन्न परम्परा में पले हैं जो हमेशा सजग रहेंगे कि उनका वेतन आदि सुविधाएँ मंत्रियों के हाथ से बाहर रहें। क्या ये अफसर कांग्रेसी मंत्रिमंडलों की नयी नीति के अनुसार चलेंगे ?

अगर वे ऐसा नहीं करते तो मंत्रियों का क्या होगा ? उत्तम से उत्तम इरादे के बावजूद भी क्या वे ब्यूरोक्रेसी की अड़चनों से सफलता पूर्वक लड़ सकेंगे ? ऊँचे ओहदों वालों को बदलना मंत्रियों के लिये असंभव होगा, क्योंकि यह विषय मंत्रियों के हाथ में नहीं है। मंत्रियों को उन्हें साथ लेकर जितना आगे चल सकें चलना होगा, गोकि अफसरों के कारण उन्हें अपने अच्छे कार्य की बरबादी देखने की जोखिम भी, उठानी पड़ेगी ! कुछ प्रान्तों में ब्रिटिश अफसरों द्वारा संचालित कांग्रेस सरकारों की स्थिति भी देखनी पड़ेगी।

अर्थ का मामला और भी महत्व पूर्ण है। कांग्रेस पार्टी ने

कुछ ऐसे कामों का वादा किया है जो सरकारी आपका रास्ता बन्द कर देंगे और बड़े पैमाने पर राष्ट्र निर्माण के कार्य को बहुत मुश्किल कर देंगे ! भूमिकर घटाने के बाद और मद्य-निषेद की नीति कार्यान्वित करने पर, मंत्रिमंडलों के बजटों में घाटा हो सकता है।

अन्य किसी देश में अर्थ मंत्री खर्च कम करने लग जायगा। लेकिन भारतीय प्रान्तों में ऊँचे ओहदों वालों के वेतन आदि को हाथ नहीं लगाया जा सकता और साधारणों को इतना कम मिलता है कि किफायत की नहीं जा सकती। सेना, रेल, पोस्ट, तार आदि संघीय विषय है, इनके खर्च में किसी तरह की कमी या दूसरे किसी तरह की आय नहीं हो सकती। कोई भी प्रान्तीय सरकार अधिक नोट जारी कर, नया अर्थ पैदा नहीं कर सकती क्योंकि मुद्रा भी संघीय विषय है। ऐसी अवस्था में प्रान्तीय सरकार को राष्ट्रनिर्माण के कामों के लिये कर्ज लेना होगा। लेकिन क्या गवर्नर इस तरह के लोन की धारा सभा से शिफारिस करेगा और लिनलिथगो की प्रतिक्रियाशील सरकार ऐसा लोन स्वीकार करेगी ? अगर ऐसा न हुआ तो कांग्रेसी मंत्रियों के चेहरों पर निराशा ही दिखलाई पड़ेगी।

इन परिस्थितियों में देखना चाहिये कि कांग्रेसी मंत्रिमंडल क्या भलाई कर सकते हैं ? सर्व प्रथम वे राजनैतिक कैदियों को छोड़ सकते हैं। दमनकारी कानूनों और आर्डिनेन्सों को हटा कर जनता को आर्थिक स्वतंत्रता दे सकते हैं। दूसरे वे प्रान्तीय शासन में नयी भावना भर सकते हैं, और तमाम सरकारी मह-

कर्मों में और खासकर पुलिस महकमें में जन सेवा का नया स्टैण्डर्ड चला सकते हैं। इस प्रकार वे सरकारी अफसरों और आदमियों से अधिक काम ले सकते हैं और शासन को ऊँचा उठा सकते हैं, तीसरे जहाँ संभव हो वहाँ सरकारी सहयोग देकर वे कांग्रेस के रचनात्मक कार्य को बढ़ा सकते हैं, चौथे वे खादी जैसे गृह शिल्पों को बढ़ावा दे सकते हैं, जैसे सरकारी खरीद के वक्त बाहर से आये हुए माल की जगह देश में बना माल खरीदना। पाँचवें वे जन-लाभकारी कानून बना सकते हैं, समाज-कल्याण, स्वास्थ्य सुधार आदि के। छठे सावधानी पूर्वक संरक्षण द्वारा वे प्रान्त में राष्ट्रीय तत्वों को दृढ़ कर सकते हैं और साथ ही प्रतिक्रियाशील तत्वों को दुर्बल कर सकते हैं। सातवें वे प्रान्त की आर्थिक स्थिति का 'सर्वे' कर सकते हैं ताकि जनता की साम्पत्तिक अवस्था का ठीक-ठीक पता लग जाय, आठवें वे कुछ विभागों के खर्च कम कर सकते हैं, नावें अपनी सरकारी स्थिति में केन्द्र में संघ का लादा जाना रोक सकते हैं। अपने उदाहरणों द्वारा वे अन्य गैर कांग्रेसी मंत्रिमंडलों पर अपना प्रभाव डाल सकते हैं।

लेकिन ये सब छोटे मोटे सुधार हैं। ये सुधार कुछ काल के लिये चाहे जनता को सन्तुष्ट कर दे, लेकिन अधिक समय के लिये नहीं। प्रथम वर्ष समाप्त होने के पहले ही आधारभूत समस्याएँ गरीबी, बेकारी, रुग्णता, अशिक्षा फिर गम्भीर रूप धारण कर लेंगी और तत्काल निवारण चाहेंगी। केन्द्र में प्रति-क्रियाशील सरकार के रहते हुए और सीमित अर्थ के कारण

क्या कांग्रेस मंत्रिमंडल आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकेंगे? गरीबी और बेकारी की समस्याएँ कृषि की अवस्था सुधारने, राष्ट्रीय उद्योग धंधों के चलाने, और बैंकिंग तथा कर्ज सम्बन्धी सुविधाएँ मिलने पर ही हल हो सकती हैं। और इन सब कामों के लिये अधिक धन चाहिये। रोगों को दूर भगाने के लिये, रोगों के रोकने और उन्हें नष्ट करने के लिये तथा खेल-कूद और व्यायामों का प्रचार करने के लिये काफी धन की जरूरत होगी। और अशिक्षा दूर करने के लिये युवा और वृद्धों के लिये अनिवार्य निशुल्क शिक्षा आवश्यक है, जो तभी संभव है जब कि मंत्रिमंडलों के पास काफी धन हो। ये समस्याएँ आज के बड़े से बड़े स्वतंत्र देशों के द्वारा भी सन्तोषजनक रूप से नहीं सुलझायी जा सकतीं। भारत में ये समस्यायें तभी सुलझाई जा सकती हैं, जब प्रान्तों में और दिल्ली में जनप्रिय सरकार हो और प्रान्तीय सरकार और केन्द्रीय सरकार में पूर्ण सहयोग हो। इसके सिवा मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि भारत जैसे पिछड़े हुए और अनुन्नत देश की आर्थिक आवश्यकता अर्थ शास्त्र के सिद्धान्तों और रूढ़ियों द्वारा नहीं पूरी हो सकती। इसलिये मैं निकट भविष्य में ऐसा वक्त आने की कल्पना करता हूँ जब कांग्रेस मंत्रिमंडल छोटे-मोटे सुधार कर लेने के बाद अनुभव करेंगे कि जब तक केन्द्र में जनप्रिय सरकार कायम न हो और जनता को सब अधिकार न दे दिये जायँ, तब तक आगे नहीं बढ़ा जा सकता।

लेकिन हमें यह न सोचना चाहिये कि इस स्थिति में पहुंचने

तक कांग्रेस मंत्रिमंडल मजे से अपने काम करते जा सकेंगे। मैंने दो कठिनाइयों—अपर्याप्त अर्थ और उच्चाधिकारियों की अड़ंगे-बाजी—की तरफ ध्यान खींचा है। कांग्रेसी प्रान्तों में मन्त्रिगण नाममात्र को I. M. S. के अंग्रेज अफसरों के मालिक होंगे किंतु वे कुछ कर न सकेंगे। कांग्रेसी प्रान्तों की जब यह अवस्था होगी तो और कांग्रेसी मंत्रिमंडलों की अवस्था का अनुमान स्वयम् कर लीजिये जिनका उद्देश्य किसी न किसी प्रकार मंत्री बने रहना है। उदाहरण के तौर पर बंगाल के मंत्रिमंडल का चार महीने का काम भविष्य में क्या होगा इसकी सूचना देता है। उन्होंने अभी राजनैतिक कैदियों को छोड़ने के पहले काम में भी हाथ नहीं लगाया, तब उनसे क्या आशा की जाय की वे 'जूट' की समस्या का सन्तोषजनक समाधान करेंगे।

तब क्या हम इस नतीजे पर पहुँचे कि मंत्रित्व ग्रहण करने से कुछ भलाई नहीं हो सकती ? हरगिज नहीं। गोकि मैं अधिकांश कांग्रेसियों की तरह आशा नहीं करता कि कांग्रेसी मंत्रिमंडलों द्वारा दीर्घकाल में काफी बड़े सुधार हो सकते हैं। किन्तु मैं यह मानता हूँ कि पद ग्रहण की नीति का उपयोग भारत की स्वाधीनता को आगे बढ़ाने में किया जा सकता है। लेकिन इस कार्य की सिद्धि के लिये हमें हमेशा सजग रहना चाहिये और कांग्रेस को लिबरल लीग कदापि न बनने देना चाहिये। कांग्रेस में ऐसे आदमियों की कमी नहीं है जिन्हें अगर उनके ही भरोसे छोड़ दिया जाय तो वे आरामदेह वैधानिकवाद की ओर चले जायेंगे।

मंत्रिपद ग्रहण करने का सबसे बड़ा फायदा यह होगा कि वह जनता में यह विश्वास बढ़ायेगा कि कांग्रेस ही ब्रिटिश सरकार की स्वाभाविक उत्तराधिकारिणी है और ठीक वक्त आने पर भारत की तमाम सरकारी मैशीनरी कांग्रेस के हाथ में आ जायेगी। कांग्रेस मंत्रिमंडलों द्वारा हम जो आर्थिक लाभ पायेंगे उसकी अपेक्षा यह नैतिक लाभ कहीं अधिक होगा। दूसरे दुर्बल मना कांग्रेसी शासन का स्वाद चखने पर मुमकिन है वह कांग्रेस का अधिक कार्य करने को प्रवृत हो जिसमें त्याग और बलिदान करना पड़े। तीसरे मंत्रिपद ग्रहण करने पर कांग्रेस संघ का विरोध कर सकेगी, यानी वह सरकारी तौर पर इसका विरोध कर सकेगी और इस बाहरी और भीतरी विरोध के कारण वह संघ योजना का सर्वनाश कर सकी तो उसके सिर पर सफलता का सेहरा बंध जायगा। कांग्रेसी मंत्रिमंडलों को अपने शासन संबंधी अनुभावों से भारत और विश्व को दिखला देना चाहिये कि सन् १९३५ के विधान के अनुसार विशाल सामाजिक रचना की गुंजायश नहीं है। यह अनुभव कांग्रेस और देश को दिल्ली और व्हाइट हाल के प्रतिक्रिया के किलों पर आखिरी आक्रमण करने के लिये तय्यार करेगा।

हमारे मंत्रिपद ग्रहण में अगर ये चार तरह के कार्य हुए तो मैं बहुत सन्तुष्ट होऊँगा। हमारे जैसे लोग, जो मंत्रिपद ग्रहण की नीति में विश्वास नहीं रखते लेकिन जो बहुमत के निर्णय को मान लेते हैं, उनका फर्ज है कि वे कांग्रेसी मंत्रिमंडलों की दस-वर्षी योजना से जनता को सावधान कर दें, कुछ कांग्रेसी नेता इस

तरह की बातें करने लगे है मानों हमने भविष्य के लिये यह विधानवादी नीति ही स्वीकार कर ली हो।

यह बहुत सुखद है कि कांग्रेस के अग्रणी नेता, महात्माजी पण्डित जवाहरलाल नेहरू, सरदार पटेल, राजेन्द्र बाबू आदि मंत्रित्व से ही नहीं धारा सभाओं की सदस्यता से भी दूर हैं। यह इस बात की गारएटी है कि कांग्रेस वैधानिक कार्य कलाप में फँस कर अपने को वैधानिक समान बना लेगी। ये नेता देखेंगे कि कांग्रेसी मंत्री अपने स्थानों पर रहते हुए कांग्रेस हाई कमांड के निर्देशों के अनुसार काम करेंगे सबसे बड़ी बात तो यह है कि अपने अस्थायी अवसर ग्रहण के बावजूद भी महात्मा गांधी ईश्वरी की तरह सजग हैं और बड़े ध्यान से घटनाओं का निरीक्षण कर रहे हैं, महात्माजी का यह रुख हर एक को विश्वास दिला देगा कि जब अवसर आयेगा और निश्चय ही आयेगा, तब वे बाहर आकर कांग्रेस से वैधानिक कार्यवाही छोड़ने को कहेंगे और जन-सत्याग्रह की पताका फहरा देंगे ताकि भारत के लिये पूर्ण स्वाराज्य प्राप्त करने का संग्राम कांग्रेस जोश खरोश और सफलता पूर्वक चला सके।

विदेशों में भारत के राजदूत

—::०::—

स्वर्गीय देशबन्धु दास ने संभवतः सबसे पहले विदेशों में भारत सम्बन्धी प्रचार की महत्ता की ओर मेरा ध्यान खींचा था। स्वराज्य पार्टी की स्थापना स्वर्गीय देशबन्धु और पण्डित मोतीलाल जी ने फ़रवरी १९२३ में की थी किन्तु इसकी कार्य योजना सन् १९२२ में ही बननी आरंभ हो गई थी, उस समय हम सब जेल में थे। स्वर्गीय देशबन्धु की योजना में दो विषयों पर स्वयं देशबन्धु विशेष व्यक्तिगत दिलचस्पी रखते थे लेकिन उन विषयों की तरफ औरों का विशेष उत्साह नहीं था। क्योंकि जनता का ध्यान धारा सभाओं और कारपोरेशन आदि की सीटों पर अधिकार करने की ओर विशेष रूप से खींचा गया था। ये दो विषय थे, विदेशों में भारत प्रचार और एशियाई लीग का संगठन।

कई साल बीतने के बाद फिर मेरा ध्यान विदेशों में भारत प्रचार की ओर खींचा गया। यह सन् १९२८ की बात है एक अमेरिकन पत्रकार ने मुझसे मुलाकात की जिनका नाम इस वक्त मैं भूल गया हूँ। बात-चीत में उन्होंने बतलाया कि चीन ने किस प्रकार समस्त सभ्य संसार का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर लिया। उन्होंने कहा कि भारत को भी विश्व की दृष्टि में

आने का प्रयत्न करना चाहिये। यह काम किस तरह से किया जाय इसका निर्णय करना भारत का काम है, लेकिन इस प्रकार के प्रचार की आवश्यकता भारत के हित की दृष्टि से अनिवार्य है।

भारत की प्रगति के लिये विदेशों में भारत सम्बन्धी प्रचार होना चाहिये इस विश्वास को दो तथ्यों ने और भी गहरा बना दिया। (१) पिछले दो वर्षों के मेरे यूरोपीय प्रवास के अनुभव (२) इतिहास का अध्ययन। पिछले दो वर्षों में मैंने यूरोप के अनेक देशों का भ्रमण किया। सब जगह मैंने भारत के संबंध में काफी गैर जानकारी पाई, फिर भी भारत के प्रति सहानुभूति और दिलचस्पी सभी जगह थी। अगर हमारी तरफ से आवश्यक कार्यवाई हो तो यह सहानुभूति आसानी से बढ़ाई जा सकती है। लेकिन हम तो इस विषय में बिलकुल अन्यमनस्क हैं और अन्य प्रचारक संस्थाएँ अपना काम कर रही हैं। आज से नहीं, पीढ़ियों से ये 'सभ्य संस्थाएँ' दुनिया की नजरों में ऐसे भारत को रखती आ रही हैं, जहाँ विधवाएँ जीवित जला दी जाती हैं, पाँच-छः वर्ष की लड़कियों का ब्याह कर दिया जाता है और सर्व साधारण को कपड़े पहनने की तमीज भी नहीं है। मुझे १९२० की घटना याद है कि लन्दन में मैं एक लेक्चर हॉल के सामने से जा रहा था, जिसके बाहर पोस्टर रखा हुआ था जो बतलाता था कि भारत के सम्बन्ध में यहाँ व्याख्यान होनेवाला है इस पोस्टर में अधनंगे काले भुजंग कुरूप भारतीय दिखलाये गये थे। व्याख्यान का उद्देश्य भारतीयों को "सभ्य" बनाने के लिये "चन्दा" जमा

करना था, इसीलिये भारत को इस गंदे तरीके से दिखलाया गया था। सन् १९३३ के अन्त में एक जर्मन पत्रकार ने (जो अपने को हाल में ही भारत भ्रमण से लौटकर आया हुआ कहता था) म्युनिक के एक पत्र में लिखा कि उसने अपनी आँखों से भारत में विधवाओं को जलाते और बम्बई शहर में मुर्दों को यों ही पड़े देखा। हाल में ही वियेना के एक सचित्र पत्र में कीड़ों से भरी लाश का चित्र छपा है जिसके नीचे लिखा गया है कि यह एक साधू की लाश है जो कई दिनों तक हटायी नहीं जा सकी क्योंकि हिन्दुओं का विश्वास है कि साधू की लाश मामूली आदमी नहीं छू सकता। सबसे आश्चर्य की बात तो यह है कि भारत को गन्दे से गन्दे रूप में चित्रित करने वाले चित्र ही चुन चुन कर छापे जाते हैं। फिल्मों और अखबारों दोनों के लिये ही यही बात है। India Speaks और Bengali जैसे फिल्मों के सम्बन्ध में तो भारतवासी कुछ जान गये हैं, लेकिन एक फिल्म "Everybody Loves Music" नामक फिल्म द्वारा जो बदमाशी की जा रही है, उससे भारतवासी परिचितनहीं है, इस फिल्म में महात्मा जी अपनी पोशाक में युरोपियन गर्ल के साथ नाचते दिखलाये गये हैं।

विदेशों में इस तरह का प्रचार होते हुए, क्या आश्चर्य है कि इङ्गलैण्ड में भारतीय 'ब्लैकी' और जर्मनी में "नीगर" कहे जायें? इस परिस्थिति में हमारा क्या कर्तव्य है? पहला और आसान तरीका तो यह है कि ऐसे अपमान से अपनी आँखें बन्द कर लें और बेइज्जती सहकर चुप रह जायें और दूसरा कठिन

रास्ता यह है कि अपना प्रचार आरम्भ करें। तुर्की कूटनीतिज्ञ से बात करते हुए मैंने शिकायत की थी। खुद तुर्कों द्वारा लिखा हुआ विदेशियों के पढ़ने लायक कोई साहित्य आधुनिक तुर्की में नहीं है। अपने बचाव के लिये उन्होंने कहा कि तुर्की प्रचार में विश्वास नहीं करते। गोकि यह सच नहीं है, वे अपना प्रचार करने लगे हैं। दरअसल आजकल के प्रचार के युग में कोई भी देश प्रचार न करने की नीति को युक्तिमुक्त नहीं कह सकता। जहाँ तक युरोपीय देशों का सम्बन्ध है, प्रचार करना वहाँ की सरकारों की स्वाभाविक और उचित कार्यवाही माना जाता है। युरोपीय देशों में—इङ्गलैण्ड और रूस—प्रचार कार्य में उस्ताद हैं—इसके बाद इटली और जर्मनी हैं। एशिया के देशों में चीन सबसे आगे है। जेनेवा में मैंने देखा कि दक्षिण अमेरिका की रियासतें भी यूरोप में अपना प्रचार करने को उत्सुक हैं।

कुछ वर्षों में ही जिन देशों ने अपने देश की स्वाधीनता प्राप्त की हैं, उन देशों के इतिहास के अध्ययन करने से, विदेशी प्रचार का महत्व प्रकट होता है। आशा है, पाठकों को पता होगा कि सन् १९२० और २१ में अमेरिका में आयर्लैण्ड की 'सिनफिन' पार्टी की ओर से घनघोर प्रचार किया गया था। पार्टी ने अपने सर्वोत्तम व्यक्तियों—श्री डी० वेलरा तक को प्रचार कार्य के लिये अमेरिका भेजा था। इसके अलावा अन्य देशों में भी प्रचार केन्द्र खोले गये थे। जेक नेताओं ने विदेशी प्रचार की बहुत ही महत्वपूर्ण और दिलचस्प मिसाल पेश की है। पिछले बीस वर्षों से जेक नेताओं—डाक्टर मसरिक, बेनेस

आदि ने, विभिन्न देशों में—खासकर इङ्गलैण्ड, अमेरिका, फ्रांस में लगातार जोरदार प्रचार कार्य किया। दो पीढ़ियों बाद, जेक नेताओं को अपने प्रयत्नों का सुफल मिला। यह मान लेना चाहिये कि बिना इङ्गलैण्ड, फ्रांस, अमेरिका की सहानुभूति के जेकोस्लोवेकिया के लिये, स्वतन्त्र राज की स्थिति में आना सम्भव न था।

सिर्फ गुलाम देश ही नहीं, स्वतन्त्र देश भी अपना प्रचार करने लगे हैं। हंगरी और चीन बराबर अपना प्रचार करते रहते है। चीन के प्रचार का प्रधान कार्यालय जेनेवा है, वहाँ चीनी पुस्तकालय और चीन के सम्बन्ध में अध्ययन करने वालों को सब तरह की सुविधायें दी जाती है। उन्होंने चित्रकला प्रदर्शनी का भी प्रबंध किया था, जिसे काफी सफलता मिली। चीनी, फ्रेंच और अंग्रेजी में चीनी साहित्य छपवा कर वितरण करवाते हैं। सन् १९३५ में लन्दन-चीनी-चित्रकला प्रदर्शनी हुई थी। इसमें जरा भी शक नहीं कि चीन ने अपने प्रचार द्वारा संसार की सहानुभूति प्राप्त कर ली इसी का परिणाम था कि मंचुकुओं के मामले में जापान की काफी कोशिश के बावजूद भी चीन को लीग आफ नेशन्स का समर्थन प्राप्त हो गया था। अपनी सैनिक दुर्बलता के कारण चीन इस समर्थन का समुचित सदुपयोग नहीं कर सका।

जिन स्वतंत्र देशों की कोई अपनी राष्ट्रीय शिकायत नहीं है, वे भी व्यावसायिक और सांस्कृतिक प्रचार की दृष्टि से प्रचारकार्य करते हैं। मेरी दृष्टि में अन्य देशों की अपेक्षा ब्रिटेन का प्रचार

अधिक प्रभाव पूर्ण है। क्योंकि उसका प्रचार कार्य स्वाभाविक और वैज्ञानिक है। ब्रिटिश प्रचार के प्रधान तरीके ये है (१) रूटर जैसी समाचार भेजने वाली एजेन्सियाँ दैनिक समाचारों में ही ब्रिटेन के बारे में प्रचार करती रहती है। (२) अंग्रेज हर अन्तर्राष्ट्रीय कांग्रेस में शामिल होते हैं। (३) हर देश में वहाँ वालों के साथ सम्बन्ध स्थापित करने के लिये अंग्रेजों की संस्थाएँ है। (४) ब्रिटिश संस्कृति के विभिन्न विभागों पर व्याख्यान देने के लिये हर साल बहुत से अंग्रेज अन्य देशों में जाते हैं। (५) विदेशी छात्रों और छात्राओं को इङ्गलैण्ड घूमने के लिये बुलाया जाता है। (६) बहुत सी अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाएं है जिनका प्रधान कार्यालय लन्दन में है और युरोप भर में शाखाएं है। ये अंग्रेजी पुस्तकों का काफी संग्रह रखती हैं और ब्रिटेन के पक्ष में प्रचार करती है। (७) युरोप के हर देश में अंग्रेजी भाषी छात्र हैं। (८) ब्रिटेन सम्बन्धी पुस्तक हर भाषा में छापी जाती है।

राजदूतों और प्रतिनिधियों के अलावा गैर सरकारी एजेन्सियाँ बराबर प्रचार करती रहती हैं। ब्रिटिश प्रचार रचनात्मक होता है इसलिये लोगों को पता नहीं चलता कि अँग्रेज किस तरह अपने मतलब की बात जनता के मन में बैठा देते है। लेकिन जब "मिसमेयो की मदरइण्डिया" या बंगाली फिल्म जैसा प्रचार किया जाता है, तब दूसरे के नाम पर प्रचार किया जाता है ताकि कोई यह न कह सके कि इसके पीछे अँग्रेज हैं। जर्मनी का प्रचार रूढ़ और विरोधात्मक है इसलिये वह कभी-कभी असफल हो जाता है।

यह ख्याल किया जाय कि ब्रिटिश जाति जैसी शक्तिशाली जाति इस बात की पर्वा नहीं करती होगी कि और लोग उसके बारे में क्या सोचते हैं, तो यह गलत है। सन् १९३४ में बेलग्रेड के अंग्रेज राजदूत ने अपने विदेश विभाग को लिखा था कि वह युगोस्लेवियन पत्रों से अनुरोध करे कि वह अपने पत्रों में मेरी 'इण्टर व्यू' न छापें। हाल में ही एक नयी संस्था स्थापित हुई है जिस का नाम "British council of Relations with Foreign countries" है, इसके सभापति हैं, Lord Fyrell और संरक्षक हैं प्रिंस आफ वेल्स, इसके लिये ६ हजार पाउण्ड की सहायता एक मुश्त दी गयी है।

अब सवाल यह है कि हमें क्या करना चाहिये। कुछ पुराने विचार वाले तो इसकी महत्ता ही नहीं समझते। लेकिन कांग्रेस सभापति डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद इसके महत्व को मानते हैं, लेकिन कहते हैं कि कांग्रेस के पास अभी पर्याप्त साधन नहीं है।

भारतीय नेताओं में श्री विट्ठल भाई पटेल ने ही इसका महत्व अनुभव किया था। यह कहना अत्युक्ति न होगा कि भारत प्रचार में ही उन्होंने अपना जीवन अर्पण कर दिया। अमेरिका भ्रमण में श्री पटेल ने ८५ स्थानों पर व्याख्यान दिये थे, जिनका असर उनके स्वास्थ्य पर बहुत बुरा पड़ा। अमेरिकन मित्रों से बात-चीत के बाद वे इस धारणा से भारत लौटे थे कि अमेरिका में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को अपना स्थायी प्रतिनिधि रखना चाहिये। स्वर्गीय पटेल की राय थी कि जेनेवा में हमें अपने प्रचार का प्रधान कार्यालय रखकर उसकी शाखाएँ युरोप

और अमेरिका भर में खोलना चाहिये। "इण्डो आयरिश लीग" के नाम से डबलिन मे उन्होंने एक संस्था स्थापित भी कर दी थी। जेनेवा को उनकी यात्रा का उद्देश्य भी वहाँ पर प्रचार केन्द्र की स्थापना था, किन्तु उनके असामयिक देहावसान के कारण यह कार्य न हो सका।

भारत जैसे देशों के लिये प्रचार की नितान्त आवश्यकता है, और ऐसे शान्तिपूर्ण वैधानिक कार्य में ब्रिटिश सरकार भी कोई आपत्ति नहीं कर सकती। हमे अपने पक्ष में प्रचार करने का पूरा हक है। ब्रिटिश सरकार ने भी भारत को लीग आफ नेशन्स का सदस्य मानकर इसे अप्रत्यक्ष रूप से मान लिया है।

कुछ लोगों में धारणा है कि विदेशों में प्रचार, गुप्त, क्रान्तिकारी या ब्रिटिश विरोधी ह। मगर यह धारणा बिलकुल बेबुनियाद है। प्रचार प्रत्यक्ष और स्पष्ट होना चाहिये उसे ब्रिटिश विरोधी न होकर, भारत हितैषी होना चाहिये। ब्रिटिश विरोधी प्रचार से हमें कोई लाभ न होगा। मेरे खयाल से हमारा प्रचार इस तरह का होना चाहिये। (१) भारत सम्बन्धी मिथ्या प्रचार का खण्डन। (२) भारत की वास्तविक स्थिति से संसार को परिचित कराना। (३) भारत की सफलताओं से संसार को परिचित कराना। भारतीय सभ्यता और संस्कृति के प्रचार की दृष्टि से यह बहुत महत्वपूर्ण है। इसके लिये भारतीयों को हर अन्तर्राष्ट्रीय कान्फ्रेंस में भाग लेना चाहिये। भारत सम्बन्धी लेख पत्रों में छपने चाहिये। युरोप और अमेरिका की भाषाओं में भारत सम्बन्धी पुस्तकें प्रकाशित होनी चाहिये।

युरोप के मध्य में कहीं ऐसा पुस्तकालय होना चाहिये जहाँ भारत सम्बन्धी पुस्तकें प्राप्त हों। विदेशों में भारत संबंधी फिल्म दिखाये जायँ। विभिन्न देशों में भारतीय भारत के सम्बन्ध में व्याख्यान दें। हर देश में 'इण्डो आयरिश लीग' जैसी संस्थायें कायम की जायँ और सांस्कृतिक सम्पर्क जोड़ा जाय। ऐसी संस्थाओं को हर तरह की सहायता दी जाय।

हमारे विरुद्ध जो लगातार प्रचार हुआ है उसने लोगों के मन में धारणा पैदा कर दी है कि हम असभ्य हैं, हमारी महिलायें गुलाम हैं, हम एक राष्ट्र नहीं है, हमारे समाज के भयानक मत विरोध हैं। हम इस तरह के प्रचार की उपेक्षा नहीं कर सकते। हमारे लिये अपनी स्वाधीनता की प्राप्ति के लिये, विश्व की सहानुभूति नितान्त आवश्यक है। स्वामी विवेकानन्द, डाक्टर रवीन्द्रनाथ टेगोर और महात्मा गाँधी ने भारत का मस्तक ऊँचा किया है, लेकिन हमें अपने उद्देश्य की सिद्धि के लिये बराबर प्रयत्न करते रहना चाहिये। विदेशों में ऐसे भारतीय सपूत हैं जो अपने परिमित साधनों द्वारा बराबर भारत के पक्ष में कार्य करने का दृढ़ संकल्प कर चुके हैं। अब यही सवाल है कि क्या भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस इस महत्वपूर्ण कार्य को हाथ में लेकर इसे सुचारु रूप से चलाती है क्या?

भारत का पुजारी

—::०::—

[अपनी यूरोप यात्रा में नेताजी जिन-जिन भारतीय और यूरोपीय सज्जनों से मिले और जिनसे उन्होंने भारत के लक्ष्य के प्रति सहानुभूति पायी, उनको बड़े सम्मान से याद किया है। युरोप भर में भारत का प्रचार करना और भारतीय अभारतीय भारत हितैषियों से मिलना तथा उनका उत्साह बढ़ाना नेताजी का काम था।]

सन् १९३३ के पोलैंड भ्रमण में अनेक सज्जनों से मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ जिनमें कुछ सज्जन भारत के प्रति बहुत दिलचस्पी रखते थे। राष्ट्रीय लक्ष्य की प्राप्ति में सभी की सहानुभूति थी, सभी चाहते थे हमारा देश स्वाधीनता प्राप्त करे। पोलों को भी अपनी स्वाधीनता के लिये काफी दिनों तक संग्राम करना पड़ा था और हाल में ही उन्हें स्वाधीनता मिली है, इसीलिये स्वाधीनता के लिये संग्राम करने वाले देश के साथ सहानुभूति होना स्वाभाविक है। मैं मोटर में पोलों का कृषि जीवन देखने जा रहा था, मैं गाँव के कृषि विद्यालय में ले जाया गया, जिसकी स्थापना स्वाधीन सरकार के बाद हुई थी, इस स्कूल में किसान बालकों को आधुनिक वैज्ञानिक कृषि की शिक्षा दी जाती है। स्कूल का चक्कर लगा लेने के बाद एक वृद्धा से मुलाकात हुई जिसने अत्यन्त

आग्रह से पूछा, महात्माजी का स्वास्थ्य कैसा है और वे क्या कर रहे हैं ? उसके प्रश्न मर्मस्पर्शी थे। पोलों की यही चेष्टा है कि वे अपने देश का यथा शीघ्र औद्योगीकरण कर डालें। इन्होंने अपना बन्दरगाह Gdyuia खोला है, अब ये जर्मन बन्दरगाह डेनजिंग के भरोसे नहीं रहे। वे अपना विदेशी व्यापार बढ़ाने के लिये विदेशों में अपने प्रतिनिधि नियुक्त कर रहे हैं। पोलैण्ड की कपड़े की मिलें काफी उन्नत हैं, लोहे और इस्पात के उद्योग की भी काफी उन्नति हो रही है।

पोलैंड के प्रधान शहर वारसा में 'प्राच्य संसद' Oriental Society है, जो पूर्वीय संस्कृति में खास दिलचस्पी रखती है। निमंत्रण पाकर मैं वहाँ गया और पोलिश भारतीय सभा को स्थान पर जोर दिया ताकि दोनों देशों में व्यापारिक और सांस्कृतिक सम्बन्ध कायम हो सके।

यहाँ के छात्रों छात्राओं में काफी जागृति है। महिलाओं में विदेशों (भारती भी) से सम्बन्ध स्थापित करने की ओर विशेष उत्साह है। उन्होंने भारत के छात्र और युवा आन्दोलन के बारे में बहुत सी बातें पूछीं। उनके संगठन का नाम है—'लीगा' Liga इसमें हर देश के लिये अलग-अलग ग्रूप हैं, यानी जो भारत से दिलचस्पी रखते हैं उनका एक दल है, चीन से रखने वालों का दूसरा।

वारसा में मुझे एक संस्कृत के विद्वान और भारतीय साहित्य तथा भारत प्रेमी पोल महानुभाव के दर्शन हुए। आपका नाम प्रोफेसर मिकालस्की (Professor Stani slaw

F. Michalaski) है आपका जन्म १८८१ में हुआ है और वियेन में ६ साल तक आपने प्रोफेसर लियोपोल्ड वी० श्रोडर (Leopold V Schroder) के तत्वावधान में संस्कृत का अध्ययन किया और फिर जर्मनी जाकर प्रोफेसर ओल्डेनवर्ज से शिक्षा ली। आपने विश्व विद्यालय में वर्षों तक संस्कृत भाषा और साहित्य के सम्बन्ध में व्याख्यान दिये। सन् १९२० में बोल सेविकों के विरुद्ध संग्राम में प्रोफेसर साहब ने स्वयम् सेवक का काम किया था। इसके बाद से साहित्यिक और वैज्ञानिक कामों में ही लगे रहते हैं। सन् १९२३ में आपने अन्य सहयोगियों के साथ वारसाविज्ञान सभा का प्राच्य विभाग स्थापित किया। भारत और भारतीय सभ्यता के विषय में लिखी हुई आपकी पोलिश भाषाएँ में अनेक पुस्तकें हैं। (१) श्रीमद्‌भगवतगीता, प्रथम संस्करण, १९१२ द्वितीय १९२०, तृतीय १९२६ (२) उपनिषद् संग्रह, प्रथम संस्करण १९१३ द्वितीय १९२२ (३) रामायण का एक भाग (४) धम्मापदम् (५) ऋग्वेद की ४० ऋचाएँ (६) आत्म बोध (७) भगवत्‌गीता संस्कृत में परिचय और टिप्पणी सहित।

आप पोलिश विश्वकोष बना रहे हैं, जिसमें भारतीय साहित्य, भाषा, संस्कृत, भूगोल और इतिहास के सम्बन्ध में अनेक लेख हैं, एक बड़े निबन्ध के साथ चित्र भी दिये गये है। इस बहुमूल्य साहित्यिक कार्य के साथ ही साथ १९२४ और १९३५ में आपने भारत के सम्बन्ध में तथ्य पूर्ण भाषण दिये थे। आप भारत विषयक पुस्तकों का पुस्तकालय बना रहे हैं। इस पुस्तकालय में फिलहाल दो हजार पुस्तकें नई और पुरानी संस्कृत

और भारतीय साहित्य विषयक हैं। यहाँ मालूम हुआ कि एक और पोलिश विद्वान प्रोफेसर स्टासियाक भारत भ्रमण कर रहे हैं।

रूमानिया की यात्रा में, बुखारेस्ट में मेरी डाक्टर नरसिंह मूलगन्ध से मुलाकात हुई। आप रूमानियन सेना में चिकित्सा विभाग में लेफ्टीनेण्ट कर्नल हैं। इनसे मुलाकात कर मैं इतना प्रसन्न हुआ कि मैंने इनसे जीवन का पूर्ण परिचय पूछा और जो कुछ उन्होंने बतलाया उसी के आधार पर निम्नोक्त पंक्तियाँ लिख रहा हूँ।

आप महाराष्ट्रीय हैं, इनका घर हैदराबाद दक्षिण से साठ मील भुवनगीर तालुके में हैं। बम्बई में मैट्रिक परीक्षा पास करने पर ये कलकत्ता आ गये थे और स्काटिश चर्चेज कालेज और नेशनल मेडिकल कालेज में एक साथ ही पढ़ने लगे थे। सन् १९१२ में दोनों कालेजों से परीक्षायें पास करने के बाद ये लन्दन गये और वहाँ से M. R. C. S. का डिप्लोमा प्राप्त किया।

इसके कुछ दिनों बाद ही टर्की-बालकन युद्ध छिड़ गया और ये टर्की के तरफ से स्वयंसेवक बन गये। वहाँ पर दो मेडिकल मिशन थे, एक के अध्यक्ष डाक्टर अनसारी और दूसरे के डाक्टर अब्दुल हुसैन। डाक्टर मूलगन्ध हुसैन साहब के मिशन में शामिल हुए। शतालजा Shatalja में आपने छः महीने तक टर्की सेना में सर्जन का काम किया। यहाँ इन्हें टर्की सरकार से प्रशंसा पत्र प्राप्त हुआ। इस युद्ध में ग्रीस, सरविया और बलगेरिया टर्की के खिलाफ थे। यहाँ युद्ध तो शीघ्र ही खत्म हो गया

और दूसरा युद्ध छिड़ गया, जिसमें सरविया और ग्रीस ने बलगेरिया पर हमला किया। रूमानिया ने भी इस युद्ध में भाग लिया चूंकि बलगेरिया ने तुर्कों के काफी भूभाग पर अधिकार कर लिया था इसलिये तुर्कों ने अपना भूभाग फिर से ले लेने के इस अवसर से लाभ उठाया। जब रूमानिया ने बलगेरिया के खिलाफ युद्ध घोषणा कर दी तब यह मिशन रूमानिया गया।

रूमानिया में जिमनिका स्थान में सैनिक अस्पताल था, डाक्टर साहब यहाँ काम करते थे। इस समय सेना में हैजा फैल गया जिसे दूर करने में मिशन ने काफी सहायता पहुँचाई। अपने बहुमूल्य सेवा-कार्य के फलस्वरूप डाक्टर साहब को रूमानियन सरकार से Order of Military Virtue प्राप्त हुआ। द्वितीय बालकन युद्ध समाप्त होने पर मिशन भारत लौट आया, लेकिन ये यहीं रह गये। आपका इरादा रूमानिया में ही रह जाने का था।

सौभाग्यवश, इनकी मुलाकात प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ डाक्टर लुपु और प्रोफेसर Stanculeanei से हो गई और दोनों ही सज्जनों ने डाक्टर साहब के गुणों की महिमा अनुभव की। इन दोनों सज्जनों के प्रयत्न और अपनी सैनिक सेवा के कारण समय से पहले ही इन्हें रूमानियम नागरिक के अधिकार मिल गये और इन्हें विश्वविद्यालय अस्पताल के Eye-clinic में सहायक डाक्टर का काम मिल गया। परीक्षा पास करने के बाद इन्हें रूमानियन सेना के चिकित्सा विभाग में सब लेफ्टीनेण्ट का पद मिल गया।

यह सन् १९१५ अप्रैल की बात है और अगस्त १९१६ में रूमानिया ने जर्मनी के खिलाफ युद्ध घोषणा कर दी। सन् १९१७ में आप लेफ्टीनेण्ट, १९१ में कैप्टन, १९२६ में मेजर और मई १९३४ में लेफ्टीनेण्ट कर्नल के पद पर पहुँच गये।

लेफ्टीनेण्ट कर्नल डाक्टर मूलगन्ध रूमानिया में सर्वोत्तम चक्षु विशेषज्ञ हैं। डाक्टर साहब ने रूमानियन महिला से विवाह कर लिया है और आपके दो लड़कियाँ हैं, तथा आपका पारिवारिक जीवन सुखमय है। बुखारेस्ट में आप काफ़ी प्रसिद्ध हैं और सम्मानित हैं।

आप भारत से बहुत दूर और रूमानियन नागरिक हैं फिर भी भाषा नहीं भूले हैं। मराठी के अलावा हिन्दी भी मजे में बोल लेते हैं और संस्कृत का भी अच्छा ज्ञान रखते हैं। संस्कृत तथा गीता के उद्धरण ये प्रायः दिया करते हैं। डाक्टर साहब भारत माता के सच्चे पुजारी हैं।

भारत के महात्मा

—::o::—

[महात्माजी और नेताजी का लक्ष्य एक होने के साथ-साथ जहाँ बहुत से तरीकों में समानता थी, वहाँ कुछ तरीकों में विभिन्नता थी और दो विचारा धाराओं के कारण दोनों में विरोध भी हो जाता था। 'त्रिपुरी' के अवसर पर यह विरोध अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया था। इस अवसर पर नेताजी ने जो वक्तव्य दिये वे यह प्रमाणित करते हैं कि अपने पक्ष की सत्यता के प्रति दृढ़ आवस्था रखने के साथ-साथ नेताजी महात्माजी के प्रति अगाध श्रद्धा भी रखते थे और यथा साध्य उनका आशीर्वाद लेकर चलना चाहते थे। त्रिपुरी कांग्रेस के बाद नेताजी ने महीनों इसी प्रयत्न में लगा दिये।]

कांग्रेस के सभापति के चुनाव के सम्बन्ध में महात्माजी ने जो वक्तव्य दिया है, उसे मैंने ध्यान से पढ़ा। यह जानकर मुझे दुख होता है कि महात्माजी इसे व्यक्तिगत पराजय मानते हैं। मैं सम्मान सहित उनसे अपना मतभेद प्रकट करता हूँ। मत-दाताओं को महात्मा गाँधी के पक्ष या विपक्ष में मत देने के लिये नहीं कहा गया था। परिणामस्वरूप चुनाव का परिणाम मेरी राय में, और अधिकांश व्यक्तियों की राय में उन पर असर नहीं डालता। पिछले दिनों में पत्रों में कांग्रेस के दक्षिण और वामपक्ष

के सम्बन्ध में बहुत कुछ कहा गया है। कुछ लोगों ने चुनाव के परिणाम को वामपक्षियों की विजय बतलाया है। वास्तविक तथ्य यह है कि मैंने जनता के सामने दो प्रधान प्रश्न रखे थे (१) संघ-योजना के विरुद्ध युद्ध और (२) सभापति के चुनाव के संबंध में प्रतिनिधियों को पूर्ण स्वतंत्रता। इन दोनों ने प्रतिनिधियों पर असर डाला है, हाँ, उम्मीदवारों के व्यक्तित्व ने भी कुछ असर डाला होगा। इस परिस्थित में मैं महसूस करता हूँ कि चुनाव के महत्व का विश्लेषण करने में हमें कल्पना का भरोसा नहीं करना चाहिये और जो नहीं है उसे नहीं मान लेना चाहिये। बहस के लिये मान लीजिये कि यह वामपक्ष की विजय है तो जरा सोचिये कि वामपक्ष कार्यक्रम क्या है? वामपक्षियों का भावी कार्यक्रम है राष्ट्रीय एकता और संघ योजना का निरन्तर विरोध! इसके अलावा वे प्रजातंत्रीय सिद्धान्तों के हामी हैं। वामपक्षीय कांग्रेस में फूट पैदा करने की जिम्मेदारी नहीं लेंगे। अगर फूट हुई तो वह उनकी वजह से नहीं होगी। व्यक्तिगत तौर से मेरी यह निश्चय राय है कि कांग्रेस में फूट होने का कोई कारण या युक्ति नहीं है। इसलिये मैं आशा करता हूँ कि अभी या निकट भविश्य में अल्पमत का बहुमत के साथ असहयोग करने का अवसर न आयगा। यह कहने की शायद ही जरूरत हो कि ऐसी फूट की संभावना होने पर मैं उसे न पड़ने देने की आखीर तक कोशिश करूँगा।

भविष्य में मेरे जैसा आदमी क्या नीति ग्रहण करेगा इस सम्बन्ध में बहुतों के मन में शंकाएँ हैं। मैं यह बिलकुल

साफ कर देना चाहता हूँ कि पार्लामेन्टरी और गैर पार्लामेन्टरी क्षेत्र में कांग्रेस ने जो कुछ किया है उसे मैं छिन्न भिन्न नहीं करूँगा। जहाँ तक पर्लामेन्टरी कार्य-क्रम का सम्बन्ध है हम अपनी चुनाव के घोषणा की पूर्ति की चेष्टा करेंगे और हमारे कार्य-क्रम की रफ्तार तेज होगी। इसके अलावा हम संघ-योजना का विरोध और भारत को पूर्ण स्वराज्य की ओर बढ़ाने का प्रयत्न करेंगे। हम भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के सिद्धान्तों और नीति के अनुसार का करेंगे। यह ठीक है कि महात्माजी से मेरा सार्वजनिक प्रश्नों पर मतभेद हुआ है पर उनके प्रति श्रद्धा में मैं किसी से कम नहीं हूँ। मै नहीं जानता महात्माजी की मेरे बारे में क्या राय है, मगर उनकी जो भी राय हो, मेरा यह हमेशा लक्ष्य और उद्देश्य रहेगा कि मैं उनका विश्वास प्राप्त कर सकू क्योंकि यह मेरे लिये दुखद होगा कि औरों का विश्वास प्राप्त करने में सफल होने पर भी मैं भारत के सर्वश्रेष्ठ पुरुष का विश्वास न प्राप्त कर सका।

नोट—५ फरवरी १९३९ का वक्तव्य।

संघर्ष

—::o::—

मैंने सोचा था, कांग्रेस सभापति का चुनाव हो जाने के बाद गर्मागर्म वातावरण में जो वक्तव्य और प्रति वक्तव्य निकाले गये थे भुला दिये जायँगे और हम काम में लग जायेंगे। लेकिन दुर्भाग्यवश ऐसा नहीं हुआ। कुछ पत्रों ने वाद-विवाद चला ही रक्खा है और वह भी विशेष अड़चन नहीं देता। किन्तु ?२ फरवरी को पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने वर्धा से जो वक्तव्य प्रचारित किया है उससे विवाद नया हो गया। मेरे खिलाफ कुछ आरोप लगाये गये हैं, जिनका मुझे जवाब देना होगा, क्योंकि पण्डितजी के वक्तव्य की उपेक्षा नहीं की जा सकती। मेरा स्वास्थ्य ठीक होता तो मैं बहुत पहले ही जवाब दे चुका होता, जो भी हो मेरा सभापति के भाषण के पहले, मेरे जवाब आना ही चाहिये।

चुनाव के पहले मैंने तीन वक्तव्य प्रचारित किये थे। पहला २२ फरवरी को मौलाना आजाद के वक्तव्य के उत्तर में, दूसरा २५ को सरदार पटेल के वक्तव्य के उत्तर में, तीसरा डाक्टर पट्टाभीसीता रमैया के वक्तव्य के उत्तर में, जो एक तरह से चुनाव निवेदन के रूप में था।

यह स्मरण रखना चाहिये कि डाक्टर साहब को चुनने की

जो अपील सरदार पटेल आदि ने की थी, वह कांग्रेस कार्य-कारिणी के सदस्यों की हैसियत से की गई थी। सरदार पटेल के वक्तव्य से मालूम होता है कि उन्होंने अन्य सज्जनों के साथ बारदोली में एक कमेटी की और कांग्रेस सभापति की अनुपस्थिति और गैर जानकारी में डाक्टर पट्टाभी के समर्थन का निश्चय किया। यही नहीं उन्होंने डाक्टर साहब के समर्थन और मेरे विरोध में महात्माजी के नाम का उपयोग करने में कोई कोर कसर उठा नहीं रक्खी।

सरदार पटेल ने दुनिया को बतलाया कि मेरा चुनाव देश के लिये हानिकारक होगा। इससे स्पष्ट है कि चुनाव प्रतियोगिता में मेरे खिलाफ कार्यकारिणी के अधिकांश प्रतिष्ठित सदस्य थे। हर शख्स मुझसे सहमत होगा कि कार्यकारिणी के सदस्यों ने मेरे साथ बहुत ओछा व्यवहार किया और इससे मुझे शिकायत हो सकती है। फिर भी मैंने अभी तक कोई शिकायत नहीं की, क्यों कि मेरा विश्वास था कि हमें हर चुनाव के नतीजे को खुले दिल से स्वीकार कर लेना चाहिये। मैंने अपने पहले वक्तव्य में कह दिया था कि अगर प्रतिनिधियों का बहुमत डाक्टर साहब के पक्ष में होगा तो मैं उसे मान लूंगा।

अब मैं अपने विरुद्ध लगाये गये अभियोगों का जवाब दे दूं जिनकी पुनरावृत्ति पंडित नेहरू ने की है कि मैंने कार्यकारिणी के कुछ सदस्यों की वास्तविक हैसियत के सम्बन्ध में ही सवाल उठाया था। किसी तरह का निर्णय करने के पहले जनता को मेरे वक्तव्य फिर एक बार पढ़ने चाहिये। मैंने किसी कांग्रेस नेता

के विरुद्ध कोई आरोप नहीं लगाया, चाहे वे कार्यकारिणी के सदस्य हों या न हों। २५ जनवरी के वक्तव्य में मैंने कहा है कि यह विश्वास किया जाता है कि अगले साल संघ-योजना के सम्बन्ध में कांग्रेस और ब्रिटिश सरकार में समझौता होने की आशा है। यह विश्वास किसने फैलाया यह जानने के लिये जनता में जाकर उससे बात करना ही पर्याप्त है। दूसरे वक्तव्य में मैंने कहा है; गोकि संघ के सम्बन्ध में कांग्रेस का प्रस्ताव समझौता न कर विरोध करने का है लेकिन वास्तविक तथ्य यह है कि कुछ कांग्रेसी नेता जनता में और आपसी बात-चीत में कुछ शर्तों के साथ संघ-योजना के स्वीकार करने की वकालत करते हैं। इस प्रकार की कार्यवाहियों की निन्दा करने की दक्षिण पंथी नेताओं ने जरा भी इच्छा जाहिर नहीं की। परिस्थिति की वास्तविकता से आँखें मूँद लेने से कोई फायदा नहीं है। क्या कोई भी इस विश्वास को चुनौती दे सकता है कि कांग्रेस के दक्षिण पंथी नेताओं और ब्रिटिश सरकार में अगले वर्ष में सङ्घ-योजना के सम्बन्ध में समझौता होगा। यह विश्वास बिलकुल भ्रान्त हो सकता है, लेकिन कोई इसके मौजूद होने से इनकार नहीं कर सकता। यह भी विश्वास किया जाता है कि सङ्घ-मंत्रि-मण्डल के मंत्रियों की फेहरिस्त भी तैयार हो गई है। इस परिस्थिति में यह स्वाभाविक है कि कांग्रेस का वामपक्ष चाहे कि सभापति कोई सङ्घ-योजना-विरोधी हो।

जनवरी २८ के वक्तव्य में मैंने कहा था, अगर हम कांग्रेस में एकता और सङ्गठन चाहते हैं तो यह आवश्यक है कि कांग्रेस

का सभापति दोनों पक्षों का विश्वास पात्र हो। पण्डित जवाहर-लाल इस कार्य को बहुत अच्छी तरह कर सकते हैं। और मैं भी कुछ कम रूप में ऐसा करने में समर्थ हुआ, यह कह सकता हूँ। इसी कारण अन्य कांग्रेसियों के साथ मैंने कहा कि सभापति ऐसा हो जो दिल से सङ्घ-योजना-विरोधी हो और दक्षिण ही नहीं वामपक्ष का भी विश्वास पात्र हो। मैं तो संयोगवश उम्मीदवार हूँ क्योंकि वामपक्ष से और कोई आगे नहीं आया, यह सङ्घर्ष भी दूर किया जा सकता, अगर दक्षिण पक्ष ऐसे सभापति को स्वीकार कर ले जो वामपक्ष का विश्वास भाजन हो।

चुनाव के पहले मैंने जो वक्तव्य दिये थे उन्हें मैंने अच्छी तरह देखा और मुझे कहीं भी किसी कांग्रेसी नेता के खिलाफ कोई अभियोग नहीं मिला, चाहे वह कार्यकारिणी का मेम्बर हो या न हो। जनता जो कहती या सोचती है, मैंने सिर्फ उसे व्यक्त किया है। कुछ तथ्यों ने जनता के सन्देह को गहरा कर दिया है, जैसे लार्ड लोथियन ने एक दफा पूना में कहा था कि सङ्घ-योजना सम्बन्धी पण्डित नेहरू के रुख से सब कांग्रेसी नेता सहमत नहीं हैं। जनता के आदमी होने से अगर जनता गलती से भी जो कहती है या सोचती है, उसकी उपेक्षा नहीं कर सकते। जनता का मन प्रतिबिम्ब करने में अत्युक्ति नहीं करता। बल्कि सङ्घ-योजना के विरोध में बोलते समय लोगों ने मेरे मुँह पर ताने कसे हैं और कहा है कि मैं कल्पना लोक में हूँ और प्रान्तों में मन्त्रिपद ग्रहण के बाद सङ्घ-योजना भी स्वीकार कर लूँगा। इन परिस्थितियों में मेरा विश्वास है कि सङ्घ-

योजना विरोधी कांग्रेस सभापति होने से मेरी तरफ से जनता का दिमाग साफ हो जायगा जो मङ्घ-योजना के खिलाफ देशव्यापी आन्दोलन चला सकेगा।

मैं पंडित नेहरू द्वारा लगाये गये आरोपों का जिक्र करता हूँ। वे कहते हैं, वे मेरे फिर से चुने जाने के खिलाफ हैं। मेरे बम्बई के कुछ मित्रों ने बतलाया कि अगर मैं पिछले साल की तरह कांग्रेस सभापतित्व के लिये खड़ा होऊं तो पण्डित जी विरोध करेंगे किन्तु अगर मैं वामपक्षियों की तरफ से खड़ा होऊँ तो उन्हें कोई आपत्ति न होगी। मैं नहीं कह सकता कि यह सूचना ठीक है क्या, पण्डितजी इस पर प्रकाश डाल सकते हैं?

पण्डित जी ने कहा है कि कांग्रेस के बड़े नेताओं में सन्देह और परस्पर अविश्वास के वातावरण में कांग्रेस का काम चलाना बहुत अनुचित होगा। १३ जनवरी को जब कार्यकारिणी का बैठक हुई थी, जहाँ तक मैं जानता हूँ ऐसा वातारण नहीं था। सच यह है कि अन्य सदस्यों के साथ मेरा सम्बन्ध बहुत अच्छा था। मैंने सुना है कि अपने अध्यक्ष काल में ऊपरी वातावरण के कारण पण्डित जी इस्तीफा देने की बात सोच चुके थे। पण्डित जी इस पर प्रकाश डाल सकते हैं। पण्डित जी द्वारा वाम और दक्षिण का अर्थ पूछा जाना विस्मयकर है, क्या पण्डित जी ने हरिपुरा में अपनी रिपोर्ट पेश नहीं की थी जिसमें शिकायत की गई थी कि दक्षिण पंथियों द्वारा वामपक्षी दबाये जाते हैं। उनका यह अभियोग भी आश्चर्यजनक है कि मेरी इच्छा पर कार्यकारिणी का काम नहीं हुआ। मैंने कभी

नहीं कहा कि कार्य कारिणी का काम न हो। जब आचार्य कृपलानी ने मुझे लिखा था तब मैंने कहा था कि कार्यकारिणी को साधारण कार्य वाही से रोकने की कोई बात नहीं है। कार्य कारिणी स्थगित करने के सम्बन्ध में भी मैंने अपने तार में सरदार पटेल को लिखा था कि वे साथियों से सलाह कर, राय तार द्वारा सूचित करें। मेरा सुझाव अन्तिम निर्णय के रूप में नहीं था, मैंने २१ फरवरी को महात्मा जी और सरदार पटेल को जो तार भेजे वे इस प्रकार थे,।

महात्मा गांधी, वर्धा। रात का भेजा डाक्टर का तार आज देखा। वर्धा आने के लिये रोग और डाक्टर से लड़ रहा हूँ। लेकिन अफसोस अभी यात्रा नहीं कर सकता। साधारण कार्य कारिणी का अधिवेशन मेरे बिना भी हो सकता था, लेकिन शायद अब न हो सके इसलिये कांग्रेस के पहिले कार्य कारिणी की बैठक हो यही प्रकारान्तर है त्रिपुरी में आपकी उपस्थित अनिवार्य है। कृपया हाल चाल लिखिये यह तार सरदार जी को दिखला दीजियेगा। सुभाष,

'सरदार पटेल, वर्धा। कृपया मेरा तार महात्मा जी को दे दीजिये, दुख पूर्वक सूचित करता हूँ कार्य कारिणी कांग्रेस तक अवश्य स्थगित होना चाहिये, कृपया साथियों से बातचीत कर राय तार द्वारा भेजिये।'

पण्डित जी का सबसे आश्चर्यजनक यह अभियोग है कि मेरे अध्यक्ष काल में कांग्रेस के झगड़े पहले की भांति न निपटाये जाकर, एक ... ऊपर के नेता द्वारा उनका फैसला किये जाने की

मनोवृत्ति देखी जाती है। १४ फरवरी के पत्र में पण्डित जी ने लिखा है, दर असल आप निर्देशक कांग्रेस सभापति की पपेक्षा कांग्रेस स्वीकार की तरह काम कर रहे हैं। मैं नहीं जानता इस अभियोग के समय पण्डित जी के मन में क्या था ? एक मित्र ने सुझाया कि वे दिल्ली प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी की बात सोच रहे थे। अगर यह बात है तो मैं कहना चाहता हूँ कि मैंने जो कुछ किया करना ही पड़ता है।

पण्डित जी का यह कथन तो बहुत ही विचित्र है कि वर्षों तक कांग्रेस में रहते हुए भी वे किसी खास ग्रूप के घनिष्ट सम्पर्क में नहीं रहे। ताज्जुब है एक पक्का सोशलिस्ट यह कैसे कह सकता है। क्या अपनी पार्टी बनाना ही अपराध है ! दूसरों की भी तो गांधी सेवा सङ्घ के नाम से पार्टी है। शान्ति निकेतन और प्रयाग में मैंने पण्डित जी से जो अनुरोध किया था कि वे ऐसे मौके पर हिचकिचाहट छोड़कर देश का नेतृत्व करें, मैं पण्डित जी को अपने सहयोग का विश्वास दिलाता हूँ।

अपना वक्तव्य शेष करने के पहले हमारे अन्दर जो मानसिक भ्रान्ति पैदा हो गयी है, मैं उसका उल्लेख करना चाहता हूँ। यह धारणा पैदा करने की चेष्टा की जा रही है कि हमारा गांधी जी के आदर्श और टेकनिक में विश्वास नहीं है। कांग्रेस की नीति में गांधीवाद होता है, इसका प्रधान सूत्र सत्य और अहिंसा है और माध्यम अहिंसात्मक असहयोग है। हमारे आधारभूत सिद्धान्त और तरीके में कोई भेद नहीं हो सकता। इस मिथ्या मामले पर हमारे अन्दर भेद नहीं होना चाहिये। हाँ गांधीवाद

में अगर महात्माजी के सब व्यक्तिगत विश्वास, उनका भोजन, वसन और रहने का ढङ्ग इत्यादि भी शामिल कर लिया जाय तो मुझे शक है कि महात्मा जी के अनुयायियों में ही कितने इस कसौटी पर पूरे पूरे उतरेंगे ? मैं फिर दोहरा देना चाहता हूँ कि महात्मा जी के प्रतिश्रद्धा का अर्थ उनकी इच्छा और विचारों को अधीनता स्वीकार करना नहीं है। महात्मा जी भी नहीं चाहते कि कोई अपनी आत्मा की आवाज के विरुद्ध आचरण करें। मैं अपने विश्वास के अनुसार आचरण करता हुआ उनका बिश्वास पाने की चेष्टा करता रहूँगा, क्योंकि मैंने अक्सर कहा है कि महात्माजी भारत के सर्वश्रेष्ठ महा पुरुष हैं।

नोट—२ मार्च १९२९ का वक्तव्य।

गांधीवाद की परीक्षा

—::०::—

बुधवार, ३ अप्रेल १९३५ को जेनेवा का प्रातःकाल बहुत सुंदर दिखता था। जेनेवा की दर्शनीय झील में शानदार भवनों का प्रतिबिम्ब पड़ा रहा था। जब से मैं यहाँ आया भारत और उसक संस्कृति के प्रशंसक महा पुरुष रोमाँरोला से मिलना चाहता था। सन १९३३ और १९३४ में इनसे मिलने का मेरा प्रयत्न सफल नहीं हुआ। तरह तरह की आशा और अशंकाएँ मेरे दिल में उठ रही थीं। मैं सोच रहा था, भारत के इतिहास के पृष्ठों पर जो लिखा है, क्या वे महा पुरुष उसे पढ़ सकेंगे ?

उनकी २२ फरवरी की चिट्ठी के ये वाक्य मुझे उत्साहित कर रहे थे"'But we men of thought must each of us fight against the temptation that befalls us in moments of fatigue and unsettledness, of repairing to a world beyond the battle called eilther God or Art or Freedom of the Sprit or those distant regions of the mystice soul. For fight we must, as our duties lies on this side of the ocean—on the battle-ground of men.

पथ में दो घण्टों तक हमने स्विटजरलैण्ड के मनोहर प्राकृ-

तिक दृश्यों का आनन्द उपभोग किया आखिर हमारी कार फ्रेंच महात्मा के भवन Villa olga के सामने रुकी।

मैंने दरवाजे पर लगा हुआ घण्टी का बटन दबाया और श्रीमती रोमांरोला ने दरवाजा खोला। इसके बाद ही दूसरा दरवाजा खुला और जिन महात्मा के दर्शनों के लिये मैं व्याकुल था, उनके दर्शन हुए।

कुशल क्षेम और भारत तथा भारतीय मित्रों के हाल चाल के बाद हमारी बातचीत गंभीर विषयों पर होने लगी। वे अंग्रेजी और मैं फ्रेंच बोलने से लाचार था। सो हमने श्रीमती रोमारोलां और कुमारी रोलां को दुभाषिया बनाया। मैं उनसे भारत की स्थिति के सम्बंध में बातचीत करना चाहता था और साथ ही संसार की पूर्ण समस्याओं के सम्बन्ध में उनके विचार जानना चाहता था। पहले मुझे भारत की अवस्था का वर्णन करने के लिये बहुत बोलना पड़ा। मैंने अपनी लम्बी भूमिका के बाद जानना चाहा कि अगर कांग्रेस का संयुक्त मोर्चा टूट जाय और गांधी जी के सत्याग्रह के अननुरुप नया आन्दोलन छिड़ जाय तो आपका इस विषय में क्या रुख होगा?

मुझे बहुत दुख और निराशा होगी अगर गान्धी जी का सत्याग्रह भारत की स्वाधीनता अर्जन में असफल हुआ। प्रथम महायुद्ध के बाद जब सारा संसार संघर्ष और घृणा से घबरा गया था, गांधी जी के सत्याग्रह ने नया प्रकाश दिया। बड़ी बड़ी आशाएं हुई और संसार में गांधी जी बहुत ऊँचे उठ गये।

मैंने कहा, लेकिन हम अपने अनुभव से इस पार्थिव जगत के

लिये गांधीजी के तरीके को बहुत ऊँचा पाते हैं। राजनैतिक नेता की हैसियत से अपने विरोधी के साथ व्यवहार में वे बहुत ही साफ हैं। गोकि भारत में अँग्रजों की स्थिति कोई नहीं चाहता था फिर भी सत्याग्रह आंदोलन से उत्पन्न असुविधा विरोधान को और अपनी उच्च सैनिक शक्ति से दबाकर वे अपनी उपस्थिति कायम रख सके हैं। अगर सत्याग्रह विफल हो गया तो क्या वे यह पसन्द करेंगे, राष्ट्रीय प्रयत्न दूसरे तरीके स्वीकार करें या वे भारतीय आन्दोलन में फिर दिलचस्पी लेना छोड़ देंगे ?

नहीं, हर हालत में आन्दोलन चालू रहना चाहिये।

लेकिन मेरे अनेक युरोपियन मित्रों ने साफ कहा है कि भारतीय स्वाधीनता संग्राम में उनकी दिलचस्पी सिर्फ गांधीजी के अहिंसात्मक प्रतिरोध के तरीके के कारण है। मोसिये रोलाँ उन मित्रों से सहमत नहीं हैं, सत्याग्रह विफल होने का उन्हें दुख होगा किन्तु अगर ऐसा हो ही जाय तो जीवन की वास्तविकता का सामना किया जाना चाहिये और दूसरे तरीकों से आन्दोलन चलाया जाना चाहिये।

उनका यह जवाब मेरे मन के अनुकूल था। ये ऐसे आदर्शवादी है, जो हवा में महल नहीं बनाते, बल्कि जमीन पर जम कर खड़े होते हैं।

फिर मैंने कहा—युरोप में कुछ लोग हैं जो कहते हैं, जैसे कि रूस में दो एक के बाद एक क्रान्तियाँ हुई, उसी प्रकार भारत में भी दो क्रान्तियाँ होंगी, मेरी राय में राजनैतिक स्वाधीनता के साथ-साथ सामाजिक और आर्थिक उत्कर्ष के लिये भी संग्राम

चलाना चाहिये। जो दल भारत की स्वाधीनता प्राप्त करेगा, वही दल सामाजिक और आर्थिक पुनर्गठन की योजना भी कार्यान्वित करेगा। आपकी क्या राय है ?

भारत की अवस्था की पूरी जानकारी न होने के कारण उन्होंने कोई निश्चत राय प्रकट नहीं की।

मैंने पूछा, यदि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के संयुक्त मोर्चे की नीति विफल हुई और और उसमें से एक ऐसा दल निकला जो किसानों और श्रमिकों के स्वार्थों का हामी हुआ तो आपका क्या रुख होगा?

आपकी राय है कि वक्त आ गया है कि आर्थिक मामलों में कांग्रेस को निश्चित रुख अख्तियार करना चाहिये। वे बोले, मैंने गान्धीजी को लिखा है कि उस मामले में अपना मत स्थिर कर लें।

कांग्रेस द्वारा किसी एक खास मतवाद स्वीकार किये जाने के सम्बन्ध में आपने कहा, दो राजनैतिक दलों या दो पीढ़ियों में से एक का पक्ष लेने का सवाल मेरे सामने नहीं है। मेरे लिये दो दलों का सवाल नहीं हैं, बल्कि सवाल—असली उद्देश्य का है और वह उद्देश्य—संसार के श्रमिकों के कल्याण का! दुर्भाग्य-वश गान्धी या कोई दूसरा दल श्रमिको के विकास के सङ्घर्ष में आ जाय या गान्धी या कोई और दल श्रमिक के हित से उदासीन हो जाय तो, मैं दलित श्रमिकों का पक्ष लूंगा ? क्योंकि न्याय और मानव कानून उनके पक्ष में है।

मुझे आश्चर्य और आनन्द हुआ। मैंने आशा नहीं की थी कि ये महान् विचारक श्रमिकों का इतना तगड़ा समर्थन करेंगे।

हमारी बात-चीत का उनके नाजुक स्वास्थ्य पर असर पड़ रहा था कि 'चाय-पान' की सूचना मिली और हम चाय पीने के लिये दूसरे कमरे में गये।

चाय पान के समय भी बात जारी रही। १॥ घण्टों में हमने बहुत सी समस्याओं पर विचार विनिमय किया। कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी और उसके गठन के प्रति आपने काफी दिलचस्पी दिखलाई। पण्डित जवाहरलाल नेहरू आदि नेताओं के बन्दी जीवन, महात्माजी के कार्य, व्याख्यान, लेखों के प्रति आपकी खासी दिलचस्पी है। उन्होंने अपनी फाइल से वह वक्तव्य निकाल कर दिखलाया, जिसमें महात्माजी ने सोशलिज्म के प्रति सहानुभूति दिखलाई है।

मैंने कहा, महात्माजी आर्थिक समस्याओं के सम्बन्ध में निश्चित रुख ग्रहण नहीं करेंगे। राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक प्रश्नों पर, वे 'सुनहरे तरीके' में विश्वास रखते हैं। नई पीढ़ीवाले उनके नेतृत्व में जो दोष देखते हैं, मैंने उनका उल्लेख किया, जैसे—विरोधी के सामने सब कुछ साफ-साफ रख देना, राजनैतिक विरोधी के सामाजिक बाहिष्कार की नीति का विरोध, ब्रिटिश सरकार के हृदय परिवर्तन की आशा आदि। हमें उनकी आलोचना या विरोध करने में कोई सन्तोष नहीं होता, जब कि हम जानते हैं कि देश की उन्होंने सर्वाधिक सेवा की है और विश्व की दृष्टि में भारत को बहुत ऊँचा उठाया है। लेकिन हम व्यक्ति की अपेक्षा देश को अधिक प्रेम करते हैं।

मैंने उनसे उनके सिद्धान्तों को सूत्ररूप में रखने का अनुरोध

किया उन्होंने बतलाया वे सिद्धान्त हैं—(१) अन्तर राष्ट्रवाद (बिना भेद भाव के सबके समानाधिकार सहित] (२) शोषित श्रमिकों के प्रति न्याय—जिसका अर्थ है, हमें ऐसे समाज की रचना का प्रयत्न करना चाहिये, जहाँ कोई शोषक या कोई शोषित नहीं हो, बल्कि सारे सम्प्रदाय के लिये सब लोग श्रमिक हों। (३) समस्त दलित जातियों के लिये स्वाधीनता (४) पुरुषों के समान महिलाओं के अधिकार। आपने कुछ का खुलासा भी किया।

हमारी बात-चीत समाप्त प्राय थी कि मैंने कहा, जो कुछ आपने आज बतलाया, उससे बहुतों को आश्चर्य होगा ! उन्होंने कहा, हाँ, मेरे मस्तिष्क में बहुत से विचारों का संघर्ष जारी है। अहिंसा भी उसका एक भाग है। मैंने अहिंसा के विरुद्ध निर्णय नहीं किया किन्तु मैंने यह निश्चिय कर लिया कि हमारी समस्त सामाजिक कार्यवाहियों का केन्द्र अहिंसा नहीं हो सकता। अहिंसा एक तरीका हो सकता है, रूप नहीं हो सकता है, फिर भी इसका प्रयोग करके देखना होगा।

हमारे तमाम प्रयत्नों का मुख्य उद्देश्य होना चाहिये, नयी समाज व्यवस्था की स्थापना जो अधिक न्याय पूर्वक और अधिक मानवीय हो।""अगर हम ऐसा न करेंगे तो समाज का नाश हो जायगा। पिछले वर्षों से मैं उन सब शक्तियों को एक करना चाहता हूँ जो उस समाज व्यवस्था के विरुद्ध हैं, जो व्यवस्था मानवता का शोषण करती है और उसे गुलाम बनाती है। युद्ध और फासिस्ज़्म के खिलाफ जो विश्व कांग्रेस हुई थी, उसमें मेरा यही प्रयत्न था। मैं अभी भी विश्वास करता हूँ कि

अहिंसा एक मजबूत मगर गुप्त कान्तिकारी शक्ति है, जिसका प्रयोग हो सकता है और होना चाहिये।

युरोप के भावी युद्ध के सम्बन्ध में मैंने कहा, For-suppressed peoples and Nationalities war is not an unneed evil उन्होंने फौरन जवाब दिया—But for the Europe war will. be the greatest disaster It may even mean the end of civilization.

महान् विचारक से विदा लेते समय मैंने अपनी कृतज्ञता प्रगट की। मुझे विश्वास हो गया कि ये महान विचारक और कलाकर भारत और उसकी स्वतंत्रता के हामी रहेंगे, निकट भविष्य में जो भी घटना घटे या वह जो भी कार्य अपनाए।

नोट—'माडर्नरिव्यू' सितम्बर १९३५।

स्वराज्य की ओर अगला कदम

—::o::—
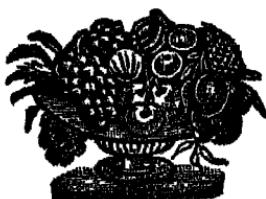
कामरेड चेयरमैन, प्रतिनिधि बहनों और भाइयों! भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का दुबारा सभापति चुनकर आपने मेरा जो सम्मान किया है, इसके लिये मैं हृदय से धन्यवाद देता हूँ। त्रिपुरी में आपने जो मेरा स्वागत किया उसके लिये भी मैं धन्यवाद देता हूँ।

मित्रो मैं महात्मा जी का राजकोट मिसन की सफलता और महात्मा जी के उपवास की समाप्ति पर आपके आनन्द की प्रतिध्वनि करता हूँ। समस्त देश इस समय आदन्दित है।

बन्धुओं! आपको मालूम है कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का अतिथि होकर वफदिस्ट प्रतिनिधि मंडल हमारे बीच में है। उनके हार्दिक स्वागत में आप अवश्य ही मेरे साथ सम्मिलित होंगे। हमें बहुत आनन्द है कि प्रतिनिधि मण्डल ने हमारा निमंत्रण स्वीकार कर यहाँ तक आने का कष्ट किया। वफदिस्ट पार्टी के प्रधान और प्रमुख व्यक्तियों के साथ व्यक्तिगत परिचय होने के कारण मुझे उनके आगमन से बहुत आनन्द हुआ है मैं एक बार फिर अपने देशवासियों की तरफ से उनका हार्दिक स्वागत करता हूँ। फरवरी १९३८ में हरिपुरा में मिलने के बाद अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में बहुत महत्व पूर्ण घटनाएँ घटी हैं, उनमें

सबसे महत्व पूर्ण सितम्बर १९३८ का म्युनिक पैक्ट है जिसके अर्थ हैं पश्चिम शक्ति ग्रेटब्रिटेन और फ्राँस का नाजी जर्मनी को आत्म-समर्पण।

इसके परिणाम स्वरूप युरोप में फ्राँस प्रमुख शक्ति नहीं रह गया, बिना एक फायर किये ही सूत्र जर्मनी के हाथ में चला गया। हाल में ही स्पेन में रिपब्लिकन सरकार के क्रमिक पतन ने फासिस्ट इटली और नाजी जर्मनी की शक्ति और प्रतिष्ठा बढ़ा दी। तथा कथित प्रजातंत्रवादी शक्तियाँ—फ्राँस और ग्रेट ब्रिटेन ने फिलहाल युरोप की राजनीति से रूस का सफाया करने के लिये इटली और जर्मनी के साथ मिलकर षड्यन्त्र रचा है। लेकिन यह अवस्था कब तक रहेगी ? और रूस को बेइज्जत करने की चेष्टा में फ्राँस और ग्रेट ब्रिटेन ने क्या पाया ?

मित्रों ! यह साल, अन्य वर्षों की अपेक्षा असाधारण लगता है। राष्ट्रीय कांग्रेस के सभापति का चुनाव इस बार पुराने ढंग से नहीं हुआ, चुनाव के बाद सनसनी खेज परिस्थित उत्पन्न हो गई है। कार्यकारिणी के १५ सदस्यों में १२ ने (जिन में सरदार पटेल मौलाना आजाद, राजेन्द्र बाबू आदि हैं) इस्तीफे दे दिये। कार्य-कारिणी के एक अन्य प्रतिष्ठित और प्रधान सदस्य पण्डित जवाहर लाल जी नेहरू ने गोकि बाकायदा इस्तीफा नहीं दिया मगर एक वक्तव्य प्रकाशित किया है जिससे हर एक को विश्वास होता है कि उन्होंने भी इस्तीफा दे दिया। त्रिपुरी कांग्रेस के अव-सर पर राजकोट की घटनाओं ने महात्मा जी को आमरण अन-शन करने को बाध्य किया और कांग्रेस का सभापति भी

बीमार आया। इसलिये सभापति का अभिभाषण लम्बाई में पहले भाषणों जैसा नहो तो ठीक है।

इसमें कोई शक नहीं कि युरोप और एशिया में जो घटनाएँ घटीं हैं उनके फलस्वरूप ब्रिटिश और फ्रेंच सम्राज्यवाद की प्रतिष्ठा और शक्ति काफी कम हो गई।

अपनी बीमारी की वजह से मैं अपने देश की राजनीति के कुछ महत्व पूर्ण समस्याओं पर ही प्रकाश डालूंगा। सबसे पहले मैं यह कहना चाहता हूँ कि स्वराज्य का सवाल उठाने और अल्टीमेटम के रूप में राष्ट्रीय माँग ब्रिटिश सरकार के सामने रखने का समय आ गया है। वह समय बीत गया कि हम निष्क्रिय रुख ग्रहण करते और संघ योजना लादे जाने की प्रतीक्षा करते। अब यह समस्या नहीं है कि कब हमारे ऊपर शासन योजना लादी जायगी। सवाल यह है कि युरोप में शांति स्थापित होने तक संघयोजना ताक पर रख दी गयी तो हमें क्या करना चाहिये, इसमें जरा भी शक नहीं कि युरोप में शान्ति स्थापित होते ही, चाहे चारों बड़ी शक्तियों के समझौते से हो' चाहे अन्य किसी तरह से ग्रेट ब्रिटेन कड़ी सामाज्यनीति ग्रहण करेगा। वह पेलेस्टाइन में यहूदियों के खिलाफ अरबों को सन्तुष्ट करना चाहता है, क्योंकि वह अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में अपनी स्थिति अरक्षित देखता है। इसलिये मेरी राय है कि हमें अपनी राष्ट्रीय माँग अल्टीमेटम के रूप में ब्रिटिश सरकार के सामने रखनी चाहये और उसमें कुछ समय की पाबन्दी लगा देनी चाहिये। अगर इस अवधि में जबाब न मिले या असन्तोष जनक जबाब

मिले तो हमें अपनी राष्ट्रीय माँग मनवाने के लिये उन शक्तियों का प्रयोग करना चाहिये, जो हमारे पास हैं!

हमारे पास आज सत्याग्रह या सविनय कानून भङ्ग आन्दोलन की शक्ति है। ब्रिटिश सरकार इस समय इस स्थिति में नहीं है कि ज्यादा समय तक अखिल भारतीय सत्याग्रह आन्दोलन जैसे प्रधान सङ्घर्ष का सामना कर सके। मुझे यह देखकर बहुत दुख होता है कि कांग्रेस में ऐसे निराशावादी भी हैं जो सोचते हैं ब्रिटिश साम्राज्यवाद पर प्रहार करने का वक्त नहीं आया। लेकिन परिस्थिति को वास्तववादी की हैसियत से देखने के बाद मैं निराशा का कोई कारण नहीं देखता। आठ प्रान्तों में कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलों के कायम होने से कांग्रेस का सम्मान और शक्ति बढ़ी है। ब्रिटिश भारत में जन-आन्दोलन काफी आगे बढ़ गया है। उसके साथ ही देशी रियासतों में भी अभूतपूर्व जागरण हो गया है। स्वराज्य की ओर आखिरी कदम बढ़ाने के लिये और हम कौन सा स्वर्ण सुयोग चाहते हैं? खासकर जब कि अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति हमारे अनुकूल है। वास्तववादी की हैसियत से मैं कह सकता हूँ कि परिस्थिति हमारे इतनी अनुकूल है कि कोई अधिक से अधिक आशा कर सकता है। बशर्ते कि हम अपने मतभेद भुला दें, अपने तमाम साधन एकत्र, अपनी तमाम शक्ति आन्दोलन में लगा दें, हम परिस्थिति से अधिकाधिक लाभ उठा सकते हैं। राष्ट्र के जीवन में यदा-कदा आनेवाले स्वर्ण अवसर को क्या हम खोदेंगे?

मैंने भारत और देशी रियासतों के जागरण का उल्लेख

किया है। मेरी राय है कि हमें रियासतों के प्रति अपने रुख में परिवर्तन करना चाहिये। हरिपुरा कांग्रेस का प्रस्ताव रियासतों कांग्रेस के नाम पर इनकी कुछ खास कार्यवाहियों पर रुकावट डालना है। इसके अनुसार रियासतों में कांग्रेस के नाम से न तो पार्ला-मेण्टरी कार्य किया जा सकता है और न रियासतों के खिलाफ आन्दोलन किया जा सकता है। लेकिन हरिपुरा के बाद बहुत कुछ हो गया। स्टेट के अधिकारियों और सर्वोच्च श क्त में कई स्थानों में अनबन हो गया है। मैं जानता हूँ इस समय हमारा कर्त्तव्य क्या है। इस प्रतिबन्ध के हटाने के साथ ही कार्य-कारिणी को बाकायदे रियासतों में नागरिक स्वतंत्रता और उत्तर दायित्व पूर्ण शासन के लिये जन-आन्दोलन का निर्देश करना चाहिये। अभी तक जो काम हुआ, वह खुदरा काम कहा जा सकता है इसके पीछे शायद ही कोई योजना या प्रणाली पर आधारित रहा हो। लेकिन समय आगया है कि कार्य कारिणी को उत्तर दायित्व ग्रहण करना चाहिये। और इस उत्तरदायित्व को कायदे से निभाना चाहिये अगर आवश्यक हो तो इस कार्य के लिये एक खास सब कमेटी नियुक्त की जानी चाहिये। महात्मा गाँधी के सहयोग और निर्देश तथा अखिल भारतीय स्टेट्स पिपुल्स कान्फ्रेंस के सहयोग का पूर्ण उपयोग करना चाहिये।

मैंने स्वराज्य की ओर कदम बढ़ाने के सम्बन्ध में कहा है इसके लिये पर्याप्त तैयारी की जरूरत है। शक्ति के मोह के कारण हमारे अन्दर जो अनाचार या कमजोरी पैदा हो गयी है उसे हमें निर्ममता पूर्वक दूर करना चाहिये। दूसरे हमें देश के समस्त

साम्राज्य विरोधी संगठनों के सहयोग से काम करना चाहिये, खासकर किसान और ट्रेड युनियन सङ्घों के सहयोग में। देश के सब क्रान्तिकारी सङ्घों को सामञ्जस्य और सहयोग के साथ काम करना चाहिये। समस्त साम्राज्य विरोधी सङ्गठनों का प्रयत्न ब्रिटिश साम्राज्यवाद पर अन्तिम प्रहार की ओर होना चाहिये।

मित्रो! कांग्रेस पर बादल छाये हैं, विरोध दिख रहा है, जिसके फलस्वरूप हमारे बहुत से मित्र निराश और हतोत्साह हो रहे हैं, लेकिन मैं पक्का आशावादी हूँ। आप जो बादल देख रहे हैं, वे जा रहे हैं। मेरा अपने देश वासियों की देश भक्ति में विश्वास है मुझे निश्चय है कि हम शीघ्र ही अपनी मुश्किलों पर विजय पालेंगे और एकता कायम कर सकेंगे। सन् १९२२ में गया कांग्रेस में ऐसी ही परिस्थित पैदा हो गयी थी और उसके बाद देशबन्धु दास और पण्डित मोतीलाल नेहरू ने स्वाराज्य पार्टी की स्थापना की। मेरी प्रार्थना है कि मेरे गुरुदेव पण्डित मोतीलाल जी नेहरू और अन्य देश भक्तों की आत्माएँ हमारी सहायक हों और महात्माजी कांग्रेस को इस संकट काल से निकाल ले जाय वन्देमातरम्।

नोट—त्रिपुरी कांग्रेस के सभापति की हैसियत से दिया हुआ भाषण।

तरुणों से

—::o::—

भाइयो और बहनों !

तरुण परिषद् का सभापति बनाकर आपने जो प्रेम प्रदर्शित किया है उसके लिये मैं हार्दिक कृतज्ञता प्रगट करता हूँ। आज पृथ्वी के एक हिस्से से दूसरे हिस्से तक तरुण समाज में जागृति की लहरें दौड़ रही हैं। इसी विश्वव्यापी जागरण के फलस्वरूप हम भी यहाँ एकत्र हो जीवन समस्या का समाधान करने के लिये व्रती हो रहे हैं।

प्रायः २।। वर्ष बाद जब मैं जेल की दीवार से बाहर आया, तब देश की दशा देखकर सबसे पहले यही मन में आया कि अनेक दुर्घटना और अभाग्यवश हम बड़ी बातें सोचने और दूर की वस्तु देखने की क्षमता खो बैठे। जिसके फलस्वरूप हमारे समाज में ओछे विचार, क्षुद्र स्वार्थ और दलबन्दी का जोर हो गया, हम झूठ को सच मानकर असल को छोड़कर छाया के पीछे दौड़ रहे हैं। किन्तु प्रसन्नता की बात है कि हमारा यह सामयिक मोह भंग हो रहा है, हम फिर परिस्थित को उसके असली रूप में देखने लगे हैं। युवकों में फिर आत्म विश्वास बढ़ रहा है। वे समझने लगे हैं कि उन पर कितना महान् उत्तरदायित्व है। वे अनुभव करने लगे हैं कि भावी समाज बनाने की जिम्मेदारी

उन्हीं पर है। यही नहीं बल्कि हमारे युवक आज अपने अन्दर असीम शक्ति पाते हैं। सब देशों में सब युगो में मृत्युञ्जयी युवकों ने, युवक शक्ति ने स्वतन्त्रता के इतिहास की रचना की है, वैसे ही हमारा तरुण समाज भी अपनी हड्डियों से वज्र बनाने में लगा हुआ है।

राष्ट्रीय समस्या के सम्बन्ध में मुझे बहुत कुछ कहना है, वह एक भाषण में पूरा नहीं हो सकता, इसीलिये मैं ऐसी चेष्टा नहीं करता। हम एक दिन स्वाधीन थे। धर्म कर्म, काव्य साहित्य, शिल्प वाणिज्य, युद्ध विग्रह में भारतीय एक दिन दुनिया में सबसे आगे थे। परिवर्तन शील चाल चलन के कारण हमारा वह गौरव चला गया। आज हम सिर्फ पराधीन ही नहीं है बल्कि विदेशी सभ्यता के सम्मोहन अस्त्र से हम अपना सर्वस्व खो रहे हैं। तब भी प्रसन्नता की बात यही है कि हमारा अज्ञानान्धकार दूर हो रहा है, हमारा राष्ट्र फिर जाग रहा है, पतन के बाद सब जातियों और सब सभ्यताओं का पुनरुत्थान होता है यह बात नहीं है। किन्तु भगवान की कृपा से हमारे देश के पतन के बाद उसका पुनरुत्थान हो रहा है। हमारा यह राष्ट्रीय आन्दोलन बाहरी चाँचल्य मात्र नहीं है, यही राष्ट्रीय आत्मका का जागरण और उसकी अभिव्यक्ति है। मेरी यह बात सच है इसका प्रमाण यही है कि हमारे देश में नव जागरण के साथ-साथ जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में नवीन सृष्टि होने लगी है। सृष्टि जीवन का लक्षण है। काव्य साहित्य, शिल्प वाणिज्य, धर्म कर्म कला विज्ञान, सब में भारतीय नवीनता का परिचय दे रहे हैं,

इसी से प्रमाणित होता है कि भारत की आत्मा जागी है। हमारी आँखों के सामने ही भारतीय सभ्यता का नवीन अध्याय रचा जा रहा है।

वैज्ञानिक कहते हैं किसी सभ्यता का पतन होने पर उसकी राष्ट्रीय सृष्टि शक्ति लोप होती जाती है तथा जाति की विचार धारा और कार्य प्रणाली परम्परा के अनुकरण पर चलने लगती है। व्यक्ति और जाति के जीवन के Adventure और enterprise की स्पृहा कम हो जाती है। कुछ सीमित बन्धनों में घूमकर वह अपना जीवन धन्य मनाती है।

हमारे राष्ट्रीय अधः पतन के अनेक कारण हैं, उनमें एक यह भी है कि हमारे देश के व्यक्ति और जाति के जीवन में प्रेरणा का ह्रास हो गया है। हम बाध्य हुए बिना, चाबुक खाये बिना कोई काम नहीं करना चाहते। वर्तमान की उपेक्षा कर भविष्य के लिये श्रम करने की जरुरत वर्तमान दैन्य को तुच्छ मानकर आदर्श की प्रेरणा से अक्सर जीवन को हँसते हँसते देने की ज़रूरत पड़ती है। किन्तु कार्यतः हम इसको स्वीकार करना नहीं चाहते। इसका कारण प्रेरणा ही है। व्यक्ति और जाति की इच्छा क्रमशः क्षीण हो गई है। जब तक हम व्यक्ति और जाति में प्रेरणा शक्ति न जगा सकेंगे तब तक हमसे कोई महान् कार्य सम्पन्न होना सम्भव नहीं होगा। आप निश्चय जानिये कि आदर्श की प्रेरणा से ही इच्छाशक्ति जागृत होती है। हम आदर्श भूल गये हैं इसीलिये हमारी इच्छाशक्ति इतनी क्षीण हो गयी है। वर्तमान दीनता को मिटा कर अपने जीवन में आदर्श की प्रतिष्ठा

किये बिना हमारी प्रेरणा शक्ति जाग्रत न होगी और प्रेरणा शक्ति जागे बिना विचार शक्ति और कर्म प्रचेष्टा पुनरुज्जीवित न होगी।

समाज के पुनर्गठन के लिये आज कल पाश्चात्य देशों में अनेक मत और कार्यप्रणालियाँ प्रचलित है, जैसे Socialism. state Socialism, syndicalism, philosophical Anarchism. Bolshevism. Fascism Parliamentry democracy, Aristocracy, Absolute monarchy, limited monarchy, Dictatorship आदि। वैसे तो सभी मतों में कम ज्यादा सत्य है किन्तु प्रगतिशील जगत में किसी भी मत को पूर्ण सत्य या चरम सिद्धांत मानकर ग्रहण करना युक्तिसंगत न होगा। दूसरी बात यह है कि किसी देश के किसी प्रतिष्ठान को जबरन वहाँ से लाकर अपने देश में प्रतिष्ठित करने में कोई सफल नहीं हो सकता। प्रत्येक राष्ट्रीय प्रतिष्ठानकी उत्पत्ति उस देश के इतिहास की धारा, भाव और आदर्श तथा नित्य नैमित्तिक कार्यों के प्रयोजन से होती है। इसलिये किसी प्रतिष्ठान की प्रतिष्ठा करते समय अपने देश की इतिहास परम्परा, पारिपार्श्विक और वर्तमान परिस्थितिको अग्राह्य करना सम्भव और समीचीन नहीं होता।

आप जानते हैं भारत में Marxianism की तरंग आ पहुँची है। इसी तरंग के आघात से कोई-कोई चञ्चल हो उठा है। अनेक विश्वास करने लगे हैं कि Karl Marx के मत को पूर्ण रूप से ग्रहण करने से हमारा देश सुख समृद्धि से भर उठेगा तथा

उदाहरण स्वरूप रूस की तरफ अँगुली उठाते हैं। किन्तु मुमकिन है आप जानते होंगे कि रूस में जो Bolshevism है उनके साथ Marxiam Socialism का जितना मेल है, भेद उससे कम नहीं है। रूस ने Marxiam मतवाद ग्रहण करने के समय इतिहास की परम्परा, जातीय आदर्श, वर्तमान आबहवा और नित्य नैमित्तिक जीवन का प्रयोजन भुला नहीं दिया। आज यदि Karl Marx जीवित होते तो वे रूस की वर्तमान अवस्था देख कर सन्तुष्ट होते इसमें शक है। क्योंकि मेरा खयाल है कि Karl Marx चाहते थे कि उनका सामाजिक आदर्श एक ही रूप में बिना रूपांतरित हुए सब देशों में प्रतिष्ठित हो। इन सब बातों के कहने का मतलब यही है कि मैं साफ कहना चाहता हूँ कि मैं किसी दूसरे देश के मत या प्रतिष्ठान के अन्धानुकरण का विरोधी हूँ।

और बात एक कहना निहायत जरूरी है। पराधीन देश के लिये यदि किसी ism को पूर्ण रूप से ग्रहण करना हो तो वह— Nationalism है। जब तक हम स्वधीन नहीं होते तब तक हम सामाजिक या आर्थिक (social and Economical) पुनर्गठन का अवसर या सुयोग नहीं पा सकते, यह बात ध्रुवसत्य है। इस लिये हमें अपनी समवेत चेष्टा से स्वाधीनता प्राप्त करनी होगी। देश, व्यक्ति विशेष या सम्प्रदाय विशेष की सम्पत्ति नहीं है, इसलिये हिन्दू, मुसलमान, श्रमिक, धनिक किसी सम्प्रदाय विशेष के लिये यह संभव नहीं है कि वह स्वराज्य लाभ कर सके। किन्तु यह होने पर भी सब सम्प्रदायों का न्यायपूर्ण हक हमें स्वीकार

करना ही होगा। कारण सत्य और न्याय पर यदि हमारी राष्ट्रीयता प्रतिष्ठित न हो तो वह जातीयता एक दिन भी नहीं टिक सकेगी। इसीलिये मैं संघबद्ध किसान और श्रमिक समुदायको स्वराज्य आन्दोलन का विरोधी नहीं समझता, बलकि मैं मुक्त कण्ठ से स्वीकार करता हूँ कि उनकी सहायता के बिना स्वराज्य की आशा दुराशामात्र है तथा जब तक वे संघबद्ध नहीं होते तब तक वे राष्ट्रीय, सामाजिक या आर्थिक पुनर्गठन के आन्दोलन में सहयोग नहीं दे सकते।

यह अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि सब देशों में, विशेष कर हमारे अभागे देश में, मध्यम श्रेणी का शिक्षित समाज ही देश का मेरु दण्ड है। वह स्वतंत्रता का संग्राम का ही अनुदूत है सो नहीं, बल्कि प्रजातंत्र का भी अनुदूत है। जब तक जन-साधारण में वास्तविक जागृति नहीं होती, तब तक शिक्षित समाज को ही गणतंत्र का पौरोहित्य करना होगा। इसके सिवा जितने भी गठन मूलक काम हैं उन सब में शिक्षित समाज को ही आगे होकर रास्ता दिखलाना होगा। इसलिये मैं मध्यवित शिक्षित समाज के अभाव अभियोग के सम्बन्ध में दो-एक बातें कहना चाहता हूँ।

पहली बात उनमें भाव का अभाव है। हमारे शिक्षित समाज में आदर्श प्रेम और आदर्श निष्ठा का अभाव है इसमें कोई शक नहीं। इस भाव की कमी का कारण क्या है? इसका कारण यही है कि जो हमें शिक्षा देते हैं वे शिक्षा के साथ ही साथ हमारे हृदय में आदर्श प्रेम का बीज नहीं बोते। हमारी

भाव-हीनता के लिये हमारा शिक्षित समाज, विश्वविद्यालय के अधिकारी गण ही मुख्यतः उत्तरदायी हैं। जो इन विद्यालय में पढ़ते हैं, ज्ञानार्जन करते हैं वे क्या स्वाधीनता के आदर्श से अनुप्राणित होते हैं? आप सब जानते हैं अठारवीं, उन्नीसवीं शताब्दी में फ्राँस में एक कोने से दूसरे कोने तक जो आंदोलन चला था उस आन्दोलन के अधिनायक वहाँ के अध्यापक ही थे। हमारे विश्वविद्यालय की तरफ देखते ही समझा जा सकता है कि हमारी राष्ट्रीय दुरावस्था किस हद तक पहुँच गई है। किन्तु तिस पर भी हताश होकर बैठने से काम नहीं चलेगा। अध्यापक समाज स्वयम् यदि अपना कर्तव्य पालन नहीं करता तो छात्रों को स्वयं अपने उद्योग और चेष्टा से आदमी बनना होगा।

भाव के अभाव के बाद ही अन्नाभाव की बात आती है। शिक्षित समाज में बेकारी की समस्या कितनी सङ्गीन हो गई है यह मुझे अच्छी तरह मालूम है। संभवतः अनेक यह बात नहीं जानते कि हमारे शिक्षित समाज की आर्थिक स्थिति गाँवों में बसे हुए कृषक समाज से भी बदतर है। नौकरी से उनका अभाव मिट सकेगा इसका आशा नहीं करना चाहिये। क्योंकि नौकरियों की बनिस्बत शिक्षित युवकों की संख्या बहुत ज्यादा है। इसलिये यह अनिवार्य है कि ३०, ४० वर्ष में शिक्षित समाज में से अनेकों को भूखों मरना होगा। किन्तु आज से ही नौकरी की आशा छोड़कर यदि हम व्यवसाय वाणिज्य में मन लगावें, तो हम यदि मर भी जायगें तो अपनी सन्तान के लिये जीवित रहने का जरिया छोड़ जावेंगे। अगर हम भी नौकरी

की आशा में घूमेंगे तो हम तो मरेंगे ही साथ ही साथ अपनी सन्तति के मरण का भी आयोजन कर जावेंगे। बङ्गाल में मारवाड़ी भाई जिस प्रकार ४०-५० वर्ष पहले बिना सहायता और बिना पैसे के व्यवसाय क्षेत्र में घुसे थे, उसी प्रकार उसी अवस्था में हमें भी व्यवसाय क्षेत्र में प्रवेश करना होगा तथा अपने अध्यवसाय, चरित्रबल और कष्टसहिष्णुता द्वारा व्यवसायक्षेत्र में कृतित्व लाभ करना होगा, "नान्य पन्था विद्यते अयनाय।"

हमारी वर्तमान कार्य प्रणाली की आलोचना किये बिना मैं दो एक बातें कहूँगा। हमें इस समय दो और काम करना होगा। एक तो गावों की दीनता मिटाने के लिये प्राणवान आन्दोलन भावों की धारा बहानी होगी। दूसरे देश में जितनी युवक समितियाँ और युवक आन्दोलन हैं या होंगे उन सब को एक सूत्र में पिरोना होगा। जो विभिन्न क्षेत्रों में सर्जनात्मक कार्य में लगे हुए हैं, उनमें भावों का आदन-प्रदान हो इसलिये एक League of young intel ectuals स्थापित करनी होगी। कवि, साहित्यिक शिल्पी वणिक, वैज्ञानिक और सब क्षेत्रों में काम करने वाले इसके सदस्य होंगे। उनमें आपस में भावों का आदान-प्रदान हो ऐसा अवसर उपस्थित करना होगा तथा जिससे वे एक लक्ष्य को सामने रखकर जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में काम करते हुए सम्पूर्ण जाति को सबल, स्वास्थ्य और क्रमशील बना सकें, ऐसा आयोजन करना होगा।

दूसरे युवकों की कर्म प्रचेष्टा भिन्न मुखी और परस्पर विरोधी न हों तथा जिससे सब चेष्टाएँ एक होकर सम्मिलित रूप से एक

ही आदर्श की ओर परिचालित हो सकें, इसके लिये केन्द्रीय समिति की स्थापना करनी होगी। कुछ वर्ष पहले यही उद्देश्य लेकर बंगीय युवक समिति गठित हुई थी। अनेक कारणों से इस समिति का काम आशानुरूप फल नहीं दे सका। किन्तु मेरा ख्याल है कि अब समय आ गया है कि समिति को पुनरुज्जीवित किया जाय। किसी नवीन केन्द्रीय समिति गठित किये बिना आप लोग यदि पुरानी बंगीय युवक समिति में प्रवेश कर उसमें प्राणजीवन कर सकें तो बहुत काम होगा। मैं पहले ही कह चुका हूँ विस्तृत प्रोग्राम की चर्चा यहाँ नहीं करूँगा। मैं सिर्फ यह बतलाना चाहता हूँ कि किस आदर्श को सामने रखकर किस प्रणाली से काम करना चाहिये।

वस्तुतः हमारे अभाव तीन प्रकार के हैं (१) वस्त्रादिका अभाव (२) अन्नादिका अभाव (३) शिक्षा का अभाव। हम अन्न, वस्त्र और शिक्षा चाहते हैं। किंतु समस्या की जड़ में हम देखते हैं कि राष्ट्रीयदीनता का प्रधान कारण है—इच्छाशक्ति और प्रेरणा का अभाव। इसलिये यदि हमारे अन्दर Notional will या इच्छा शक्ति न जागृत हो तो सिर्फ अन्न, वस्त्र और शिक्षा की व्यवसथा करने से ही काम न चलेगा। Benarao last be shot की तरह सरकार वा looal body यदि जन साधारण के अन्न, वस्त्र और शिक्षा का प्रबन्ध करे तो हम मनुष्य नहीं हो सकेंगे। सबकी सहायता करने में दोष नहीं है किन्तु प्रधानतः अपने अन्न, वस्त्र और शिक्षा की व्यवसथा हमें स्वयम् करनी चाहिये। यदि हम समवाय प्रणाली से काम कर सकें तो हमारी राष्ट्रीय इच्छा शक्ति

जागृत हो सकेगी तथा अनायास ही स्वराज्य और स्वाधीनता प्राप्त हो जायगी।

ग्राम सुधार के सम्बन्ध में सोचने से यही बात मन में आती है कि हमें सबसे पहले इस प्रकार की चेष्टा करनी चाहिये कि ग्रामवासी अपनी चेष्टा और उद्योग से अन्न, वस्त्र, शिक्षा और स्वास्थ्य की व्यवस्था करें। पहली अवस्था में बाहर से सहायता भेजी जा सकती है। किन्तु आखिर में ग्रामवासियों को ही स्वावलम्बी और आत्म निर्भर होना होगा अन्यथा ग्राम सुधार कर्म भी सफल व सार्थिक न होगा। हमें जानना चाहिये कि ग्रामवासियों में परावलम्बिता का भाव ही अधिक है। इसलिये स्वावलम्बन का भाव ही सर्वप्रथम जगाना होगा। हाँ, उन्हें स्वावलम्बी बनाने के लिये काफी समय तक चेष्टा करनी होगी।

आजकल बाढ़ और अकाल रोजमर्रा की बात हो गयी है! उसके लिये पूर्ण प्रयत्न करना होगा तथा हमारे समाज में धर्म और लोकाचार के नाम से जो अत्याचार हो रहे हैं, अनाचार फ़ैल रहे हैं, हमें उनका नाश करना होगा।

भाइयो और बहनों! अब मैं अपना वक्तव्य समाप्त करना चाहता हूँ। मगर यह न भूल जाइये कि हम सब को मिलकर नवीन भारत का निर्माण करना होगा। हमारे अन्दर पाश्चात्य सभ्यता प्रवेश कर हमें पश्चिमीय रंग में सराबोर कर रही है। हमारा व्यवसाय वाणिज्य, धर्म, कर्म, शिल्पकला आदि सब नष्ट हो रही है। इसलिये जीवन के सब क्षेत्रों में मृतसंजीवनी सुधा ढालनी होगी। इस सुधा को कौन लायेगा? जीवन

दिये बिना जीवन नहीं मिल सकता। जिसने आदर्श के चरणों में आत्म-बलिदान दिया है, सिर्फ वे ही व्यक्ति अमृत का पता पा सकते हैं। हम सभी अमृत के पुत्र है, किन्तु हम अपने अहंकार के जंजाल में इस प्रकार फँसे रहते हैं कि आत्म-स्थित अमृत-समुद्र का पता नहीं पाते। मैं आप सबको बुलाता हूँ। सब का आवाह्न करता हूँ। आइये, हम सब माँ के मंदिर में दीक्षित हों। देश सेवा ही हमारे जीवन का एक मात्र लक्ष्य हो। देश माता के चरणों में हम अपने सर्वस्व की बलि देवें। इतना ही अगर कर सके तो भारत फिर संसार में श्रेष्ठासन पायेगा।

देशबन्धु चित्तरंजन दास

—::o::—

देशबन्धु के वैचित्र्यपूर्ण जीवन की सब बातों से मैं परिचित नहीं हूँ। मैं सिर्फ तीन वर्ष तक उनके पास था। इस समय में भी कोशिश करने पर बहुत कुछ सीख सकता था। किन्तु आँख रहते हुए क्या हम उनका मूल्य समझते हैं? खासकर देशबन्धु के सम्बन्ध में मेरी धारणा थी कि वे और भी कुछ साल रहेंगे और अपने व्रतका उद्यापन न होने तक कर्मभूमि से अवसर ग्रहण न करेंगे। मुझे जहाँ तक खयाल है उन्होंने बहुत बार कहा था कि उनके भाग्य में दो साल तक समुद्र पार जेल में रहना लिखा है। जेल के बाद वे फिर ससम्मान लौटेंगे, अधिकारियोंके साथ समझौता होगा और वे राजसम्मान पायेंगे इसके बाद उनकीमृत्यु होगी। उस समय मैंने कहा था कि आपके साथ समुद्र पार चलने के लिये मैं भी तैयार हूँ। यहाँ आनेपर बराबर मेरे मन में शंका होती कि कहीं उनकी बात ठीक न निकले, वे भी कहीं यहाँ न भेज दिये जायँ? किन्तु हाय! इससे भी बढ़कर भयंकर वज्रपात हुआ। हा! भारत का भाग्य!

देशबन्धु के साथ मेरी आखिरी मुलाकात अलीपुर जेल में हुई थी। आरोग्य लाभ और विश्राम के लिये वे शिमला गये थे, मेरी गिरफ्तारी की बात सुनकर वे फौरन शिमला से कलकत्ते

आये थे, मुझे देखने के लिये वे अलीपुर में दो बार आये थे, बरहमपुर को बदली होने के पहले उनसे अन्तिम साक्षात् हुआ था। आवश्यक बातें होने पर मैंने उनकी चरणधूलि लेकर कहा, शायद आपके साथ बहुत दिनों तक मुलाकात न हो। उन्होंने अपने स्वाभाविक उत्साह और प्रफुल्लताके साथ कहा, "नहीं! मैं तुम्हें शीघ्र ही छुड़वा लूँगा।" हाय! किसे मालूम था कि अब इस जीवन में उनके दर्शन नहीं होंगे। उस मुलाकात का प्रत्येक दृश्य, प्रत्येक बात चित्रकी तरह मेरे मानस पटलपर अंकित है, आशा है जीवन भर अंकित रहेगी। उनकी वह शेष स्मृति ही मेरे जीवन का सम्बल है।

जनता पर देशबन्धु के अद्भुत प्रभाव का क्या कारण है? बहुतों ने इस प्रश्न का उत्तर देने का प्रयत्न किया है। मैं अनुचर की हैसियत से उसके कारण निर्देश करना चाहता हूँ। मैंने देखा कि वे मनुष्य के गुण दोषों की तरफ दृष्टि न देकर उसे प्यार कर सकते थे। वे हृदय के सहज भाव से ही मनुष्य मात्र को स्नेह करते थे, उनका यह स्वाभाविक स्नेह किसी व्यक्ति के गुणावगुण की उपेक्षा नहीं करता था। जिनको हम घृणा से दूर कर देते है, उन्हें वे हृदय से लगा सकते थे। न जाने कितने तरह के आदमी उनके पास आते थे और न जाने किन किन क्षेत्रों में उनका अपार प्रभाव था। उन्होंने चारों तरफ जनसमाज को आकर्षित किय था और उनका पक्ष समर्थन कर उन्हें विजयी बनाया था। जो उनके अगाध पाण्डित्य के सामने नतमस्तक नहीं होते थे, असाधारण वाग्मिता से वशीभूत

नहीं होते थे, अद्भूत भाग्य से चकित न होते थे, वे भी उनके महान् हृदय द्वारा आकृष्ट होते थे। तथा उनके साथी थे, वे मानों उनके परिवार के ही आदमी थे। वे उनके उपकार और मङ्गल के लिये सब कुछ करते थे। जीवन दिये बिना जीवन नहीं मिल सकता यह बिलकुल सत्य है। उनके सहकर्मी उनके इशारे पर क्या नहीं कर सकते थे। किसी भी तरह का त्याग, कष्ट, परिश्रम उन्हें विचलित न कर पाता। उनके इशारे पर सहकर्मी सर्वस्व बलिदान करने के लिये तैयार रहते थे। देशबन्धु जानते थे कि अहिंसा संग्राम में अनेक ऐसे अनुचर हैं जिनका हर अवस्था में विश्वास किया जा सकता है। मैं गर्व के साथ कहता हूँ कि अन्तिम समय तक उनके अनुयायियों ने उनके कहने के अनुसार हर तरह की विपत्तियाँ और कष्ट सहर्ष सहे।

दुःख का विषय है कि देशबन्धु के सुसंयत, कर्तव्य परायण निर्भीक अनुचरों को देखकर अनेक तथा कथित नेता ईर्ष्या करते, शायद वे मन ही मन ऐसे सहकर्मी पाने के लिये लालायित होते। किन्तु ऐसे कर्मियों का मूल्य चुकाने के लिये वे प्रस्तुत नहीं थे, कम से कम मेरा तो यही विचार है। सहकर्मी या अनुचर से हार्दिक स्नेह किये बिना बदले में उसका हृदय नहीं पाया जा सकता। अन्य लोगों की तरह उनके अन्दर अपने और पराये का भेदभाव नहीं था। उनका मकान सबके लिये खुला था, यहाँ तक कि उनके शयन कक्ष में कोई भी जा सकता था। वे अपने अनुचर पुत्रको प्रेम ही नहीं करते थे बल्कि उनके लिये लाँछना सहने के लिये भी तैयार थे। एक दिन उनके किसी

कुटुम्बीने एक सहकर्मी के किसी कार्य की निन्दा कर कहा कि "I hate him" उन्होंने अत्यन्त व्यथित होकर कहा कि यही तो मुश्किल है मैं घृणा नहीं कर सकता। यही नहीं बल्कि वे बाहर आदमियों से अपने आदमियों के लिये झगड़ा भी किया करते थे। मैंने कई बार देखा है कि वे अपने साथियों का जोरदार समर्थन करते थे और उनकी निन्दा का जोरदार प्रतिवाद करते थे।

जो भीतरी बात नहीं जानते वे देशबन्धु की संगठन शक्ति देख कर विमोहित थे, मोहित होने की बात भी है। देशबन्धु ने जो कुछ कर दिखाया वह भारत की राजनीति में अभूतपूर्व है। मैं निःसंकोच कह सकता हूँ कि उन्होंने पर्वत के समान दृढ़ संगठन किया था, उसके मूल में अनुचर और नायकके प्राणों का संयोग था। इसके सिवा दोष गुण की तरफ ध्यान न देकर मनुष्य मात्र को स्नेह करने के भाव और असाधारण बुद्धि कौशल द्वारा वे भिन्न-भिन्न रुचि और भिन्न-भिन्न पथके लोगों को एक साथ चला सकते थे। जो उनके दल में नहीं थे या उनके मतका समर्थन नहीं करते थे, वे भी गुपचुप उनकी सहायता करते थे।

अनेक तथा कथित नेताओं ने कहा है कि देशबन्धु के अनुचर और सहकर्मी दासत्वपरायण थे। देशबन्धु के मंत्रणागृह में जो उपस्थित थे, वे इस बात का समर्थन नहीं करेंगे। आलोचना और परामर्श के समय जो निर्भीक और स्पष्टवादी थे उनको मैं दासत्वपरायण कैसे कह सकता हूँ? यहाँ तक कि आलोचना के समय नायक और अनुचर वर्ग में तुमुल विवाद छिड़ जाता, किंतु

वे कभी भी इस तरह के विवाद से मन में भी नाराज नहीं होते। अनेक तो यही कहते है कि जो ज्यादा तर्क-वितर्क करते, वे उन्हीं की बातें ज्यादा सुनते। यह बात सच है कि मतभेद होने पर भी उनके अनुयायी उच्छृङ्खल या असंत नहीं होते। अथवा नेता पर नाराज हो उसकी निन्दा कर विपक्ष में नहीं मिल जाते। देशबन्धु संघ का प्रधान नियम था संयम और शृंखला। आपस में मतभेद होने पर भी बहुमत द्वारा जो निर्णय हो जाता उसे ही सब मानते। संघ के नियमों को मानकर चलने की शिक्षा इस भारत में नवीन नहीं है। २५ सौ वर्ष पहले भगवान बुद्ध ने भी भारत को यही शिक्षा दी थी। आज तक पृथ्वी भर में सब जगह बौद्ध प्रार्थना के समय कहते हैं—

बुद्धं शरणम् गच्छामि
धर्मं शरणम् गच्छामि
संघं शरणम् गच्छामि

सचमुच क्या धर्म प्रचार, क्या स्वदेश सेवा संघ और संघानुवर्तिता के बिना कोई भी महान् काम दुनिया में संभव नही है।

और भी एक शिकायत मैंने सुनी है कि राजनीति के आवर्त में पड़ कर देशबन्धु शिक्षा-दीक्षा में निम्न आदमियोंके साथ भी मिलते-जुलते थे। सन् १९२१ से जीवन के अन्तिम समय तक वे जिन सहकर्मियों के साहचर्य में आये थे, उन्हें निम्नस्तर का समझते थे या नहीं, मैं नहीं जानता। किन्तु उनकी बात चीत से कभी इस तरह का भाव प्रकट नहीं हुआ। मुमकिन है कि वे

अपने मन का भाव छिपा लेते हों। एक घटना मुझे याद है, जेल से छूटने पर छात्रों ने उनके अभिनन्दन के लिये एक अयोजन किया था, सभा में उन्हें जो अभिनन्दन दिया गया था, उसमें उनके त्याग और देश-सेवा का उल्लेख था। युवकों की भक्ति और प्रेम का अर्घ्य पाकर उनका हृदय उद्वेलित हो गया। वे चिरनवीन और चिरयुवा थे, इसीलिये युवक की वाणी उनके हृदय पर फौरन आघात करती थी। वे जिस समय अभिनन्दन पत्र का उत्तर देने उठे उस समय उनके हृदय में भावों का तूफान उठ रहा था। अपने त्याग और कष्ट की बात भूलकर वे युवकों के कष्ट और त्याग की बात कहने लगे परन्तु अधिक कह न सके, उनका गला रुंध गया। चुपचाप खड़े रहे, आंसुओं की धाराएं झर-झर बहने लगी। तरुणों का राजा रोने लगा, तरुण भी रोने लगे।

जिनके लिये उनके मन में इतनी समवेदना, इतना प्रेम था, उनको निम्नस्तर का वे कैसे समझ सकते थे, इसकी तो कल्पना भी नहीं की जा सकती।

निश्चय ही जिन्होंने देशबन्धु का काम किया है तथा अब भी कर रहे हैं उनके भीतर शिक्षा, दीक्षा या अभिजात्य का गर्व नहीं है। आशा है विनय रूपी परम सम्पदा से वे कभी भी रहित नहीं होंगे।

देशबन्धु का अन्तिम पत्र मुझे पटना से मिला था। यह पत्र सुदूर बर्मा में बैठे हुए मेरे जैसे राजबन्दी के लिये अमूल्य स्मृति निधि है। इस पत्र में यह स्पष्ट मालूम होता है कि अपने सहचर

या अनुयायी के पृथक् हो जाने पर उनके लिये उनका हृदय किस प्रकार तड़पा करता था। वह तड़प कितनी तीव्र होती थी इसे वे ही समझ सकते हैं, जो देशबन्धु के हृदय को पहचानते हैं।

सन् १९२१ और १९२२ में आठ महीने तक देशबन्धु के साथ जेल में रहने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है। इन आठ महीनों में हम दो महीने तक अगल बगल की दो शेलों में रहा करते थे। तथा दो महीने तक अन्य कई बन्धुओं के साथ सेन्ट्रल जेल के एक बड़े हाल में थे। इस समय उनकी सेवा का कुछ भार मेरे ऊपर था। सरकार की कृपा से आठ महीने तक मैंने उनकी सेवा करने का सुयोग पाया था। यह मेरे लिये अत्यन्त गौरव की बात है, सन् १९२१ में गिरफ्तार होने के पहले मैंने सिर्फ तीन चार महीने उनके अधीन काम किया था। इसलिये तीन चार मास के कम समय में उनको अच्छी तरह पहचानना मेरे लिये सम्भव नहीं था पर जब आठ महीने तक सेवा करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, तब मैं उन्हें पहचान सका। अँग्रेजी में कहा जाता है कि, "Fameliarity breeds contempt" यानी विशेष घनिष्ठता होने से अश्रद्धा उत्पन्न होती है। किन्तु देशबन्धु के सम्बन्ध में कह सकता हूँ कि उनके साथ घनिष्ठता होने पर उनके प्रति मेरी श्रद्धा सौ गुनी बढ़ गई। उम्मीद है इस बात का सभी समर्थन करेंगे।

देशबन्धु अविरल रसिकता के अपूर्व भण्डार थे, यह बात जेल में अच्छी तरह समझ पाया। न जाने कितने प्रकार के मनो-

रंजन द्वारा वे सबको आमोदित करते। प्रेसीडेन्सी जेल में हमारे ऊपर पहरे पर संगीन धारी गोरखा नियुक्त था। एक दिन सबेरे उठकर उन्होंने देखा कि गोरखा के स्थान पर डण्डाधरी उत्तर भारतीय पहरेदार मौजूद है। उसे देखते ही वे बोले, "क्यों सुभाष! संगीन की जगह यह बाँस कहाँ से आया? हम क्या इतने निरीह हैं?" हँसी दिल्लगी के लिये उन्हें कुछ सोचना नहीं पड़ता था, वे स्वभाव से ही रसिक थे।

रसबोध होने पर आदमी प्रतिकूल घटनाओं से कातर नहीं होता बल्कि हर अवस्था में उसका मजा लूट सकता है। जेल के सुनसान स्थान में रहने पर ही उसकी सत्यता अच्छी तरह अनुभव होती है।

अँग्रेजी और बँगला के वे प्रकाण्ड पण्डित थे। अँग्रेज कवियों में वे ब्राउनिंग के भक्त थे। ब्राउनिंग की अनेक कविताएँ उन्हें कण्ठस्थ थीं। जेल में वे बार-बार ब्राउनिंग की कुछ कविताओं का पाठ किया करते थे। वे रोजमर्रा के काम में दैनिक साहित्य के अध्ययन द्वारा अनेक मनोरंजक बातों का जिक्र करते, मगर जब तक वे उनकी व्याख्या नहीं करते, हम उसका पूरा मजा नहीं उठा सकते।

देशबन्धु ने अपने एक आत्मीय के लिये नौ रुपये सैकड़े पर दस हजार रुपये उधार लिये थे, किन्तु वह समय पर रुपया नहीं चुका सका, इसलिये कर्ज देने वाले का एटर्नी आवश्यक लिखा पढ़ी करने उनके पास गया था। उनके पुत्र चिररंजन से मालूम हुआ कि यह बात अभी तक उनके परिवार में किसी

को भी मालूम न थी। तथा जिसके लिये उन्होंने रुपया उधार लिया था, वह उस समय लखपति था किन्तु देशबन्धु ने उससे कुछ न कह कर स्वयं कागजात पर दस्तखत कर दिये। स्त्री पुत्र आदि को न बतलाकर बहुत-सा फण्ड लेकर उन्होंने औरों की सहायता की थी।

जो देशबन्धु की निन्दा किये बिना खाना नहीं खाते, मैंने उन्हें विपत्ति के समय देशबन्धु का शरणागत देखा है। इस तरह के एक महाशय एक बार दो सौ रुपये के लिये देशबन्धु के पास आये थे और देशबन्धु ने उन्हें चुपचाप रुपया दे दिया था।

आठ महीनों तक साथ रहने के कारण उनके हृदय की सब बातें और अनुभूति जानने का मुझे सुयोग मिला था किन्तु मैंने भी बातचीत, या व्यवहार में निम्नता का चिह्न नहीं देखा। राजनीति क्षेत्र में उनके अनेक शत्रु थे, यह बात वे जानते भी थे, किन्तु किसी के प्रति उनके मन में विद्वेष नहीं था। यहाँ तक कि जरूरत होने पर वे उनकी सहायता करने में भी कुण्ठित नहीं होते थे।

जेल में देशबन्धु अधिकतर अध्ययन में लगे रहते। भारत की राष्ट्रीयता के सम्बन्ध में पुस्तक लिखने के लिये उन्होंने राजनीति की अनेक पुस्तकें मँगाई थी। सब चीजों के एकत्र हो जाने पर उन्होंने पुस्तक लिखना आरम्भ किया था, किन्तु समय की कमी के कारण वे जेल में पुस्तक सम्पूर्ण नहीं कर सके। जेल से बाहर आने पर कर्म क्षेत्र में रहने के कारण वे अपने इस कार्य की पूर्ति नहीं कर सके। जेल में राजनीति और साहित्य के सम्बन्ध में मैंने

उनके साथ काफी आलोचना की थी। उनका विश्वास था कि हमारी राष्ट्रीयता और शिक्षा-दीक्षा के साथ हमारे समाज तत्व, राजनीति और दर्शन का भी उद्भव होगा इसीलिये वे विभिन्न वर्ग और श्रेणी में विवाद नहीं चाहते थे और इस विषय में कार्ल मार्क्स के विरोधी थे। अन्तिम समय तक उनका विश्वास था कि भारत के सभी सम्प्रदायों और श्रेणियों में पैक्ट हो जायगा और सब लोग एकमत होकर स्वराज्य आन्दोलन में योग देंगे। अनेक लोग उनका मजाक उड़ाकर कहते कि पैक्ट से वास्तविक संगठन या मिलन नहीं हो सकता क्योंकि मेल सहानुभूति पर निर्भर करता है, दस्तखत से मेल नहीं होता वे कहते कि समझौता किये बिना मनुष्य दुनिया में एक दिन भी नहीं रह सकता तथा मनुष्य या समाज एक दिन भी नहीं टिक सकता। क्या परिवार में, क्या सामाजिक या राजनैतिक जीवन में, विभिन्न रुचि और विचार के आदमियों का एक साथ रहना बिलकुल असंभव है; पृथ्वी के एक प्रांत से दूसरे प्रान्त का व्यवसाय वाणिज्य सिर्फ आपसी समझौते के बलपर ही चलता है। उनके बीच में प्रेम की गन्ध भी नहीं रहती, यह कहना अत्युक्ति न होगा।

भारत के हिन्दू नेताओं में इस्लाम का इतना बड़ा हितकांक्षी और कोई था, यह मैं नहीं जानता। और वही देशबन्धु तारकेश्वर सत्याग्रह के सर्वस्व थे। वे हिन्दू धर्म को इतना चाहते थे कि उसके लिये प्राण देने को तैयार थे। किन्तु उनके मन में अहम्मन्यता नहीं थी, इसीलिये वे इसलाम को भी चाहते थे।

मैं जानना चाहता हूँ कितने हिन्दू नेता हृदय पर हाथ रखकर कह सकते हैं कि वे मुसलमान से घृणा नहीं करते ? कितने मुस्लिम नेता हृदय पर हाथ रखकर कह सकते हैं कि वे हिन्दू से घृणा नहीं करते। देशबन्धु धर्ममत की दृष्टि से वैष्णव थे, किन्तु उनके हृदय में सब धर्मावलम्बियों के लिये स्थान था। पैक्ट द्वारा विवाद मिट जाने पर भी वे यह विश्वास नहीं करते थे कि सिर्फ इसी से हिन्दू-मुसलमानों में प्रेम उत्पन्न हो जायगा। इसी-लिये वे शिक्षा (Culture) द्वारा हिंदू मुसलमानों में मैत्री स्थापित करना चाहते थे। हिन्दू संस्कृति और मुस्लिम संस्कृति में कहाँ पर मेल है, इस विषय पर वे जेल में अक्सर मौलाना अकरम खाँ के साथ आलोचना किया करते थे। मुझे जहाँ तक मालूम है हिंदू-मुस्लिम सांस्कृतिक मिलन के सम्बन्ध में प्रबन्ध लिखने के लिये मौलाना साहब राजी हो गये थे।

भारत में स्वराज्य होगा वह सिर्फ उच्च श्रेणी के लोगों की सिद्धि के लिये नहीं बल्कि जनसाधारण के उपकार और मंगल के लिये, इस बात का देशबन्धु ने जितने जोरों से प्रचार किया था, प्रथम श्रेणी के अन्य किसी नेता ने ऐसा किया था; यह मैं नहीं जानता। स्वराज्य जनसाधारण के लिये है, यह बात कुछ नयी नहीं है। निश्चय ही तीस वर्ष पहले स्वामी विवेकानन्द ने अपनी "वर्तमान् भारत" नामक पुस्तक में उनका उल्लेख किया था, किंतु स्वामीजी की भविष्य वाणी की प्रतिध्वनि उस समय राजनीति के रंगमंच पर सुनायी नहीं पड़ी थी।

जेल से छूटने के बाद देशबन्धु ने जिन बातों का प्रचार

किया था, उन्हें उन्होंने जेल में अच्छी तरह सोच लिया था। समय समय पर उन सब बातों को लेकर हम लोगों के साथ आलोचना हुआ करती थी। कौंसिल प्रवेश की बात उन्होंने जेल में ही निश्चित की थी। तथा बहुत कुछ तर्क वितर्क के बाद हम लोगों ने उसका समर्थन किया था। कौंसिल प्रवेश के प्रस्ताव को लेकर उस समय जेल में काफी दलादलि हुई थी। दैनिक अँग्रेजी निकालने का सङ्कल्प भी हम सब ने जेल में ही किया था। किन्तु दुख है कि उनके अनेक महान् संकल्प कार्य रूप में परिणत नहीं हुए।

जेल की घटना का उल्लेख किये बिना मैं नहीं रह सकता। कैदियों के प्रति उनका प्रेम! हम जिस समय प्रेसीडेन्सी जेल से अलीपुर जेल में आये—उस समय हमारे वार्ड में माथुर नाम का एक कैदी काम करता था। जेल की भाषा में जिसे "पुराना चोर" कहते हैं, माथुर वही था। उसे चोर कहना अन्याय है, वह डाकू था, आठ दस बार वह जेलखाने में आ चुका था। तथा डाकू की तरह उसका अन्तःकरण खूब सरल था। कुछ दिन काम करने के बाद वह देशबन्धु को स्नेह और भक्ति करने लगा। वह उन्हें बाबा कहने लगा। माथुर के प्रति देशबन्धु के हृदय में समवेदना और स्नेह उत्पन्न हुआ। क्रमशः वह हम सबके प्रति खिंचने लगा। रात या दिन में जब वह उनके पैर दबाता तब अपने जीवन की सब बातें कहता। छूटने के समय उन्होंने माथुर से कहा था कि छूटने पर मैं तुम्हें अपने घर पर रखूँगा। माथुर भी इस प्रस्ताव से अपार आनन्दित हुआ और उसने संकल्प किया कि वह खराब काम और खराब संगति छोड़ देगा।

माथुर के छुटकारे के दिन देशबन्धु ने आदमी भेजकर उसे अपने घर बुलवा लिया। इसके बाद लगभग तीन साल तक वह उनके पास रहा। उनके परिचारक की हैसियत से वह भारत के विभिन्न प्रांतों में घूमा था। दागी चोर होने के कारण पुलिस कुछ समय तक उसके पीछे लगी रही, किन्तु जब देखा कि सचमुच वह देशबन्धु के आश्रय में रहने लगा तब पुलिस ने उसका पीछा छोड़ दिया। जमादार प्राय उसे देखकर कहता, "बच्चा! अब तुम आदमी हो गये।" मेरा विश्वास था कि माथुर का फिर पतन न होगा, किन्तु देशबन्धु के देह त्याग के बाद जब पत्र द्वारा माथुर की खबर जाननी चाही तो सुना कि जब देशबन्धु दार्जिलिङ्ग में थे, तभी उनके रसारोड वाले मकान से चाँदी की कुछ चीजें लेकर लापता हो गया। यह अद्भुत समाचार पढ़कर मुझे Les Miserables की कहानी याद आगई। मेरा अभी विश्वास है कि माथुर उनके पास रहता तो उनके व्यक्तित्व के प्रभाव से लोभ के वशीभूत नहीं होता। क्षणिक दुर्बलता के वशीभूत होकर उसने चोरी की थी, किन्तु मेरा विश्वास है कि वे जीवित रहते तो किसी न किसी दिन वह उनके पैरों पर गिर कर रोता हुआ माफी माँगता। अब उसकी क्या हालत होगी सो भगवान जाने। मनुष्य कैसे एक साथ प्रकाण्ड बैरिस्टर, उदार स्नेही, परम वैष्णव, चतुर राजनीतिज्ञ, दिग्विजयी वीर हो सकता है। यह प्रश्न स्वभावतः सबके मन में उठ सकता है। मैंने नृ-तत्व विद्या की सहायता से इस प्रश्न का समाधान किया है, पर कृत कार्य हुआ हूँ कि नहीं, नहीं जानता। आर्य, द्रविड़ और मंगोल, इन तीन जातियों के

सम्मिश्रण से वर्तमान बंगाली जाति की उत्पत्ति हुई है। प्रत्येक जाति में कुछ गुण विशेष रूप से विकसित होते हैं। इसलिये रक्त का सम्मिश्रण होने से गुणों का विशेष विकाश होता है, रक्त सम्मिश्रण के फल से बंगाल की प्रतिभा सर्वतोमुखी है। आर्यों की धर्म-प्रियता और आदर्शवाद, द्राविणों की कला विद्या और भक्तिमत्ता तथा मंगोलों का बुद्धि-कौशल और वास्तववाद बंगाल सागर में मिल गया है। बंगाली एक साथ ही तीक्ष्ण बुद्धि और भावुक, मायावाद विद्वेषी और आदर्शवादी अनुकरणक्षम और सृष्टिक्षम है, इसका कारण रक्त सम्मिश्रण है। जिस जाति का रक्त व्यक्ति की धमनियों में प्रवाहित होता है, उसके संस्कार व्यक्ति के चित्त में अवस्थित रहते हैं। बंगाली जिस प्रकार एक जाति के रूप में परिणित हुआ है, उसी तरह बंगाली के culture ने भी एक तरह का वैशिष्ठ्य लाभ किया है।

जिस तन्त्र के उपदेश से बंगाली ने शक्ति पूजा सीखी, उसी तन्त्र के फलस्वरूप देशबन्धु असाधारण तेजस्वी थे। निश्चय ही देशबंधु ने किसी भी दिन तांत्रिका साधन नहीं की थी। किन्तु कुलाचार आदि के बिना शक्तिमान नहीं हुआ जा सकता, इस पर मैं विश्वास नहीं कर सकता। तन्त्र का सार शक्ति पूजा है। जगत का मूल आद्या शक्ति है। जिससे सृष्टि, स्थिति, प्रलय, अथवा ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर हैं। उसी आद्या शक्ति के साधक मातृ-रूप में इसकी आराधना करते हैं। बंगाली पर तन्त्र का प्रभाव खूब अधिक है, इसलिये वह मा का अत्यन्त अनुरक्त है। तथा भगवान को मातृ-रूप में मानता है। पृथ्वी की अन्यान्य जातियाँ

(यहूदी, अरब ईसाई आदि) भगवान को पिता रूप में देखते हैं। भगिनी निवेदिता के कथनानुसार उस समाज में नारी की अपेक्षा पुरुष का प्राधान्य है इसीलिये वहाँ वाले भगवान को पिता रूप में देखते हैं। दूसरी तरफ जिस समाज में पुरुष की अपेक्षा नारी का प्राधान्य है, वहाँ के आदमी भगवान को मातृ-रूप में देखते हैं। जो भी हो, बंगाली भगवान को,—सिर्फ भगवान को ही क्यों, बंगाल और भारतवर्ष को मातृ-रूप में ही प्रेम करते हैं, यह सब जानते हैं। देश को हम मातृभूमि कहते हैं।

बंकिमचन्द्र ने लिखा है,—

"सुजलां सुफलां मलयज शीतलाम्
शस्य श्यामलाम् मातरम्।"

द्विजेन्द्र लाल ने कहा है—

"जे दिन सुनील जलधि हइते उठिल जननी
भारतवर्ष।"

रवीन्द्रनाथ ने गाया है,—

"ओ आमार जन्मभूमि तोमार पाये ठेकाई माथा।"

देशबन्धु भी मातृ रूप के अनुरागी थे। जेल में वे बंकिम बाबू की किताब पढ़कर सुनाया करते थे। बंकिम लिखित मा का तीन प्रकार का वर्णन उन्हें बहुत पसन्द था। उनके "नारायण" पत्र में वैष्णव और शाक्त धर्म की समान रूप से आलोचना हुआ करती थी। दुर्गा पूजा के सम्बन्ध में "नारायण" में जो कुछ लेख प्रकाशित हुए, वे उच्च भावपूर्ण थे।

देशबन्धु के व्यावहारिक जीवन में भी हम तंत्रका प्रभाव देख

पाते हैं। वे स्त्री शिक्षा और स्त्री स्वाधीनता में विश्वास करते थे, यह सब जानते थे। शंकर पंथियों के इस कथन में कि "नारी नरकस्य द्वारम्" उनका बिल्कुल विश्वास नही था।

उनके गुण बंगाली गुण थे, उनके दोष बंगाली के दोष थे। उनके लिये सबसे महान् गौरवकी बात यही थी कि वे बंगाली थे। जब कोई बंगाली को भाव प्रवण कहकर उसका मजाक उड़ाता तो वे बहुत व्यथित होते! वे कहते हम भाव प्रवण है, यह हमारा गौरव है।

मनुष्य जाति की संस्कृति एक है या अनेक, यह प्रश्न अनेक मनुष्य उठाते हैं। कोई कहते हैं संस्कृति में भेद नहीं है, संस्कृति एक ही है, वे अद्वैतवादी हैं। जो कहते हैं संस्कृति में भी जातीयता है, वह अनेक है, वे द्वैतवादी हैं। किन्तु देशबन्धु द्वैताद्वैतवादी थे। संस्कृति एक भी है, अनेक भी है। मूलतः मनुष्य जाति की संस्कृति एक है, पर उसका विकास अनेक द्वारा हुआ है। बगीचे में जैसे नाना प्रकार के वृक्ष रहते हैं और उनके तरह-तरह के फूल होते हैं, मानव समाज में भी उसी प्रकार भिन्न-भिन्न तरह की संस्कृति विकसित होती है। प्रत्येक जाति की संस्कृति का विकास होगा तो संसार की मानव जाति की संस्कृति का विकाश होगा। राष्ट्र की संस्कृति का विकास रोककर विश्व की संस्कृति का पूर्ण विकास नहीं किया जा सकता। देशबन्धु का स्वदेश प्रेम विश्व प्रेम का अंग था, किन्तु उन्होने स्वदेश प्रेम को छोड़कर विश्व प्रेमी बनने का प्रयास नहीं किया।

देशबन्धु अपने स्वदेश प्रेम में बंगाल को भूल नहीं जाते थे

अथवा बंगाल के प्रेम में स्वदेश को नहीं भूल जाते थे किन्तु उनका प्रेम बंगाल की सीमा में बद्ध नहीं था। महाराष्ट्र में भी वे तिलक महाराज की तरह प्रेम और सहानुभूति पाते थे।

देशबन्धु ने कहा, बंगाल को स्वराज्य संग्राम में अग्रणी होना होगा। १९२० में बंगाल ने बंगाल स्वराज्य आन्दोलन का नेतृत्व खो दिया। किन्तु सन् १९२३ में उसका नेतृत्व उसे फिर मिल गया।

और एक बात देशबन्धु कहा करते थे कि भारतवर्ष का कोई आन्दोलन बंगाल में चलाना हो तो उस पर बंगाली छाप लगा लेना चाहिये। वे कहते, बंगाल में सत्याग्रह आन्दोलन चलाने के पहले उसे बंगाल के उपयुक्त बना लेना होगा।

मैंने पहले ही कहा है कि शक्ति के साधक होने पर भी उन्होंने तंत्रानुसार शक्ति साधना नहीं की थी। उनके प्राण महान् थे। आकांक्षा भी महान् थी। वे जिस समय जो चाहते थे उसे पाने के लिये प्राणप्रण से लग जाते थे। नेपोलियन बोनापार्ट ने आल्प्स पहाड़ देखकर एक समय कहा था, "There shall be no Alps" मेरे समान आल्प्स पहाड़ खड़ा नहीं रह सकता ? उसी तरह वे भी बाधा-विघ्न को तुच्छ समझते थे। किस आधार पर "फारवर्ड" का प्रकाशन और "कौंसिल-जय" का काम शुरू किया था ! हम लोग असुविधा या बाधा की बात कहते तो वे धमका कर कहते, "तुम लोग बिलकुल pessimist हो। वे अक्सर कहते' "you young old man ! तुम असमयवृद्ध युवक ! वे चिरयुवा, चिरनवीन थे। वे तरुणों की आशा, आकांक्षा

को समझते थे इसीलिये मैंने उन्हें "तरुणों का राजा" कहा है।

उनके त्याग पाडित्य, बुद्धि कौशल (tact) की बातें देशवासी जानते है। उनके अलौकिक प्रभाव का एक कारण और कहकर मै बस करूँगा। मैंने कहा है कि वैष्णवधर्म की सहायता से उन्होंने वास्तव जीवन और आदर्श के बीच में एक सामंजस्य स्थापित किया था।वे अनुभूति द्वारा अपने को भगवान की लीला का यंत्र समझते थे। उनके अहंकारका लोप हो गया था और अहंकार का लोप होने पर मनुष्य में दिव्य शक्ति आ जाती है। जीवन के अन्तिम दिनों में यह अवस्था थी कि—"यत्र दास महाशय तत्र जय।"

उन्होंने कितने तरह के आदमियों से कितने तरह के काम करवाने की चेष्टाएँ का यह शायद देशवासी नहीं जानते। उनके बोए हुए वृक्ष में जब फल आयेगा, तब देशवासी जानेंगे जीवन, मरण, शयन, स्वप्न में उनका एक ही ध्यान था, एक ही चिन्ता थी, स्वदेश सेवा।

स्वदेश सेवा ही उनके धर्म जीवन का सोपान था।

ब्रिटिश साम्राज्यवाद

पिछले महासमर में ब्रिटिश राजनीतिज्ञों द्वारा हमारे नेता धोखे में रखे गये और उनके साथ विश्वासघात किया गया। इसीलिये, २० साल पहले हमने कसम खाई थी, कि हम कभी उनके विश्वास के फन्दे में न फंसें।

बीस वर्षों से भी अधिक से भारतीय आजादी के लिये लड़ रहे हैं और वीरता पूर्वक उस क्षण की प्रतीक्षा कर रहे थे जो अब आ पहुँचा है। यह अवसर भारतीय जनता के लिये स्वाधीनता का ऊषा काल है।

हम अच्छी तरह जानते हैं, आगामी सौ वर्षों में ऐसा अवसर फिर नहीं आयेगा, और इसलिये अवसर का पूर्ण उपयोग करने के लिये हम दृढ़ संकल्प हैं।

ब्रिटिश साम्राज्य का भारत के लिये एक ही अर्थ है—नैतिक पतन, सांस्कृतिक विनाश, आर्थिक दुर्बलता राजनैतिक गुलामी।

हमारा कर्तव्य है कि आपनी स्वाधीनता का मूल्य अपने खून से चुकायें। आज़ादी—जो हम अपने बलिदान और प्रयत्न से पायेंगे, उसे अपनी ताकत से रख सकेंगे। दुश्मन ने तलवार खींच ली है, उससे तलवार से ही लड़ना है! सविनय अवज्ञा को सशस्त्र युद्ध में परिवर्तित होना ही चाहिये। और जब भारतीय

जनता बड़े पैमाने पर अग्नि-धर्मी हो जायगी, तभी वह स्वाधीनता के योग्य होगी।

इसके बाद भी नेताजी ने टोकियो से ब्राडकास्ट किया—

जहाँ तक भारत का सम्बन्ध है, हमारे लिये सबसे आवश्यक यह देखना है कि भारत के क़रीब की परिस्थिति क्या है?

भारत में अँग्रेजों के पूरे इतिहास में, किसी भी ब्रिटिश जनरल के दिमाग में यह बात नहीं आयी कि भविष्य में किसी समय अँग्रेजों का कोई दुश्मन भारत के पूर्वीय सीमा पर आ सकता है। इसलिये ब्रिटेन के समर विशेषज्ञों का सारा ध्यान उत्तर पश्चिमी सीमाओं पर ही केन्द्रित रहा।

सिंगापूर में नौसेना रखकर हमारे शासकों ने समझा भारत उनके हाथों में सुरक्षित है। जनरल यामाशीता और इसके प्रचण्ड अग्रगमन ने संसार की आँखों में ब्रिटिश विशेषज्ञों का निकम्मापन सिद्ध कर दिया। तबसे भारत के पूर्वी सीमान्त की रक्षा के लिये लार्ड वेवेल बड़ी सरगर्मी से प्रयत्न कर रहे हैं। मगर भारतीय जनता सिर्फ यह कहना चाहती है कि जब सिंगापूर बनाने में बीस साल लगे और गवाने में एक सप्ताह तब ब्रिटिश सेनापति या उसके उत्तराधिकारी को रक्षा सीमा से हटते कितना वक्त लगेगा।

हम भारतीयों के लिये सर्वप्रथम महत्व की बात यह नहीं है कि ट्युनिस में क्या हो रहा है, टिम्बकटू, लम्पीडुसा या अलास्का में क्या हो रहा है? बल्कि भारत और भारत की सीमा के पार क्या हो रहा है?

सिंगापुरर का पतन और बर्मा का हाथ से निकल जाना, ब्रिटिश सैनिक इतिहास की सब से मर्मान्तक घटना होने पर भी कोई तारीफ लायक परिवर्तन नहीं ला सकती। ब्रिटिश साम्राज्यवाद बना हुआ है। आदमी आयें और चले जायें, साम्राज्य आयें और चले जायें। मगर ब्रिटिश साम्राज्यवाद हमेशा रहेगा, हमारे शासक अभी भी यही सोच रहे हैं।

आप इसे राजनैतिकता का अभाव या राजनीति का दिवालियापन, पागलपन कुछ भी कहिये। मगर इस पागलपन की भी अपनी कैफियत है?

भारत से ही ब्रिटिश साम्राज्यवाद का विकाश हुआ। ब्रिटिश चाहे वे किसी भी पार्टी के हों—जानते हैं, उन्हें भारत के तमाम साधन स्रोतों को हथियाना है। उनके लिये साम्राज्य माने भारत! वे साम्राज्य को बचाने के लिये पागल से लड़ रहे हैं। युद्ध काल में भाग्य ब्रिटेन का क्या करेगा, इसकी पर्वा नहीं है। अँग्रेज इस साम्राज्य को रखने के लिये—भारत को रखने के लिये अपने प्रयत्नों की इतश्री कर देगा।

इसलिये अगर मैं साफ-साफ कहूँ तो, मुझे कहना चाहिये कि यह ब्रिटिश राजनीतिज्ञों का पागलपन नहीं है कि वे दुरवस्था में होने पर भी भारत की स्वाधीनता स्वीकार नहीं करते, बल्कि यह हमारा पागलपन है कि हम आशा करें कि अँग्रेज स्वेच्छा से अपना साम्राज्य छोड़ दें। किसी भारतीय को कभी इस वहम में नहीं पड़ना चाहिये कि एक दिन इङ्गलैण्ड भारत की स्वाधीनता स्वीकार करने के लिये राजी कर लिया जायगा।

लेकिन यह नहीं कहा जा सकता कि ब्रिटिश राजनीतिज्ञ फिर कभी भारत से समझौता नहीं करेंगे।

व्यक्तिगत तौर से मैं इसी वर्ष इस तरह के प्रयत्न की आशा करता हूँ। लेकिन मैं अपने देशवासियों से यह कहना चाहता हूँ कि समझौते द्वारा ब्रिटिश राजनीतिज्ञ कभी भारत की स्वाधीनता नहीं स्वीकार करेंगे बल्कि भारतीय जनता को धोखा देने की चेष्टा करेंगे।

समय गुजारने वाली समझौते की चर्चाएँ भारतीय स्वाधीनता के प्रश्न को सामने से हटाने के लिये रची गयी हैं, जिससे कि राष्ट्र की इच्छा को कमजोर बना दिया जाय। जैसा कि दिसम्बर १९४१ और अप्रैल १९४२ के बीच उन्होंने किया।

मेरे कुछ देशवासी आशा करते हैं, अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति के दबाव के कारण ब्रिटेन जैसी साम्राज्यवादी ताकतें, भारत जैसे गुलाम देश की स्वाधीनता स्वीकार करने के लिये भले ही राजी कर ली जा सकें लेकिन ऐसी तमाम आशाएँ पूर्णरूप से गलत है। आप जानते हैं सन् १९४० के अन्त में महात्माजी ने सविनय कानून भंग आन्दोलन छेड़ दिया, तब मैंने अनुभव किया कि भारतीय जनता का सम्मान और गौरव बचा लिया गया, और यह जरूरी था कि भारतीय क्रान्ति को बड़े पैमाने पर और प्रभावपूर्ण ढङ्ग पर लाया जाय कि उसका फल निकले। आज मैं यह घोषित करने की स्थिति में हूँ कि ये सब उद्देश्य पूर्णतः प्राप्त कर लिये गये। हम अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति जानते हैं और इसलिये हम अपनी विजय में पूर्ण विश्वास करते हैं।

भारत के बाहर के समस्त भारतीयों ने जो हमारे दुश्मनों के अधीन देशों में नहीं रहते हैं, एक सुदृढ़ संगठन खड़ा किया है। वे भारत के भीतर की घटनाओं पर नजर गड़ाये हुए हैं। और साथ ही अन्तर्राष्ट्रीय वाकयातों से सम्बन्ध जोड़े हुए है। जेल-यातना, अत्याचारों के बावजूद भी जो लोग भारत में आजादी का संग्राम चला रहे हैं, उन्हें ठीक वक्त पर अधिक से अधिक सहायता देने के लिये उक्त देशों के प्रवासी भारतीय सब सम्भव तैय्यारियाँ कर रहे है।

मित्रों! आपको याद होगा कि मैंने आपको विश्वास दिलाया था कि जब वक्त आयगा, मैं और बहुत से मेरे जैसे— युद्ध करने के गौरव और कठिनाइयों में, तथा विजय का आनन्द उपयोग करने में आपके साथ होंगे। अब हम वह प्रतीक्षा पूरी कर रहे है भारत आजाद होगा, और बहुत शीघ्र ही। आजाद भारत जेलों के दरवाजे खोल देगा ताकि भारत माता के सपूत जेल की अन्धकार पूर्ण कोठरियों से स्वतंत्रता के प्रकाश में आ जायँ।

नेताजी ने ईस्ट एशियाटिक भारतीयों से भारत की स्वाधीनता के लिये सेना संगठन में सहयोग देने की अपील की :—

भारत को स्वाधीन करने का काम हमारा है—सिर्फ हमारा है। यह जिम्मेदारी हम किसी गैर पर नहीं छोड़ सकते, क्योंकि यह हमारे राष्ट्रीय सम्मान के खिलाफ है।

मगर दुश्मन निर्दय और निराश है, वह सर से पैर तक अस्त्र शस्त्रों से सुसज्जित है। ऐसे दुश्मन के मुकाबिले सविनय कानून

भङ्ग या तोड़ फोड़ या क्रान्तिकारी आतंकवाद कुछ नहीं कर सकता। इसलिये अगर हम भारत से ब्रिटिश ताकत हटाना चाहते हैं तो हमें दुश्मन से उसके हथियारों से ही लड़ना होगा। दुश्मन ने तलवार खींच ली है, इसलिये तलवार से ही उससे लड़ना चाहिये।

मुझे विश्वास है कि पूर्वएशियास्थित अपने देशवासियों की मदद से मैं एक ऐसी महान् सेना संगठित कर सकूँगा जो भारत से ब्रिटिश ताकत को हटाने में समर्थ होगी। वक्त आ गया—हर भारतीय को रणक्षेत्र की ओर बढ़ना चाहिये। जब स्वाधीनता-प्रेमी भारतीयों का खून बहने लगेगा, भारत अपनी आज़ादी पायेगा।

दिल्ली चलो

—::०::—

[९ जुलाई १९४३ को सिंगापूर में दिया गया नेताजी का भाषण ।]

बहनो और भाइयो !

आपने जिस उत्साह और प्रेम से आज मेरा स्वागत किया है, मैं स्वागत सत्कार लिये आप सब का कृतज्ञ हूँ, विशेष कर मैं उन बहनों को धन्यवाद देता हूँ जो इतनी विशाल संख्या में अपनी राष्ट्रीय भावना व्यक्त करने के लिये यहाँ उपस्थित हुई हैं। आज जो दृश्य मैं देख रहा हूँ, मुझे यह विश्वास हो रहा है कि भावी संग्राम में सिंगापुर (Syonan) और मलाय के मेरे देशवासी प्रधान भाग लेंगे। जो एक समय ब्रिटिश साम्राज्यवाद का रक्षागार था वह भारतीय राष्ट्रीयता का रक्षागार होगा।

मैं आपको साफ-साफ बतला देना चाहता हूँ कि घर और मातृभूमि को छोड़कर मैंने यह पथ क्यों ग्रहण किया जो हर प्रकार की विपत्तियों से भरा हुआ है।

आप सब जानते हैं, १९२१ में विश्वविद्यालय छोड़ने के बाद से ही मैं भारत की स्वाधीनता के आन्दोलन में सक्रिय भाग लेता रहा हूँ। दो युगों में जितने सविनय कानून भंग आन्दोलन हुए उन सब में मैं शामिल था और बिना मुकदमा चलाये ही ब्रिटिश सरकार मुझे जेल में बन्द करती रही क्योंकि उसे सन्देह था कि मैं हिंसात्मक या अहिंसात्मक गुप्त क्रान्तिकारी आन्दोलन से

सम्बन्ध रखता हूँ, जिससे कि मैं परिचित जरूर था। बिना किसी अत्युक्ति के मैं यह कह सकता हूँ कि भारत में और कोई दूसरा राष्ट्रीय नेता नहीं है, जो मैंने जो विभिन्न अनुभव किये हैं, उन अनुभवों को प्राप्त करने का दावा कर सके।

इन्हीं अनुभवों के आधार पर मैं इस निर्णय पर पहुँचा हूँ कि भारत के भीतर से हम ज्यादा से ज्यादा जितना भी प्रयास करें वह अपने देश से अंग्रेजों को हटाने के लिये पर्याप्त न होगा। अगर हमारे देश का आन्दोलन हमारे देशवासियों की मुक्ति के लिये पर्याप्त होता तो मैं इतना मूर्ख नहीं हूँ कि अनावश्यक इतना बड़ा खतरा और जोखिम मोल लेता।

भारत छोड़ने का मेरा उद्देश्य संक्षेप में यह है कि देश में जो आन्दोलन चल रहा है, उसे बाहर से मदद दूँ। बाहर की इस अतिरिक्त सहायता के बिना भारत को स्वाधीन करना किसी के भी लिये असम्भव है। देश के राष्ट्रीय संग्राम को जिस अतिरिक्त सहायता की आवश्यकता है, वह वस्तुतः बहुत छोटी है, क्योंकि एक्सिस शक्तियों ने अंग्रेजों को जिस कदर हराया है उसने ब्रिटिश शक्ति और सम्मान को इस कदर छिन्न भिन्न कर दिया है कि हमारा काम अपेक्षाकृत सहज हो गया। हमारे देशवासियों को जिस सहायता की जरूरत थी और अभी भी है, वह दो तरह की है, एक नैतिक और दूसरी भौतिक। प्रथम उन्हें मन में यह विश्वास होना चाहिये कि आगे चलकर विजय उनको ही होगी, दूसरे उन्हें बाहर से सैनिक सहायता मिलनी चाहिये। पहले सहायता की पूर्ति करने के लिये अन्तर्राष्ट्रीय युद्धस्थिति

का अध्ययन करना चाहिये और यह मालूम करना चाहिये कि युद्ध का क्या परिणाम होनेवाला है और दूसरी सहायता की पूर्ति के लिये यह जानना चाहिये कि भारत के बाहर के भारतीय अपने देशवासियों की क्या सहायता कर सकते हैं और ब्रिटिश साम्राज्यवाद के दुश्मनों से अगर संभव हो तो कैसी सहायता लेनी चाहिये ?

इसलिये मेरी योजना के अनुसार भारत के प्रति एकसिस पावर के रुख के संबंध में सोचना भी जरूरी नहीं है। अगर भारत के भीतर और बाहर के भारतीय अपना कर्तव्य पालन करें तो भारतीय जनता के लिये यह संभव है कि भारत से अंग्रेजों को निकाल दें और अपने ३८ करोड़ देशवासियों को स्वाधीन कर दें।

कुछ काँव-काँव करने वाले लोग यह कह सकते हैं जब ३८ करोड़ भारतीय ब्रिटिश शक्ति को भारत से नहीं हटा सके तब ३० लाख प्रवासी भारतीय कैसे हटा सकेंगे ? लेकिन दोस्तों ! आयर्लैण्ड का इतिहास देखिये—अगर ब्रिटिश मार्शल के अन्दर रहने वाले तीस लाख आयरिश, पाँच हजार सशस्त्र सैनिक स्वयं-सेवकों की सहायता से १९२१ में ब्रिटिश सरकार को घुटने टेकने के लिये बाध्य कर सकते हैं, तब तीस लाख प्रवासी भारतीय, भारतस्थित शक्तिशाली आन्दोलन की सहायता से भारत से ब्रिटिश को हटाने की आशा क्यों नहीं कर सकते ?

मुझे यह बात अवश्य कहनी चाहिये कि प्रवासी भारतीय, खासकर पूर्व एशिया प्रवासी भारतीयों को अधिक से अधिक

प्रयास करना होगा। प्रभावपूर्ण ढंग से यह कार्य करने के लिये मेरा इरादा अस्थायी स्वतंत्र भारत सरकार कायम करने का है। इस सरकार का कार्य होगा, भारतीय जनता के तमाम साधन श्रोतों को कार्यसिद्ध के लायक बनाना, और भारत में ब्रिटिश सेना के विरुद्ध नेतृत्व करना और लड़ना। जब संग्राम सफल और भारत स्वतंत्र होगा तब अस्थायी सरकार, स्थायी स्वतंत्र भारत सरकार के लिये स्थान छोड़ देगी, इस सरकार की स्थापना देश की जानता के इच्छानुसार होगी।

मित्रों! आप अब अनुभव करेंगे कि पूर्व एशिया में रहने वाले तीस लाख भारतीयों के लिये समय आ गया है कि तन और धन सम्बन्धी सब साधनों को इस कार्य के लिये अर्पण करें। आधे दिल से कार्य करने से काम नहीं चलेगा। मैं पूरी तैयारी चाहता हूँ, इससे कुछ भी कम नहीं, क्योंकि हमारे शत्रुओं तक ने कहा है, यह सर्वग्रासी युद्ध है।

आज आप अपने सामने भारत की मुक्ति वाहिनी का एक भाग—आजाद हिन्द फौज को देख रहे हैं। आजाद हिन्द फौज ने अपने श्री गणेश की परेड पिछले दिन टाउनहाल के सामने की थी। इसके बाद इन्होंने निश्चय किया है कि ये तब तक चैन न लेंगे जब तक लाल किले के सामने विजय परेड न कर लेंगे। इन्होंने एक नारा अपनाया है, दिल्ली चलो! दिल्ली चलो!! मित्रो! तीस लाख प्रवासी भारतीयों को एक ही नारा अपनाना चाहिये—सर्वग्रासी युद्ध के लिये सर्वग्राही तैयारी!

इस सर्वग्राही तैयार के फलस्वरूप में तीस लाख सैनिक और

तीन करोड़ रुपया चाहता हूँ, मैं बहादुर भारतीय नारियों का एक दल चाहता हूँ जिनसे मृत्युञ्जयी रेजिमेण्ट संगठित करना चाहता हूँ, जो वह तलवार खींचेंगी, जिसे सन् १८५७ के प्रथम भारतीय स्वतंत्र युद्ध में झाँसी की रानी ने खींचा था।

मित्रों ! बहुत समय से हम युरोप में द्वितीय रणक्षेत्र खुलने की बात सुन रहे हैं, लेकिन हमारे देशवासी इस समय सङ्कट में हैं और वे द्वितीय रणक्षेत्र चाहते हैं। पूर्वएशिया में आप अपने तमाम साधन तन, धन मुझे दे दीजिये, मैं आपको द्वितीय रणक्षेत्र देने का वादा करता हूँ, वस्तुतः भारतीय स्वाधीनता संग्राम के लिये दूसरे रणक्षेत्र में मैं दूसरा मोर्चा तैय्यार कर दूँगा।

मित्रों ! मैं इस स्थित में हूँ कि आपको बतला सकूँ कि हमारे दोनों उद्देश्य पूर्ण हो गये। विदेशों के भ्रमण द्वारा मैं देख सकता कि कहाँ क्या हो रहा है और युद्धरत शक्तियों की क्या स्थिति है इसका भी मैंने अध्ययन कर लिया है, देश-देश के भ्रमण और अध्ययन के बाद मैं इस निर्णय पर पहुँचा हूँ कि एंग्लो अमेरिकन साम्राज्यवाद की पराजय निश्चित है। भारत में मैंने अपने देशवासियों को यह सूचना दे दी। मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि संसार भर में मेरे देशवासी पूर्णरूप से जाग्रत हैं और राष्ट्रीय संग्राम में अपना भाग लेने के लिये उत्कण्ठित हैं। मैं यह जानकर भी आनन्दित हुआ कि एक्सिस राष्ट्र वस्तुतः भारत को स्वतंत्र देखना चाहते हैं और अगर भारतीय चाहें तो वे अपनी शक्ति के अनुसार कोई भी सहायता देने के लिये तैयार हैं।

भारत के बाहर के भारतीयों के रुख के विषय में मैं नहीं

सोचता कि एक भी स्त्री-पुरुष ऐसा है जो न चाहता हो कि भारत स्वतन्त्र हो और जो राष्ट्रीय संग्राम में सहायता देने को तैयार न हो। एक्सिस शक्तियों के रुख के सम्बन्ध में अगर किसी को जरा भी शक हो तो मैं उसे पर्याप्त प्रमाणों द्वारा आसानी से विश्वास दिला सकता हूँ कि अपने देशवासियों के बाद आज संसार में वे हमारे श्रेष्ठ मित्र हैं।

मैं आपसे मेरा विश्वास करने को कहता हूँ। मेरे दुश्मन भी यह नहीं कह सकते कि मैं अपने देश के स्वार्थ के विरुद्ध कुछ कर सकता हूँ और जब ब्रिटिश सरकार मुझे हताश न कर सकी, झुका न सकी, लालच दिखाकर अपनी तरफ मिला न सकी तब संसार की कोई शक्ति ऐसा नहीं कर सकती। इसलिये आप विश्वास करें, जब मैं यह कहूँ कि अगर आप ब्रिटिश साम्राज्यवाद के खिलाफ कोई बाहिरी सहायता चाहेंगे तो एक्सिस शक्तियाँ आपको सहायता देंगी। लेकिन आपको बाहिरी मदद की आवश्यकता है या नहीं, इसका निर्णय आप करेंगे, और यह बिना कहे ही समझ लेना चाहिये कि अगर आप बिना सहायता के अपना उद्देश्य पूर्ण कर लें, तो यह भारत के लिये सर्वोत्तम होगा। इसी समय मैं यह भी कह देना चाहता हूँ कि अगर महा शक्तिमान ब्रिटिश सरकार दुनिया भर में भिक्षापात्र लेकर घूम सकती है, यहाँ तक कि गुलाम और गरीब भारतवासियों के समाने हाथ फैला सकती है तो बाहरी सहायता लेने में हमारे लिये कुछ बुराई नहीं है, अगर हम परिस्थितिवश ऐसी सहायता लेने के लिये बाध्य हो जायँ।

अब समय आ गया है कि मैं समस्त संसार और अपने दुश्मनों को बतला दूँ कि किस तरह हम राष्ट्रीय मुक्ति हासिल करने वाले हैं। भारत के बाहर के भारतीय, विशेषकर पूर्व एशिया के भारतीय एक ऐसी सेना का सङ्गठन करने जा रहे हैं जो भारत में ब्रिटिश सेना पर हमला करने में समर्थ हो। जब हम ऐसा करेंगे, एक क्रान्ति उत्पन्न होगी, यह क्रान्ति भारतीय नागरिकों में ही नहीं, ब्रिटिश भारतीय सेना में भी होगी जो इस समय ब्रिटिश झंडे के नीचे है। इस प्रकार जब ब्रिटिश सरकार दोनों तरफ से, बाहर और भीतर से हमले की शिकार होगी तब उसका पतन होगा और भारतीय जनता स्वाधीनता प्राप्त करेगी।

मुक्ति वाहिनी के सैनिकों से

—::o::—

आज का दिन मेरे जीवन का सबसे गर्वीला दिन है। आज भगवान् ने प्रसन्न होकर संसार के सामने यह घोषित करने का अनुपम अवसर और सम्मान मुझको दिया है कि भारत की मुक्ति वाहिनी का जन्म हो गया। जो सिंगापुर एक समय ब्रिटिश साम्राज्य का रक्षागार था, उसी सिंगापुर में यह फौज सैनिक रूप में तैयार हुई। यह सेना भारत को ब्रिटिश शासन से मुक्त नहीं करेगी, यह सेना—भविष्य में स्वतंत्र भारत की सेना का निर्माण भी करेगी हर भारतीय को इसका गर्व होना चाहिये कि यह सेना—उसकी अपनी सेना—शुद्ध भारतीय नेतृत्व में गठित हुई है और जब ऐतिहासिक अवसर आयगा भारतीय नेतृत्व में ही रणक्षेत्र हो जायगी।

कुछ ऐसे भी लोग है, जिन्होंने एक समय सोचा था कि वह साम्राज्य जिस पर सूर्य कभी अस्त नहीं होता, हमेशा कायम रहने वाला साम्राज्य है। मेरे दिमाग में ऐसा विचार कभी नहीं आया। इतिहास ने मुझे सिखलाया कि हर साम्राज्य का निर्बल होना और पतन होना अनिवार्य है। मैंने खुद अपनी आँखों से उन शहरों और किलों को देखा है जो एक समय साम्राज्य के रक्षागार थे, वे ही उसकी कब्र बन गये। ब्रिटिश साम्राज्यवाद

की कब्र पर खड़ा हुआ एक बच्चा भी विश्वास कर रहा है कि ब्रिटिश साम्राज्यवाद भूतकाल की चाज बन गयी।

सन् १९३९ में जब फ्रांस ने जर्मनी के विरुद्ध युद्ध घोषणा की और युद्ध छिड़ गया, उस समय हर जर्मन सैनिक के ओठों पर एक ही नारा था—पेरिस को! पेरिस को!! जब दिसम्बर १९४१ में जापान के बहादुर सिपाहियों ने कूच की उस समय उनके ओठों पर एक नारा था—सिंगापुर! सिंगापुर!!

साथियों! मेरे सिपाहियों! आपका नारा हो, दिल्ली चलो! दिल्ली चलो!! मैं नहीं जानता स्वाधीनता के इस युद्ध में हम से कितने बचे रहेंगे, लेकिन मैं यह जानता हूँ कि हम आखिर में जीतेंगे और हमारा कार्य तब तक समाप्त न होगा जब तक कि बाकी बचे हुए बहादुर पुरानी दिल्ली के लाल किले के सामने ब्रिटिश साम्राज्य की दूसरी कब्र पर विजय परेड न कर लेंगे।

मैंने अपने सार्वजनिक जीवन में हमेशा अनुभव किया है कि भारत स्वतंत्रता के लिये हर तरह से तैयार है, सिर्फ एक कमी है, वह कमी है मुक्ति सेना की। अमेरिका का जार्ज वाशिंगटन लड़ सका और स्वाधीनता पा सका क्योंकि उसके पास सेना थी। गैरीबाल्डी इटली को स्वतंत्र कर सका, क्योंकि उसके पीछे सशस्त्र स्वयंसेवक थे। यह आपका सौभाग्य और सम्मान है कि आप पहले आगे बढ़े और आपने भारत की राष्ट्रीय सेना का संगठन किया। आपने यह काम करके स्वाधीनता के मार्ग में जो एक अन्तिम रुकावट थी उसे हटा दिया। आनन्द और गर्व अनुभव कीजिये कि ऐसे महापुण्य कार्य में आप सबसे आगे हैं। मुझे यह

याद दिलाने दीजिये कि आपको दोहरा काम करना है। सेना की शक्ति से अपना खून देकर आपको आजादी हासिल करना है। और तब जब भारत स्वतंत्र है, आपको स्वतंत्र भारत की सेना का संगठन करना है, जिसका काम होगा, हमेशा हमारी स्वधीनता की रक्षा करना। हमें अपना राष्ट्रीय रक्षा व्यूह इस अटल आधार पर बनाना है कि हम फिर भी कभी अपने इतिहास में अपनी आजादी न गँवायें।

सैनिक की हैसियत से आपको तीन आदर्श सामने रखना चाहिये और हमेशा उन्हीं पर कायम रहना चाहिये वे आदर्श हैं—वफादारी, कर्तव्य और बलिदान। सिपाही, जो अपने राष्ट्र के प्रति वफादार रहते हैं और जो हर हालत में अपना कर्त्तव्य पालन करते हैं और जो अपने जीवन की बलि देने के लिये हमेशा तैयार हैं, वे अजेय हैं। अगर आप भी अजेय होना चाहते हैं तो अपने हृदय पर इन आदेशों को अंकित कर लीजिये, सच्चे सैनिक के लिये फौजी और आत्मिक शिक्षा आवश्यक है। आप अपने को और अपने साथियों को इस प्रकार शिक्षित करें कि हर एक सिपाही का अपने में अगाध विश्वास हो, उसके मनमें सदा यह रहे कि वह दुश्मन से हर तरह से बढ़ चढ़कर है, उसे मृत्यु का जरा भी भय न हो, अगर आवश्यक हो तो संगीन स्थिति में स्वयं अपने मन से कर्तव्य पालन कर सके। वर्तमान महायुद्ध में आपने अपनी आँखों से देखा कि बहादुरी, निर्भयता, प्रचण्डता के साथ मिलकर वैज्ञानिक सैनिक-शिक्षा आश्चर्यजनक कार्य कर सकती है। इस उदाहरण

से जितना लाभ उठा सकें, उठाइये। भारत माता के लिये फर्स्ट क्लास आधुनिक सेना संगठित कीजिये।

आप में से जो अफसर हैं, उनसे मैं यह कहना चाहता हूँ कि, आपका उत्तर-दायित्व गुरुतर है। गोकि संसार की हर सेना के अफसर का दायित्व महान् है, किन्तु आपका दायित्व महत्तर है। क्योंकि अपनी गुलामी के कारण हमारे सामने, मुकदन, पोर्ट आर्थर या सीडन की भांति कुछ नहीं है जो हमें अनुप्रमाणित करे। ब्रिटिश ने हमे जो सिखाया है उसे हमें भुला देना है और उससे भी ज्यादा हमें सीखना है। मुझे विश्वास है कि आप लोग अवसर के अनुकूल होंगे और उस कार्य को पूर्ण करेंगे जिसका भार आपके देशवासियों ने आपके मजबूत कंधों पर दिया है। याद रखिये! आपको एक सेना का संगठन करना है। याद रखिये, ब्रिटिश ने विभिन्न रणक्षेत्रों में हार खायी है, विशेषकर अपने निकम्मे अफसरों के कारण, यह भी याद रखिये कि आपमें से ही स्वाधीन भारत की सेना और उसके पदाधिकारी निकलेंगे।

मैं आप सब से कह देना चाहता हूँ कि इस युद्धकाल में आपको यह अनुभव प्राप्त करना है और यह सफलता प्राप्त करनी है जो भविष्य में हमारी सेना के लिये राष्ट्रीय परम्परा कायम करेगी। बहादुरी, निर्भयता और आत्मबल के बिना कोई भी सेना शक्तिमान दुश्मन के विरुद्ध कायम नहीं रह सकती।

साथियों! आपने स्वेच्छापूर्वक वह ध्येय स्वीकार किया है जो अनुपम है, जिसकी पूर्ति के लिये कोई भी त्याग तथा अपने

जीवन की बलि देना भी बहुत नहीं है। आज आप भारत के राष्ट्रीय सम्मान के रक्षक हैं, और भारत की आशा तथा महत्वाकांक्षा के स्वरूप हैं। आप इस तरह का काम कीजिये कि देशवासी आपको आशीर्वाद दें और भावी भारतीय संतान आपका गर्व करे।

मैंने कहा है कि आज का दिन मेरे जीवन का सबसे गर्वीला दिन है। क्योंकि एक गुलाम बनाये हुए देश के लिये मुक्ति सेना का प्रथम सिपाही होने से बढ़कर और कुछ भी अधिक गौरव और सम्मान नहीं हो सकता। मगर यह सम्मान अपने साथ दायित्व लिये हुए है। मैं इसे अच्छी तरह अनुभव कर रहा हूँ। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि अंधकार और प्रकाश में, दुख और आनन्द में, कष्ट और विजय में मैं आपके साथ रहूँगा। मैं आपको कुछ नहीं दे सकता। मेरे पास भूख, प्यास, आत्म निग्रह, कूच पर कूच और मृत्यु है। साथियों! अगर आप जीवन और मृत्यु में मेरा अनुसरण करें—जैसा कि मुझे विश्वास है कि आप करेंगे—मैं आपको विजय और स्वाधीनता तक ले चलूँगा। यह कोई बात नहीं है कि हममें से कौन भारत को स्वतंत्र देखने के लिये जीवित रहेगा, हमारे लिये इतना ही काफी है कि भारत आजाद हो और हम अपना सर्वस्व आजादी के लिये दे दें। भगवान् हमारी सेना को आशीर्वाद दे और भावी युद्ध में हमें विजय दे।

इन्कलाब जिन्दाबाद! आजाद हिन्द जिन्दाबाद!!

भारत को आज़ाद करूँगा

—::०::—

भगवान के नाम पर मैं यह पवित्र शपथ ग्रहण करता हूँ कि भारत और अपने अड़तीस करोड़ देशवासियों को आजाद करूँगा। मैं सुभाषचन्द्र बोस अपने अन्तिम साँस तक भारत की आजादी का पवित्र संग्राम जारी रखूँगा।

मैं हमेशा भारत का सेवक बना रहूँगा और अड़तीस करोड़ भारतीय भाई-बहनों की भलाई में लगा रहूँगा। यह मेरे लिये, मेरा सर्वोच्च कर्तव्य होगा। भारत की स्वाधीनता प्राप्त करने के बाद भी, मैं प्राप्त स्वाधीनता की रक्षा के लिये अपने रक्त का अन्तिम बिन्दु बहाने को प्रस्तुत रहूँगा।

इसके बाद नेताजी ने घोषणा की :—

सन् १७५७ में बङ्गाल में अंग्रेजों से प्रथम बार हारने के बाद, भारतीय जनता लगातार सौ वर्षों तक सख्त और भयङ्कर युद्ध लड़ती रही। इन सौ वर्षों के युद्धों का इतिहास अनुपम बहादुरी और आत्मबलिदान के उदाहरणों से ओत-प्रोत है और इतिहास के उन पृष्ठों में बङ्गाल के सिराजुदौला और मोहनलाल, दक्षिण भारत के टीपु सुल्तान, हैदरअली, वेलुथम्पी, महाराष्ट्र के अप्पा साहब भोंसले और पेशवा बाजीराव, अवध की बेगम, पञ्जाब के सरदार श्यामसिंह अटारीवाला, झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई, तांतिया टोपी, महाराजा कुँवरसिंह और नाना साहब स्वर्णा-

क्षरों से अंकित हैं। दुर्भाग्यवश हमारे पूर्व पुरुषों ने पहले यह अनुभव नहीं किया कि अँग्रेज समस्त भारत के लिये खतरनाक हैं। इसलिये दुश्मन के खिलाफ उन्होंने संयुक्त मोर्चा नहीं बनाया। आखिर जब भारतीय जनता ने वास्तविकता पहचानी तब उन्होंने सङ्गठित होकर बहादुर शाह के झण्डे के नीचे १८५७ में स्वाधीन व्यक्ति की हैसियत से आखिरी लड़ाई लड़ी।

सन् ५७ के बाद अँग्रेजों द्वारा जबरन निरस्त्र किये जाने और आतंक तथा अत्याचार के शिकार होकर भारतीय कुछ काल तक कुछ न कर सके, लेकिन १८८५ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के जन्म के साथ नवीन जागृति आरम्भ हुई। सन् १८८५ से प्रथम महायुद्ध की समाप्ति तक के समय में भारतीयों ने अपनी स्वाधी-नता पाने के लिये हर सम्भव उपायों का अवलम्बन किया—जैसे आन्दोलन, प्रचार, ब्रिटिश वस्तु बहिष्कार क्रान्तिकारी कार्य-वाही और सशस्त्र विद्रोह। मगर सब प्रयत्न विफल हुए। आखिर जब १९२० में भारतीय विफलता की ग्लानि से पीड़ित थे, और नये साधन के लिये भटक रहे थे, महात्मा गांधी असहयोग और नागरिक अवज्ञा के नवीन अस्त्रों के साथ आगे आये।

महात्मा गान्धी के आगमन से भारतीयों ने राजनैतिक जाग-रूकता ही नहीं पाई बल्कि वे एक राजनैतिक सङ्गठित ताकत के रूप में आ गये। अब भारतीय एक आवाज में अपनी बात कह सकते हैं, और एक लक्ष्य की प्राप्ति के लिये एक होकर उद्योग कर सकते हैं। सन् १९३७ से १९३९ तक आठ प्रान्तों में मंत्रिमंडल के कामों द्वारा उन्होंने यह प्रमाणित कर दिया कि वे अपने देश का प्रबन्ध

स्वयम् कर सकते हैं। इस प्रकार वर्तमान महायुद्ध के समय भारत की स्वाधीनता के अन्तिम संग्राम के लिये जमीन तैयार हो गयी।

अपनी वंचकता से भारतीयों को छिन्न-भिन्न कर, शोषण और लूट से भारतीयों को निराहार और मृत्यु के मुख से ढकेल कर, भारत में ब्रिटिश शासन ने अपने को भारतीयों की सद्भावना से एकदम वंचित कर दिया और अब उसका नगण्य अस्तित्व रह गया है। इस दुखद शासन के बचे-खुचे कचड़े को जलाने के लिये एक मामूली लपट की जरूरत है। उस लपट को प्रज्वलित करने का काम भारत की मुक्ति वाहिनी का है।

अब चूंकि आजादी का सूर्य उदय होने ही वाला है, इसलिये भारतीयों का कर्तव्य है कि वे अपनी अस्थायी सरकार कायम करें, और अपनी सरकार के अधीन स्वाधीनता की अन्तिम लड़ाई चलावें। लेकिन सम्पूर्ण नेताओं के जेल में बन्द रहने और भारत की जनता के पूर्ण निशस्त्र होते हुए यह सम्भव नहीं है कि भारत में अस्थायी सरकार कायम की जाय या उस सरकार के आधीन सशस्त्र संग्राम चलाया जाय। इसलिये पूर्व एशिया की भारतीय स्वाधीनता का पहला कर्तव्य है कि वह यह कार्य यानी अस्थायी सरकार का संगठन, और आजाद हिन्द फौज द्वारा स्वाधीनता युद्ध का सञ्चालन करे।

अस्थायी सरकार को हक है, इसलिये वह हर भारतीय की वफादारी का दावा करती है। यह सरकार सबको धर्मगत स्वाधीनता और समान हक और समान सुविधा देने की गारण्टी करती है। यह सरकार अपने इस दृढ़ सङ्कल्प की घोषणा करती

है कि वह ऐसी नीति का अनुसरण करेगी कि समस्त राष्ट्र और उसके समस्त भाग सुख और समृद्धि शाली हों और विदेशी सरकार द्वारा जन्म दिये गये सब भेद-भावों को मिटा कर देश की सब सन्तानों को समान भाव से देखेगी।

भगवान के नाम पर और पिछली पीढ़ी जिसने भारतीय जनता को एक राष्ट्र के रूप में सुसम्बद्ध किया उसके नाम पर और उन शहीदों के नाम पर जिन्होंने हमारे सामने बहादुरी और आत्म बलिदान की परम्परा रखी है, हम भारतीय जनता से अपील करते हैं कि वे हमारे झण्डे के नीचे समवेत होकर भारत की स्वाधीनता के लिये प्रयत्न करें। ब्रिटिश और उनके मित्रों के खिलाफ अन्तिम संग्राम चलाने के लिये हम भारतीयों का आह्वान करते हैं कि वे पूरे जोशो-खरोश और आत्म नियंत्रण तथा विजय में अडिग विश्वास के साथ संग्राम चलायें जब तक कि दुश्मन भारत से न हटा दिया जाय और जब तक भारतीय फिर स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में न हो जायँ।

भारत की तत्कालीन परिस्थिति का विश्लेषण करते हुए वे बोले, पिछले महीनों में भारत की जनता के कष्ट बढ़ते ही जाते हैं, पर भारत की आन्तरिक अवस्था इस महीने में जिस तरह की हो गयी है, वह हमारी उद्देश्य पूर्ति के पक्ष में है।

भारत के विभिन्न भागों में खासकर बङ्गाल में अकाल की परिस्थिति ने राजनैतिक उद्विग्नता को सैकड़ों गुणा बढ़ा दिया है। इसमें कोई शक नहीं कि लगभग चार वर्षों से ब्रिटेन के युद्ध के लिये भारत के अन्न और अन्य स्रोतों को शोषण करने के

कारण ही अधिकांशतः अकाल की अवस्था उत्पन्न हो गयी है। आपको मालूम है कि अपने संघ की ओर से अपने भूखे देशवासियों के लिये एक लाख टन चावल देने का आधार बिना किसी शर्त के रखा था, भारत स्थित ब्रिटिश अधिकारी वर्ग ने इस उपकार को अस्वीकार ही नहीं किया बल्कि बदले में लांछित भी किया, शायद आप जानते होंगे जुलाई से अब तक मैं कई बार मलाया, श्याम, इण्डो चीन, बर्मा का दौरा कर चुका। अपने दौरे में मैंने भारतीयों में जो उत्साह देखा उससे मुझे बढ़ावा ही नहीं मिला बल्कि मेरा विश्वास और आशा भी बढ़ गयी।

मैं आपको यह भी बता देना चाहता हूँ कि हम सिर्फ भावी संग्राम की योजना और तैय्यारी ही नहीं कर रहे हैं, बल्कि युद्धोत्तर निर्माणकार्य की योजना और तैय्यारी भी कर रहे हैं। हम उन परिस्थितियों की अन्दाज कर सकते हैं जो एंग्लो अमेरिकनों को अपने देश से निकाल दिये जाने के बाद होंगी। इसलिये हमनें अपने प्रधान कार्यालय में एक पुनर्निर्माण विभाग खोला है। जहाँ कि युद्धोत्तर समस्याओं का अध्ययन हो रहा है। सैनिक कार्यों की प्रगति के साथ-साथ पुनर्निर्माण के लिये भी कार्य-कर्त्ताओं को शिक्षा दी जा रही है। सारांश यह कि हम भावी युद्ध की तैयारी और उसके बाद हमारे जिम्मे जो कार्य आवेंगे उनके लिये सब कुछ कर रहे हैं।

स्वभावतः ही यह सर्वोत्तम होता अगर हम भारत में अपनी सरकार संगठित कर पाते, और अगर वह सरकार ही स्वाधीनता संग्राम चलाती। मगर भारत की अवस्था यह है कि तमाम

प्रतिष्ठित नेता जेल में हैं, ऐसी अवस्था में यह आशा करना व्यर्थ है कि भारत की सीमा के अन्दर अस्थायी सरकार गठित होगी। इसी प्रकार यह भी बिलकुल नाउम्मीदी है कि देश में अन्तिम संग्राम का सङ्गठन और सञ्चालन होगा। इसलिये पूर्व एशिया के भारतीयों का फर्ज है कि वे इस कार्य को अपने हाथ में लें।

हमें जरा भी शक नहीं है कि जब हम अपनी सेना सहित भारत की सीमा पार करेंगे और भारत भूमि पर राष्ट्रीय झण्डा फहरायेंगे, भारत में वास्तविक विद्रोह होगा, यह क्रान्ति ही देश में ब्रिटिश शासन का अन्त करेगी।

राष्ट्रीय सेना के सङ्गठन ने पूर्व एशिया के स्वाधीनता आन्दोलन को वास्तविक और गम्भीर बना दिया। अगर राष्ट्रीय सेना का सङ्गठन न होता तो पूर्व एशिया में भारतीय स्वाधीनता सङ्घ एक प्रचार करने वाली संस्था ही रहती। राष्ट्रीय सेना के अस्तित्व के कारण ही यह सम्भव और आवश्यक हो गया कि अस्थायी सरकार का गठन किया जाय। भारतीय स्वाधीनता सङ्घ से अस्थायी सरकार का जन्म हुआ, जिसका कार्य भारत की स्वाधीनता की लड़ाई छेड़ना और उसका सञ्चालन करना है।

अस्थायी सरकार का गठन कर हम भारत की आन्तरिक अवस्था की जिस कमी को महसूस करते हैं उसे पूरा करते हैं और साथ-ही-साथ इतिहास का अनुसरण भी करते हैं। सन् १९१६ में आयरिश जनता ने अस्थायी सरकार बनायी, पिछले महायुद्ध में जेकों ने भी यही किया था, अनातोलिया में तुर्कों ने कमाल पाशा के नेतृत्व में भी अपनी सरकार बनायी थी।

महात्माजी के प्रति

—::o::—

महात्माजी !

ब्रिटिश हवालात में श्रीमती कस्तुरबा के दुखद स्वर्गवास के पश्चात् आपके देशवासियों के लिये यह बिलकुल स्वाभाविक है कि वे आपके स्वास्थ्य के सम्बन्ध में सचेत हो जायँ। भारत के बाहर के भारतीयों के लिये—तरीकों में भेद—घरेलू मत-भेदों के समान हैं। सन् १९२९ दिसम्बर में लाहौर कांग्रेस के स्वाधीनता प्रस्ताव समर्थन के बाद से भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के सब सदस्यों के सामने एक ही लक्ष्य है। भारत के बाहर के भारतीयों की दृष्टि में भारत में वर्तमान जागृति पैदा करने वाले आप ही हैं। प्रवासी भारतीय और भारत की स्वतंत्रता के विदेशी मित्रों में आपका सम्मान तब से सौ गुना बढ़ गया, जब से आपने अगस्त १९४२ में भारत छोड़ो प्रस्ताव का समर्थन किया।

यह हमारे लिये घातक भूल होगी अगर हम ब्रिटिश सरकार और ब्रिटिश जनता में भेद करें। इसमें शक नहीं कि अमेरिका की तरह ब्रिटेन में भी ब्रिटिश आदर्शवादियों का ग्रूप है, जो भारत स्वतंत्र देखना पसन्द करेगा। ये आदर्शवादी, जो अपने

ही देशवासियों द्वारा दिमाग फिरे हुए कहे जाते हैं, अत्यन्त अल्पमत में हैं। जहाँ तक भारत का सम्बन्ध है, ब्रिटिश सरकार और ब्रिटिश जनता का एक ही मतलब है। अमेरिका के युद्धा-द्देश्यों के सम्बन्ध में, मैं कह सकता हूँ कि वाशिंगटन का शासक मण्डल संसार के आधिपत्य का स्वप्न देख रहा है। यह शासक गुट्ट और उसके विलक्षण समर्थक साफ-साफ अमेरिकन शताब्दी की बात कर रहे हैं। ये इस गुट्ट में कुछ इतना आगे बढ़ गये हैं कि ब्रिटेन को भी अमेरिका की ४९वीं स्टेट कहते हैं।

महात्माजी! मैं आपको विश्वास दिला सकता हूँ कि इस कठिन यात्रा का निश्चय करने के पहले मैंने, दिन, सप्ताह, महीने इस मामले को हर पहलू विचार में लगाये। अपनी योग्यता-नुसार इतने काल तक अपने देशवासियों की सेवा करने के बाद मैं देश विद्रोही बनने की इच्छा नहीं कर सकता, या किसी को मुझे देशद्रोही कहने का तर्क सम्मत आधार नहीं दे सकता।

मेरे देशवासियों के स्नेह के बल से मैंने वह सर्वोच्च सम्मान प्राप्त किया था जो भारत में किसी भी जन सेवक के लिये प्राप्त करना संभव हुआ है। मैंने ऐसे साथियों का दल बना लिया था जो मेरे अन्दर पूर्ण विश्वास रखते थे। विदेश जाना अपने जीवन, भविष्य और अपने दल के भविष्य की जोखिम उठाना था। अगर मुझे जरा भी आशा होती कि भारत के बाहर की कार्यवाही के बिना हम स्वाधीनता प्राप्त कर सकते हैं तो संकटकाल में मैंने भारत कदापि न छोड़ा होता। अगर मुझे कोई भी आशा होती कि अपने जीवनकाल में हम दूसरा

मौका—ऐसा स्वर्णसुयोग जैसा कि वर्तमान महायुद्ध ने हमें दिया है, आजादी हासिल करने के लिये पावेंगे तो मैं घर से बाहर नहीं जाता।

धुरी शक्तियों के सम्बन्ध में मुझे एक सवाल का जवाब देना है। क्या यह सम्भव है कि मैं उनके द्वारा ठग लिया गया? सारा संसार यह मानता है कि अँग्रेजों में अव्वल दर्जे के चालाक और धूर्त राजनीतिक पाये जाते हैं। जिसने उनके साथ जीवनभर लोहा लिया, वह संसार के किसी राजनीतिज्ञ द्वारा नहीं ठगा जा सकता। अगर ब्रिटिश राजनीतिज्ञ मुझे ठग या बचा नहीं सकते तो कोई राजनीतिज्ञ ऐसा नहीं कर सकते और अगर ब्रिटिश सरकार जिसके हाथों मैंने जेल, शारीरिक यातना भोगी है, मुझे निराश न कर सकी, तब कोई और ताकत ऐसा करने की आशा नहीं कर सकती। मैंने कभी कोई ऐसा कार्य नहीं किया, जिसने तिल मात्र भी राष्ट्र के सम्मान, स्वाभिमान, स्वार्थ के साथ समझौता किया हो।

एक समय था जब जापान हमारे दुश्मन का, मित्र था। जब तक एंग्लो जापानी सम्बन्ध रहा, मैं जापान नहीं आया। मैं उस वक्त तक भी जापान नहीं आया जब दोनों देशों में साधारण राजनैतिक सम्बन्ध बना हुआ था। जब जापान ने अंग्रेजों और अमेरिकनों के खिलाफ युद्ध घोषणा की तब मैंने अपनी इच्छा से जापान जाने का इरादा किया। मेरे अन्य देशवासियों की भांति सन् १९३७-१९३८ में मेरी सहानुभूति चुंगकिंग (चीन) के साथ थी। आपको स्मरण होगा कि कांग्रेस के सभापति की हैसियत

से सन् '१९३८ में चीन को मेडिकल मिशन भेजने का मैं जिम्मेदार था।

महात्माजी! अन्य किसी की अपेक्षा आप अच्छी तरह जानते हैं, कि थोथे वादों के प्रति भारतीय जनता कितनी सन्देहशील है। अगर जापान की घोषित नीति सिर्फ थोथी घोषणा होती तो मैं उसके प्रभाव में आने वाला अन्तिम व्यक्ति होता।

महात्माजी! अब मैं अस्थायी सरकार के सम्बन्ध में कुछ कहना चाहता हूँ जिसे हमने यहाँ स्थापित किया है। अस्थायी सरकार का एक लक्ष्य है, सशस्त्र संग्राम द्वारा ब्रिटिश जूए से भारत को मुक्त करना। एक बार भारत से दुश्मनों के हटा देने और शान्ति शृंखला स्थापित होते ही अस्थायी सरकार का कार्य पूरा हो जायगा। अपने प्रयत्न कष्ट और बलिदान का जो एक मात्र पुरस्कार हम चाहते हैं, वह अपनी मातृभूमि की स्वाधीनता है। हम में से बहुत से ऐसे हैं जो भारत स्वतन्त्र होने पर राजनैतिक क्षेत्र से विदा होना चाहते हैं।

हम लोगों से अधिक और कोई प्रसन्न न होगा, अगर किसी तरह भारतवासी अपने प्रयत्न से अपने को मुक्त करने में समर्थ हो जायँ या ब्रिटिश सरकार आपके 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव को स्वीकार कर उसे कार्य रूप में परिणत कर दें। हम इस अनुमान पर आगे बढ़ रहे हैं कि दो में से एक भी सम्भव नहीं है और सशस्त्र संग्राम अनिवार्य है।.........भारत की स्वाधीनता का अन्तिम संग्राम प्रारम्भ हो गया। आजाद हिन्द फौज की सेनाएं

भारतभूमि पर युद्ध कर रही हैं, तमाम दिक्कतों और कठिनाइयों के होते हुए भी धीरे-धीरे दृढ़ता पूर्वक वे आगे बढ़ रहे हैं। यह सशस्त्र संग्राम जारी रहेगा, जब तक कि आखिरी अँग्रेज भारत से बाहर न कर दिया जायगा और दिल्ली में वायसराय भवन पर राष्ट्रीय पताका न फहरायेगी। राष्ट्र के पिता! भारत की मुक्ति के इस पवित्र संग्राम में हम आपकी सद्भावना और आशीर्वाद चाहते हैं।

नेताजी और महात्माजी

—::०::—

त्रिपुरी कांग्रेस के प्रस्ताव के अनुसार महात्माजी की सलाह से कांग्रेस कार्यकारिणी गठन करने और कांग्रेस के दोनों दलों में मतभेद मिटाने के लिये जो पत्र व्यवहार हुआ, उसका भारत की राजनीति में बहुत महत्व है, क्योंकि इन पत्रों से दोनों नेताओं की विशिष्ठता प्रकट होती है।

तार

जीलगोरा
२४ मार्च १९३९

महात्मा गान्धी
बिड़ला हाउस, नई दिल्ली।

कांग्रेस के काम के सम्बन्ध में आपने शरत् को जो सुझाव दिया है उसे और निकट भविष्य में आप से मिलने की असम्भावना को दृष्टि में रख कर मैं यह आवश्यक समझता हूँ कि पत्र के जरिये आपसे सलाह-मशविरा करूँ। सुभाष।

नयी दिल्ली
२५ मार्च १९३९

राष्ट्रपति बोस
जीलगोरा।

तार मिला। मैं मौलाना से मिलने कल इलाहाबाद गया था

मैं बात-चीत करने के लिये उत्सुक था। मैंने ट्रेन से पत्र भेजा है। पत्र की प्रतीक्षा में हूँ। आशा है स्वास्थ्य सुधर रहा होगा। प्रेम बापू।

जीलगोरा

२५ मार्च १९३९

महात्मा गान्धी

बिड़ला हाउस, नई दिल्ली।

आपका तार मिला, आपका पत्र न मिलने तक अपना पत्र रोक लेता हूँ, आपका सुभाष !

जीलगोरा

२५ मार्च १९३९

महात्मा गान्धी

बिड़ला हाउस, नयी दिल्ली।

आपका पत्र नहीं मिला, अतएव अपना पत्र भेज रहा हूँ। सुभाष।

राष्ट्रपति का पत्र

जीलगोरा

२५ मार्च १९३९

प्रिय महात्माजी !

कांग्रेस के कार्य को रोक देने का जो लोग मेरे ऊपर इल्जाम लगा रहे हैं, उनके जवाब में मैंने जो वक्तव्य दिया है, आशा है आपने उसे देखा होगा। हमारे सामने सबसे जरूरी

और शीघ्र करने का काम कार्यकारिणी का गठन है। उस समस्या के सन्तोषजनक हल के लिये अन्य महत्वपूर्ण समस्याओं के सम्बन्ध में विचार विमर्प आवश्यक है, फिर भी मैं कार्य-कारिणी के गठन को ही पहले लेता हूँ।

इस समस्या के सम्बन्ध में अगर आप निम्नलिखित विषयों पर अपना मत प्रकट करेंगे तो मैं कृतज्ञ होऊँगा।

(१) कार्यकारिणी के गठन के सम्बन्ध में आपकी वर्तमान धारणा क्या है ? यह एक मत वालों की होनी चाहिये, या इसमें विभिन्न पार्टियों के व्यक्ति होने चाहिये।

(२) अगर आपका मत हो कि कार्यकारिणी एक मत की हो तो फिर उसमें एक तरफ सरदार पटेल और दूसरी ओर मेरे जैसे आदमी की गुञ्जाइश नहीं है।

(३) अगर आप सहमत हों कि कार्यकारिणी में विभिन्न दलों के लोग हों तो उनकी संख्या कितनी हो। मेरी राय में कांग्रेस में दो दल या गुट हैं, वे कुछ कम या ज्यादा लगभग बराबर से हैं। सभापति के चुनाव में बहुमत हमारे साथ था, त्रिपुरी में दूसरी तरफ, मगर यह कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी की वजह से हुआ। अगर सोशलिस्ट पार्टी निरपेक्ष न रहती तो हमारा बहुमत होता।

(४) मैं सोचता हूँ यह व्यवस्था ठीक होगी कि सात नाम मैं पेश करूँ और आप सरदार साहब से सात नाम देने को कहें।

(५) अगर मैं सभापति रहूँ और ठीक से काम करूँ तो यह आवश्यक है कि जनरल सेक्रेटरी मेरी सलाह से हो।

(६) कोषाध्यक्ष का नाम सरदार पटेल पेश कर सकते हैं।

अब मैं पण्डित पन्त के प्रस्ताव के दो Implications का उल्लेख करना चाहता हूँ। क्या आप इस प्रस्ताव को मेरे लिये अविश्वास का प्रस्ताव मानते हैं और जिसके परिणाम स्वरूप क्या आप मेरा पद त्याग करना पसन्द करेंगे! यह सवाल मैं इसलिये कहता हूँ कि पन्त प्रस्ताव की, उसका समर्थन करने वालों ने भी अनेक व्याख्याएँ की हैं।

दूसरा सवाल यह है कि पण्डित पन्त के प्रस्ताव के पास होने के बाद कांग्रेस सभापति की स्थिति दरअसल क्या होती है? कांग्रेस विधान की धारा कार्यकारिणी की नियुक्त के सम्बन्ध में सभापति को कुछ अधिकार देती है, और विधान की वह धारा अभी तक अपरिवर्तित है। साथ ही पण्डित पन्त का प्रस्ताव कहता है, मैं आपकी इच्छा के अनुसार कार्यकारिणी बनाऊँ! इसका मतलब क्या है? क्या आप अपनी स्वतंत्र इच्छा से कार्यकारिणी के नाम चुनेंगे और मैं सिर्फ उनकी घोषणा कर दूँगा, जिसका अर्थ होगा, विधान की उक्त धारा बिना परिवर्तित किये ही, बेकार कर दी जाय।

इस सम्बन्ध में मैं यह स्पष्ट कह देना चाहता हूँ कि पण्डित पन्त के प्रस्ताव में यह धारा बिलकुल अवैधानिक और Ultra-vires है। दरअसल पण्डित पन्त का प्रस्ताव ही out of order था क्योंकि वह बहुत देर में मिला था। यह मेरे अधिकार में था कि मैं पण्डित पन्त के प्रस्ताव को पेश न होने देता, जैसा कि मौलाना आजाद ने राष्ट्रीय माँग के प्रस्ताव के सम्बन्ध में शरत्-बोस के संशोधन को अस्वीकृत कर दिया था। इसके बाद पण्डित

पन्त के प्रस्ताव की अनुमति देने के बाद भी मैं प्रस्ताव के इस माँग को out of order करार दे सकता था क्योंकि यह कांग्रेस विधान थी। १५हवीं धारा के खिलाफ था। लेकिन मैं प्रजातंत्रीय भावनाओं की कद्र अधिक करता हूँ और वैधानिक बातों पर विशेष जोर नहीं देता। मैंने सोचा, जब विरोधी मत की सम्भावना है तब विधान की शरण लेना अमानवीय होगा।

पत्र समाप्त करने के पहले मैं एक और विषय का उल्लेख करना चाहता हूँ। तमाम दिक्कतों अड़चनों और कठिनाइयों के रहते हुए भी अगर मुझे सभापति पद पर बने रहना है तो आप किस तरह मेरा काम करना पसन्द करेंगे। मुझे याद है कि आपने पिछले बारह महीनों में अक्सर मुझे सलाह दी है कि आप नहीं चाहते कि 'डमी' सभापति रहूँ, आप यह पसन्द करेंगे कि मैं अपने मत पर जोर दूँ। १५ फरवरी को जब मैंने देखा कि आप मेरे कार्य-क्रम से सहमत नहीं हैं, मैंने कहा था, मेरे सामने दो रास्ते हैं, या तो अपने को दबाऊँ या अपनी धारणाओं के अनुसार काम करूँ! आपने कहा था अगर मैं आपके मत को अपनी मर्जी से नहीं मान सकूँ तो मुझे अपने को दबाना नहीं चाहिये। अगर मैं सभापति रहूँ तो क्या आप पिछले साल की तरह सलाह देंगे कि मैं 'Dummy' सभापति नहीं रहूँ। जो कुछ भी मैंने कहा है उसका अभिप्राय है कि जो कुछ हो गया है उसके बाद भी यह सम्भव है कि कांग्रेस के सब दल मिलकर काम करें। दूसरे पत्र में मैं साधारण समस्याओं के सम्बन्ध में लिखूँगा, जिनका मैंने अपने वक्तव्य में जिक्र किया है।

मेरा स्वास्थ्य धीरे-धीरे ठीक हो रहा है। अच्छा होने में प्रधानवादी पूरी नींद का न आना, मालूम होता है। प्रणाम।

आपका—सुभाष।

गान्धीजी का पत्र

रेलगाड़ी में—
पता—बिड़ला हाउस,
नयी दिल्ली—२४ मार्च ३९

प्रिय सुभाष!

आशा है, स्वाथ्य ठीक हो रहा होगा मैं शरत् के पत्र की प्रतिलिपि और अपने उत्तर की नकल भेज रहा हूँ। अगर यह पत्र तुम्हारे भावों का प्रतिनिधित्व करता हो तो मेरे सुभाव लागू हैं। किसी भी तरह केन्द्र में जो अराजय फैल रहा है उसका अन्त होना चाहिये। तुम्हारे अनुरोध के अनुसार मैं बिलकुल चुप हूँ, गोकि मेरे ऊपर दबाव डाला जा रहा है कि मैं इस विषय में अपनी राय प्रकट करूँ!

मैंने सर्वप्रथम इलाहाबाद में प्रस्ताव देखा। यह मुझे बिलकुल साफ मालूम होता है। कुछ करना तुम्हारे हाथ में है। मैं नहीं जानता राष्ट्रीय कार्य करने के लिये तुम्हारा स्वास्थ्य कितना उपयुक्त है। अगर स्वास्थ्य ठीक न हो तो मेरा ख्याल है जो वैधानिक रास्ता है वही तुम स्वीकार करोगे। मैं कुछ दिन दिल्ली में और रहूँगा प्रेम। बापू!

सुभाष बाबू का गान्धीजी को तार

पत्र की प्रतीक्षा में हूँ, जैसा कि वक्तव्य है, हमारा मिलना वांछनीय है।—सुभाष

महात्माजी ने इस तार के उत्तर में लिखा कि—राजकोट का मामला मुझे दिल्ली में अटकाये हुए है अन्यथा मै कमजोर होते हुए भी रवाना हो जाता। तुम यहां आकर मेरे पास रहो, मैं तुम्हें स्वस्थ्य करने का जिम्मा लेता हूँ, साथ ही हम लोग विचार विमर्श भी करते रहेंगे। प्रेम-बापू।

महात्माजी के तार के जवाब में डाक्टर सुनील बोस ने लिखा—उनकी हालत ऐसी है कि बिस्तर पर पड़े रहते हैं, यात्रा करने लायक अवस्था बिलकुल नही है, अगर वर्तमान चिकित्सा जारी रही तो तीन सप्ताह में चंगे हो जायंगे। डाक्टर की हैसियत से मेरी राय है कि विशेष विषयों पर ही पत्र व्यवहार करें, बाकी की समस्याएँ इस वक्त छोड़ दें।

महात्माजी ने डाक्टर की बात मान ली। राष्ट्रपति सुभाष-बोस ने महात्माजी को निम्नलिखित पत्र लिखा—

जीलगोरा मार्च २९

प्रिय महात्माजी

मैं दो एक दिन में लिखने ही वाला था कि कांग्रेस के स्थानापन्न मंत्री श्री नरसिंह ने लिखा है कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के लिये लगभग २० दिन का नोटिस चाहिये। नियमों के अनुसार सदस्यों को १५ दिन का नोटिस अवश्य मिलना चाहिये। सब जगह पहुँचने के लिये ४-५ दिन चाहिये।

आप अगर सहमत हों तो मैं समझता हूँ २० अप्रैल के लगभग की तारीख ठीक होगी। लेकिन एक दिक्कत है, गांधी-सेवा-सङ्घ की कांफ्रेंस २० तारीख को होने वाली है। अखिल भारतीय कांग्रेस और कार्यकारिणी की बैठक कलकत्ता में होगी। उस समय आपकी उपस्थिति आवश्यक है। तब क्या अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की बैठक गांधी-सेवा सङ्घ कांफ्रेंस के पहले या बाद हो! पहले होने से आप कलकता आकर वहाँ से बिहार जा सकते हैं, बाद में होने से बिहार से कलकत्ता आ सकते हैं। पहली हालत में कांफ्रेंस को एक सप्ताह के लिये स्थगित करना होगा, दूसरी हालत में कांग्रेस को बैठक अप्रैल के अन्त में करनी होगी।

कृपया इस विषय पर अपना विचार कर 'उपदेश' दीजिये कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की बैठक कब हो। इस समय आपका होना अनिवार्य है।

मेरी तबीयत सुधर रही है। यह जानकर चिन्ता हुई कि आपका ब्लड प्रेसर फिर चढ़ गया। आप बहुत काम करते हैं। प्रणाम। आपका—सुभाष।

दूसरा पत्र

प्रिय महात्माजी!

मुझे २४ तारीख का ट्रेन से लिखा हुआ पत्र प्रतिलिपियों के साथ मिला। पहली बात तो यह है कि मेरे भाई शरत् ने अपने मन से आपको लिखा। पत्र से मालूम होता है कि उन्हें यहाँ से जाने के बाद आपका तार मिला और तब उन्होंने

आपको लिखा। अगर आपका तार न मिला होता तो शायद वे न लिखते।

उनके पत्र में कुछ बातें मेरी भावनाओं के अनुकूल है, लेकिन यह कोई बात नहीं है, मेरी दृष्टि में महत्व पूर्ण सवाल यह है कि क्या दोनों दल भूत को भूलकर एक साथ काम कर सकते हैं। यह बिलकुल आप पर निर्भर करता है। अगर आप निष्पक्ष रुख अख्तियार कर दोनों दलों का विश्वास प्राप्त कर लें, तो आप कांग्रेस की रक्षा कर सकते हैं, और राष्ट्रीय एकता फिर स्थापित कर सकते हैं।

दूसरी बात यह है कि मैं पन्त प्रस्ताव को कांग्रेस द्वारा पास किया मानता हूँ और हमें उसके अनुसार चलना चाहिये। मैंने खुद ही प्रस्ताव पेश होने दिया और उस पर बहस होने दी, गोकि उसकी एक धारा Ultravires थी।

तीसरी बात यह है कि आपके सामने दो तरीके हैं—(१) या तो कार्यकारिणी के गठन के सम्बन्ध में हमारी राय को स्थान दीजिये, (२) या अपनी राय पर ही पूर्णरूप से जोर दीजिये। अन्तिम हालत में, हम दोनों विभिन्न रास्तों पर चले जायँगे।

चौथी बात यह है कि नयी कार्यकारिणी के गठन और अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की बैठक के लिये मैं जो सम्भव है वह सब करने के लिये तैयार हूँ, लेकिन इस समय दिल्ली आना सम्भव नहीं हैं।

पाचवीं बात—मुझे आपके पत्र में यह पढ़कर आश्चर्य हुआ कि अ० भारतीय कांग्रेस कमेटी ने आपको पन्त प्रस्ताव की

कापी नहीं भेजी। मुझे और भी ताज्जुब हुआ कि इलाहाबाद के पहले आपको प्रस्ताव नहीं दिखलाया गया। त्रिपुरी में यह अफवाह जोरों पर थी कि प्रस्ताव पर आपको पूर्ण रजामन्दी है। जब हम त्रिपुरी में थे तब इस आशय का एक वक्तव्य भी निकला था।

छठीं बात—मेरी पद पर जमे रहने की जरा भी इच्छा नहीं है किन्तु मैं बीमार हूँ इसलिये इस्तीफा दे दूँ इसकी मैं कोई वजह नहीं समझता। उदाहरणतः जेल में स्वस्थ्य रहते हुए भी किसी सभापति ने इस्तीफा नहीं दिया। मेरे ऊपर इस्तीफा देने के लिये बहुत जोर डाला जा रहा है। मैं इसका प्रतिरोध कर रहा हूँ क्योंकि मेरा इस्तीफा कांग्रेस की राजनीति में नया अध्याय आरम्भ कर देगा, जिसे मैं टालना चाहता हूँ। पिछले कुछ दिनों से कांग्रेस का आवश्यक कार्य कर रहा हूँ दो एक दिन में फिर लिखूंगा। प्रणाम। यह आपके पत्र का जवाब नहीं है, मैंने सिर्फ प्वाइन्ट लिख दिये हैं।

आपका—सुभाष।

गान्धीजी का जवाब

नई दिल्ली
३० मार्च १९३९

प्रिय सुभाष!

मैंने तुम्हारे २५ तारीख के पत्र के उत्तर में, अपने तार के जवाब की आशा में देर की। सुनील का तार कल मिला। प्रातः प्रार्थना के पहले मैं पत्र लिखने के लिये उठा हूँ।

जब कि तुम समझते हो पण्डित पन्त का प्रस्ताव अनियमित और कार्यकारिणी सम्बन्धी उसका भाग Ultravires था, तो तुम्हारा रास्ता बिलकुल साफ है। कार्यकारिणी के चुनाव में कोई दखल न होना चाहिये। इसलिये इससे सम्बन्धित प्रश्नों के उत्तर आवश्यक नहीं।

फरवरी में मिलने के बाद से यह धारणा दृढ़ हो गयी है कि जहाँ पर सिद्धान्तों के सम्बन्ध में मतभेद है, जैसा कि हम मान चुके हैं कि ऐसी अवस्था में निश्चित केबिनेट हानिकर होगा। यह मान कर कि तुम्हारी पालिसी के पीछे अ० भारतीय कांग्रेस कमेटी का बहुमत है, तुम्हारी कार्यकारिणी बिलकुल उनकी होनी चाहिये, जिनका तुम्हारी नीति में विश्वास हो।

मैंने फरवरी में जो राय जाहिर की थी, उसी पर कायम हूँ, अगर तुमको कांग्रेस के सभापति की हैसियत से काम करना है तो, तुम्हारे हाथ खुले होने चाहिये। जहाँ तक Gandhites (to use that wrong expression) का सम्बन्ध है, वे तुम्हारे रास्ते में रुकावट नहीं डालेंगे, जहाँ मुमकिन होगा, मदद करेंगे, जहाँ नहीं होगा अनुपस्थित रहेंगे। अगर वे अल्पमत हैं तो कोई दिक्कत नहीं होनी चाहिये और अगर वे बहुमत में हैं तो मुमकिन है अपने आपको न दबायें।

मुझे चिन्ता इस बात की है कि कांग्रेस electorate बोगस है। और इसलिये अल्प और बहुमत का पूरा मतलब खत्म हो जाता है। जब तक कांग्रेस में कोई असल बात साफ नहीं

होती, हमें उसी से काम चलाना पड़ेगा जो कि हमारे पास है। चिन्ता की दूसरी बात आपस का अविश्वास है। जहाँ कार्य-कर्त्ता एक दूसरे का विश्वास नहीं करते वहाँ संयुक्त कार्य असम्भव है।

मेरे ख्याल से हमारा पत्र व्यवहार छपना नहीं चाहिये पर तुम्हारा विचार भिन्न हो तो मेरी अनुमति है। बापू।

नयी दिल्ली
३१ मार्च १९३९

पत्र मिला, पहले पत्र का जवाब कल भेजा है। दूसरी धारा के अनुसार सात दिन का नोटिस देकर आवश्यक बैठक बुलाई जा सकती है। बापू।

जीलगोरा
३१ मार्च १९३९

तार मिला, स्वास्थ्य की दृष्टि से २० अप्रैल के बाद कोई भी तारीख हो। अ० भारतीय कांग्रेस के पहले कार्यकारिणी की बैठक होगी। कांग्रेस के पहले गान्धी-सेवा-सङ्घ की कान्फ्रेन्स होने में कोई आपत्ति नहीं है, बल्कि उत्तम है। तारीख के सम्बन्ध में आपकी इच्छा के अनुसार ही होगा। प्रणाम, सुभाष।

नयी दिल्ली
१ अप्रैल १९३९

तार मिला, जो सुविधाजनक हो तारीख निश्चित करो, मैं उसी के अनुसार कर लूँगा प्रेम—बापू।

महात्माजी के पास भेजा सुभाष बाबू का पत्र

जीलगोरा
२१ मार्च १९३९

प्रिय महात्माजी !

सुनील ने मेरे स्वास्थ्य के सम्बन्ध में जो तार दिया था उसका आपने जो उत्तर दिया उसे मैंने देखा। जब आपने मुझे दिल्ली आने के लिये तार दिया था, तब मैंने यही ठीक समझा कि इस विषय में डाक्टर की स्पष्ट राय ही उपयुक्त होगी इसीलिये सुनील ने आपको तार दिया।

मैं आपके २४ तारीख के ट्रेन में लिखे गये पत्र और उसी दिन शरत् को लिखे गये पत्र के विभिन्न भागों पर विचार कर रहा हूँ। यह दरअसल दुर्भाग्यपूर्ण है कि ऐसे संगीन मौके पर मैं बीमार पड़ गया। लेकिन घटनाएँ एक के बाद एक इतनी तेजी से घटीं की मुझे स्वस्थ होने का मौका नहीं मिला। इसके सिवा त्रिपुरी और इसके बाद भी कुछ कांग्रेसी हल्कों द्वारा मेरे साथ जैसा व्यवहार किया जाना चाहिये था, नहीं किया गया। इसमें आप शामिल नहीं हैं। लेकिन बीमारी के कारण पद-त्याग का कोई सवाल नहीं है। जैसा कि मैंने पहले पत्र में लिखा है जेल में काफी समय तक रहने पर भी किसी सभापति ने इस्तीफा नहीं दिया। यह हो सकता है कि आखिरकार मुझे इस्तीफा देना पड़े किन्तु उसके कारण बिलकुल भिन्न होंगे। मैंने कहा है, पद त्याग के लिये दबाव पड़ने पर भी मैंने प्रतिरोध किया है। मेरे पद त्याग का अर्थ कांग्रेस के इतिहास में नये अध्याय की सृष्टि होगी जिसे

मैं आखीर तक टालना चाहता हूँ। अगर हम अलग हो जायँगे तो आपस में लड़ाई होने लगेगी और कुछ काल के लिये कांग्रेस कमजोर हो जायगी और इसका फायदा ब्रिटिश सरकार उठायेगी। कांग्रेस और देश को इस अवस्था से बचाना आपके हाथ में है क्योंकि जो लोग विभिन्न कारणों से सरदार पटेल और उनके दल के सख्त खिलाफ हैं वे भी आप में विश्वास करते हैं और यकीन करते हैं कि आप निष्पक्ष भाव से किसी भी वस्तु का निर्णय कर सकते हैं। उनकी दृष्टि में आप दल या गुटबन्दी से परे हैं, इसलिये आप दोनों लड़ाकू पक्षों में एकता स्थापित कर सकते हैं।

अगर किसी भी कारण से उस विश्वास की जड़ हिल गयी—भगवान बचाये—और आप भी किसी एक पक्ष के समझे जाने लगे तो, हमारी और कांग्रेस की भगवान ही रक्षा करेगा।

इसमें कोई शक नहीं कि आज कांग्रेस के दो दलों या गुटों में काफी फासला है, लेकिन आप उस फासले को मिटा सकते हैं। मैं आपके राजनैतिक विरोधियों के बारे में कुछ नहीं कह सकता किन्तु त्रिपुरी में हमें उसका काफी कटु अनुभव हुआ है, फिर भी मैं अपने पक्ष की तरफ से बोल सकता हूँ। हम जो कुछ हुआ उसे भूल जाने और हाथ मिलाने के लिये तैय्यार हैं। जब मैं अपने पक्ष की बात कहता हूँ तब कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी को बाद दे देता हूँ, फिर भी नेताओं को छोड़कर अन्य समाजवादी हमारा साथ देंगे। अगर आपको इस विषय में कोई सन्देह है तो, कुछ रोज ठहरिये और देखिये क्या होता है। श्री शरत् ने

आपको जो पत्र लिखा उससे मालूम होता है वे बहुत कटु हो गये हैं। इसका कारण त्रिपुरी का अनुभव है। वे त्रिपुरी के सम्बन्ध में मुझसे ज्यादा जानते हैं। बिस्तर पर पड़े रहने पर भी मुझे बहुत सी बातों का पता लगता रहता था। जिस समय मैंने त्रिपुरी छोड़ी उस समय मैं कांग्रेस की राजनीति से इतना ऊब गया था जितना पिछले उन्नीस वर्षों में कभी नहीं हुआ। भगवान की कृपा से मैंने अब अपनी भावना को संयत कर लिया है।

जवाहर ने अपने एक पत्र में (संभवतः प्रेस वक्तव्य में) कहा है कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी का काम मेरे सभापतित्व में बिगड़ गया। शायद उन्होंने नहीं सोचा कि मेरी निन्दा करने के प्रयास में वे कृपलानी जी और सारे स्टाफ की निन्दा कर गये। आफिस जनरल सेक्रेटरी और स्टाफ के हाथ में है, अगर वह बिगड़ जाता है तो उसकी जिम्मेदारी जेनरल सेक्रेटरी और स्टाफ की है। मैं यह इसलिये कह रहा हूँ चूँकि आपने शरत् के पत्र में चर्चा की है। इस विषय को सुधारने का एकमात्र रास्ता स्थायी सेक्रेटरी की नियुक्ति है, चाहे कार्यकारिणी की नियुक्ति में देर भले ही हो। लेकिन कार्यकारिणी की नियुक्ति जल्दी ही होने वाली हो तो जनरल सेक्रेटरी को पहले से नियुक्त करना आवश्यक नहीं है।

मैं कृतज्ञ होऊँगा, अगर आप पन्त प्रस्ताव के सम्बन्ध में अपनी प्रतिक्रिया से मुझे अवगत करावें। आप निष्पक्ष भाव से स्थिति को देख सकते हैं, बशर्ते कि आपको त्रिपुरी की पूरी कहानी मालूम हो जाय। पत्रों से मालूम होता है ज्यादातर उन्हीं

लोगों ने आपसे मुलाकात की है जिन्होंने पन्त प्रस्ताव का समर्थन किया था। लेकिन आप वास्तविकता समझ सकते हैं।

पन्त प्रस्ताव के सम्बन्ध में मेरी भावना का अनुमान आप सहज ही कर सकते हैं किन्तु मेरी भावना का कोई सवाल नहीं है, सार्वजनिक जीवन में हमें जनता का ख्याल कर व्यक्तिगत भावना दबानी पड़ती है। जैसा कि मैं पहले पत्र में लिख चुका, वैधानिक दृष्टि से बना प्रस्ताव के सम्बन्ध में कोई कुछ भी कहे, चूँकि यह कांग्रेस द्वारा पास हो गया, मैं इससे बाध्य हूँ। क्या आप समझते हैं, प्रस्ताव मेरे अन्दर अविश्वास का है और मुझे इस्तीफा देना चाहिये? इस विषय में आपकी राय का मेरे ऊपर काफी प्रभाव पड़ेगा।

शायद आपको मालूम होगा कि त्रिपुरी में प्रस्ताव के समर्थकों द्वारा कहा जाता रहा कि राजकोट में आपसे टेलीफोन द्वारा बात हुई है और आपने प्रस्ताव का पूर्ण समर्थन किया है। इसतरह का समाचार दैनिक पत्र में भी छपा था। व्यक्तिगत बातचीत में यह भी कहा गया कि इस प्रस्ताव से कम-से-कम आप या आपके दल-वालों को संतोष नहीं होगा। मैं व्यक्तिगत रूप से ऐसी खबरों पर विश्वास नहीं करता, फिर भी वोटरों पर इस प्रस्ताव का प्रभाव पड़ता है। जब सरदार पटेल ने मुझे पन्त प्रस्ताव दिखलाया तब मैंने मौलाना आजाद और राजेन्द्र बाबू की उपस्थिति कुछ परि-वर्तन सुझाये और कहा कि संशोधित रूप में प्रस्ताव एक मन से पास हो जायगा, लेकिन इसका कोई उत्तर नहीं मिला शायद वे एक कामा भी बदलना नहीं चाहते थे। उम्मीद है, राजकुमारी

अमृत कौर ने आपको परिवर्तित प्रस्ताव दिखलाया होगा। अगर पन्त प्रस्ताव का उद्देश्य आपके नेतृत्व, निर्देश और सिद्धान्तों पर विश्वास प्रकट करना है तो वह उसमें हैं। लेकिन प्रस्ताव का उद्देश्य सभापति के चुनाव के परिणाम का बदला लेना हो तो यह नहीं है। मैं नहीं समझता पन्त प्रस्ताव आपकी प्रतिष्ठा और प्रभाव कैसे बढ़ाता है। सबजेक्ट कमेटी में आपके खिलाफ ४५ वोट आये और कांग्रेस सोशलिस्टों के निरपेक्ष रहने पर भी २२ सौ में कम से कम ८०० वोट खुले अधिवेशन में आपके खिलाफ थे। अगर कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी भी वोट देती तो प्रस्ताव गिर जाता। जरा से परिवर्तन से आपके खिलाफ एक वोट भी नहीं जाता, सब कांग्रेसी आपके नेतृत्व का समर्थन करते। मगर आपके नाम और प्रतिष्ठा का वे लोग उपयोग कर रहे हैं जो हमसे बदला लेना चाहते हैं, दुनिया जानती है त्रिपुरी में आप या आपके अनुयायियों ने बहुमत प्राप्त कर लिया फिर भी उनके विरुद्ध शक्तिशाली दल हैं। अगर मतभेद बना रहने दिया गया तो इस विरोधी दल की शक्ति बहुत बढ़ जायगी। उस दल या पार्टी का भविष्य क्या होगा जो क्रान्तिकारी, युवा प्रगतिशील उपकरणों से युक्त नहीं हैं? ब्रिटेन की लिबरल पार्टी जैसा ही उसका भविष्य है।

पन्त प्रस्ताव सम्बन्धी अपनी प्रतिक्रिया से अवगत कराने के लिये मैंने काफी लिखा है, कृपया अपनी प्रतिक्रिया से अवगत कराइये। क्या आप उसे पसन्द करते हैं या परिवर्तित रूप में पास होना पसन्द करते हैं?

कार्य-क्रम के सम्बन्ध में मैंने १५ फरवरी को अपनी धारणा आपको बतलायी थी, इसके बाद जो घटनाएँ घटी हैं उनसे मेरी भविष्य वाणी का ही समर्थन होता है। मैं महीनों पहले से कहता आ रहा हूँ युरोप पर जाड़े के दिनों में संकट आयेगा और गर्मियों तक रहेगा। संसार की और अपने देश की परिस्थिति से आठ महीने पहले मुझे विश्वास दिला दिया था पूर्ण स्वराज्य के प्रश्न पर जोर देने का वक्त आ गया। हमारा और देश का दुर्भाग्य है कि आप हमारी आशावादिता में शामिल नहीं हैं। आप कांग्रेस की आन्तरिक विशृंखला और हिंसा के विचार से ग्रसित हैं। मैं नहीं समझता पहले से इस समय कांग्रेस में अनाचार अधिक है और हिंसा के सम्बन्ध में बंगाल, पञ्जाब, युक्त-प्रान्त संगठित क्रान्तिकारी हिंसा के घर समझे जाते थे किन्तु इन प्रान्तों में इस समय अहिंसा की भावना पहले से अधिक है। बङ्गाल के सम्बन्ध में मैं अधिकार पूर्वक कह सकता हूँ कि बङ्गाल आज जितना अहिंसा परायण है, तीस वर्षों में कभी न था। इस और अन्याय कारणों से हमें ब्रिटिश सरकार के सामने अल्टीमेटम के रूप में अपनी माँग रखने में वक्त न खोना चाहिये। अल्टीमेटम का विचार आपको और पण्डित जवाहर-लाल को पसन्द नहीं आता। लेकिन आपने अपने सार्वजनिक जीवन में अधिकारियों को अन्य गठित अल्टीमेटम दिये हैं और सार्वजनिक कार्य आगे बढ़ाया है। उस दिन राजकोट में भी आपने यही किया तब अपनी राष्ट्रीय माँग अल्टीमेटम के रूप सरकार के सामने रखने में क्या आपत्ति हो सकती है! अगर

आप ऐसा करें और साथ ही देश को पूर्ण स्वराज्य-संग्राम के लिये तैयार करें तो मेरा विश्वास है हम बहुत जल्दी ही पूर्ण स्वराज्य प्राप्त कर लेंगे। या तो ब्रिटिश सरकार बिना युद्ध के ही हमारी माँग का जवाब देगी या अगर संग्राम छिड़े भी तो वह दीर्घकाल व्यापी न होगा। इस सम्बन्ध में मुझे इतना विश्वास और आशा है कि अगर हम साहस कर आगे बढ़ें तो हम ज्यादा से ज्याद १८ महीने में स्वराज्य प्राप्त कर सकते हैं।

इस विषय में मैं इतना दृढ़ हूँ कि इसके लिये हर तरह का बलिदान करने के लिये तैयार हूँ अगर आप संग्राम चलायें तो मैं अपनी सम्पूर्ण ताकत से उसमें भाग लूंगा, अगर आप समझते हैं, कांग्रेस दूसरे के सभापतित्व में रहकर युद्ध कर सकेगी तो मैं इस्तीफा देने के लिये तैयार हूँ, अगर आप समझते हैं आपकी पसन्द की कार्यकारिणी अधिक कुशलता से संग्राम चला सकेगी तो मैं प्रसन्नता से आपकी इच्छा के अनुसार काम करूँगा। मैं सिर्फ यह चाहता हूँ कि आप और कांग्रेस इस सङ्गीन मौके पर उठकर खड़ी हों और स्वराज्य की लड़ाई छेड़ दें। अगर आत्म-दमन से राष्ट्रीय कार्य बढ़े तो मैं इसके लिये भी तैयार हूँ। मैं अपनी मातृभूमि के लिये सब कुछ कर सकूंगा।

यह कहने के लिये मॉफ कीजिये कि देशी रियासतों के जन-संग्राम का आप इसे जिस तरह सञ्चालन कर रहे हैं, वह मुझे असर दायक नहीं लगता। आपने राजकोट के लिये अपने अमूल्य जीवन की जोखिम उठायी और राजकोट की जनता के लिये लड़ते हुए आपने अन्य रियासतों के संग्राम को बन्द कर

दिया। आपको ऐसा क्यों करना चाहिये। भारत की छः सौ से अधिक रियासतों में राजकोट एक छोटी सी रियासत है। हम देश भर में एक साथ संग्राम क्यों न चलायें और अपने उद्देश्य के लिये प्रभावशाली योजना बनावें, लाखों भारतीय यही सोचते हैं, श्रद्धावश वे भले ही खुले तौर से यह न कहें।

अन्त में मैं यह कहना चाहता हूँ कि मेरे जैसे बहुत से आदमी राजकोट के समझौते पर उत्साह नहीं दिखला सकते। हम और राष्ट्रीय पत्रों ने इसे महान् विजय कहा है। लेकिन हमें क्या मिला? सर मॉरिस गीयर न हमारे दल के हैं और न स्वतन्त्र हैं, वे सरकारी आदमी हैं, उनको पञ्च बनाने की वजह क्या है? हम आशा करते हैं, उनका फैसला हमारे पक्ष में होगा लेकिन अगर वह हमारे पक्ष में न हुआ तो? फिर ये मारिस साहब उस सङ्घ योजना के भाग हैं, जिसे रद्द करने का हमने सङ्कल्प कर लिया है। ब्रिटिश सरकार के साथ सङ्घर्ष में भी अगर हम हाई-कोर्ट के जज या सेशन जज को पञ्च चुने तो हमेशा ब्रिटिश सर-कार के साथ समझौता कर सकते हैं, लेकिन ऐसे समझौते से हमें क्या मिलेगा। बहुत से लोग नहीं समझते कि वायसराय से मिलने के बाद भी आप दिल्ली में क्यों हैं? शायद आराम के लिये यह आवश्यक हो किन्तु ब्रिटिश सरकार और उसके समर्थकों को ऐसा लग सकता है कि आप फेडरल चीफ जस्टिस को बहुत महत्व देकर उनकी प्रतिष्ठा बढ़ा रहे हैं।

मेरा पत्र बहुत लम्बा हो गया, अगर कोई बात भ्रमात्मक लगे तो क्षमा कीजियेगा। मैं धीरे-धीरे अच्छा हो रहा हूँ। प्रणाम! सुभाष।

जीलगोरा
१ अप्रैल १९३९

महात्मा गांधी, दिल्ली

क्या कार्यकारिणी की २८ और कांग्रेस की ३० तारीख घोषित कर दूँ।—सुभाष।

महात्माजी का पत्र

बिड़ला हाउस, नई दिल्ली
२ अप्रैल १९३९

प्रिय सुभाष !

३१ मार्च और उसके पहले का पत्र मिला। तुमने बिलकुल साफ-साफ अपनी राय प्रकट की जिसकी मैं तारीफ करता हूँ। जो राय जाहिर की गयी है, वे मेरी और अन्यों की राय से इतनी विभिन्न है कि उनका फासला दूर करना, असम्भव है। मेरी राय है कि दोनों दलों को अपने विचार बिना मिलावट के देश के सामने रखना चाहिये। और ऐसा अगर किया जाय तो मैं कोई कारण नहीं देखता कि आपसी कटुता बढ़ेगी जिसका परिणाम घरेलू युद्ध होगा।

हमारा आपसी मत वैभिन्न खराब नहीं है, बल्कि पारस्परिक श्रद्धा और विश्वास का अभाव खराब है। यह समय द्वारा ही मिटेगा जो कि सर्वोत्तम दवा है। अगर हमारे अन्दर वास्तविक अहिंसा है तो घरेलू युद्ध नहीं होगा, आपसी कटुता तो और भी कम होनी चाहिये।

सब बातों पर सोच-विचार करते हुए मेरी यह निश्चित

राय है कि तुमको अपने विचारों का प्रतिनिधित्व करने वाली कार्यकारिणी का फौरन निर्माण करना चाहिये, और अपना कार्य-क्रम बनाकर ए० आई० सी० सी० के सामने रखना चाहिये। अगर कांग्रेस स्वीकार कर ले तो सब काम ठीक हो जायगा और तुम अल्पमत की दस्तन्दाजी के बिना अपनी योजना कार्यान्वित कर सकोगे। अगर कार्य-क्रम स्वीकृत न हो तो इस्तीफा देना चाहिये और कमेटी को अपना सभापति चुनने देना चाहिये। तब तुम अपने अनुसार देश को तैयार करने को स्वतंत्र हो जाओगे। मैं यह सलाह पण्डित पन्त के प्रस्ताव को अलग रखकर दे रहा हूँ।

जिस समय पण्डित पन्त का प्रस्ताव तैयार हुआ, मैं बिस्तर पर पड़ा था, मथुरादास जो उस दिन राजकोट में थे, वे एक दिन सबेरे यह खबर लाकर दी को पुराने लोगों में विश्वास प्रकट करने वाला एक प्रस्ताव त्रिपुरी में पेश किया जायगा। मैंने कहा ठीक है। सेगाँव में मुझसे कहा गया था, तुम्हारा चुनाव जितना विश्वास तुम में प्रकट नहीं करता उतना पुराने लोगों में—खास-कर सरदार में—अविश्वास प्रकट करता है। उस समय मैंने प्रस्ताव देखा नहीं था। यह मैंने तब देखा, जब मैं इलाहाबाद में मौलाना साहब से मिलने गया।

मेरी प्रतिष्ठा का सवाल नहीं है। इसकी अपनी अलग कीमत है। जब मेरे अभिप्राय पर शङ्का की जाती है, मेरी नीति या कार्य-क्रम देश अस्वीकृत करता है तो प्रतिष्ठा को जाना ही चाहिये। भारत का उत्थान व पतन उसकी करोड़ों सन्तानों के

गुणावगुणों के कारण होगा। व्यक्ति वे चाहे जितने ऊँचे हों, किसी गिन्ती के नहीं है, जब तक कि वे करोड़ों का प्रतिनिधित्व नहीं करते। इसलिये हमें इस पर विचार नहीं करना चाहिये।

मैं इस राय से बिलकुल सहमत नहीं हूँ कि देश इतना अहिंसक कभी न था, जितना आज है। मैं जिस हवा में साँस लेता हूँ उसमें हिंसा पाता हूँ। हमारा पारस्परिक अविश्वास हिंसा का बुरा रूप है। हिन्दू और मुसलमानों का एक दूसरे से अलग होंना भी यही साबित करता है। मैं और भी बहुत से उदाहरण दे सकता हूँ।

कांग्रेस के अन्तर्गत अनाचार के सम्बन्ध में भी हमारे अन्दर मत वैभिन्न है, मेरा ख्याल है अनाचार बढ़ रहा है। इस परिस्थति में मैं अहिंसात्मक जन आन्दोलन के लायक वातावरण नहीं देखता। बिना जन बल के अल्टीमेटम बेकार है।

लेकिन जैसा कि मैंने कहा, मैं बुड्ढा आदमी हूँ, शायद अतिरिक्त सावधान हो रहा हूँ और तुम्हारे सामने जवानी है और जवानी से उत्पन्न लापरवाह आशावादिता है। मैं आशा करता हूँ तुम ठीक और मैं गलत हूँ। मेरा दृढ़ मत है कि आज की कांग्रेस कार्य नहीं कर सकती, सविनय अवज्ञा आन्दोलन नहीं चला सकती।

मुझे प्रसन्नता है कि तुमने छोटे से राजकोट के मामले का उल्लेख किया। इससे प्रकट होता है कि हम एक ही चीज को विभिन्न दृष्टि कोणों से देखते हैं। मैंने राजकोट के लिये अन्य रियासतों में भद्र अवज्ञा आन्दोलन स्थगित नहीं किया। लेकिन

राजकोट ने मेरी आँखें खोल दी उसने मुझे रास्ता दिखलाया। मैं दिल्ली में स्वास्थ्य लाभ के लिये नहीं हूँ, मैं चीफ जस्टिस के फैसले का इन्तजार कर रहा हूँ। अगर मैंने कि Paramount Powor से अपना कर्तव्य पालन करने के लिये कहा तो कोई जोखिम नहीं उठाई, मुझे दिल्ली में रहना ही चाहिये ताकि कर्तव्य पूरी तरह से निभाया जाय। जिसके अर्थ के सम्बन्ध में ठाकुर साहब ने शङ्का की, उसकी व्याख्या करने में चीफ जस्टिस की नियुक्त में मैं कोई दोष नहीं देखता। सर मारिस, चीफ जस्टिस की हैसियत से नहीं, कानून विशेषज्ञ की हैसियत से, जिनका वायसराय विश्वास करते हैं कागजात की जाँच करेंगे। वायसराय के चुने हुए सज्जन को जज मान कर मैंने बुद्धिमानी दिखलाई और इस मामले में वायसराय की जिम्मेदारी बढ़ा दी।

गोकि हमने अपने तीव्र मतभेदों पर विचार विनिमय किया, किन्तु मुझे विश्वास है कि इससे हमारे व्यक्तिगत सम्बन्ध पर जरा भी प्रभाव न पड़ेगा। अगर हमारे सम्बन्ध हार्दिक हैं—जैसा कि मैं विश्वास करता हूँ कि हैं—तो वे मतभेद बर्दाश्त कर लेंगे। प्रेम—बापू।

(तार)

नयी दिल्ली
२ अप्रैल १९३९

जीलगोरा।

पत्रों का पूरा जवाब भेज दिया। मेरी सलाह पन्त प्रस्ताव के अतिरिक्त है, तुमको अपनी राय का प्रतिनिधित्व करने वाली

कार्यकारिणी का गठन करना चाहिये। अपनी नीति और कार्य-क्रम बनाकर A. I. C. C. के सामने पेश करो। अगर बहुमत पाओ तो अपने कार्य-क्रम को कर्यान्वित करो अन्यथा इस्तीफा दे उसे अपना सभापति चुनने दो। इमानदारी और सदिच्छा रहते हुए आपसी युद्ध का भय नहीं है। प्रेम—बापू।

तार का जवाब

जीलगोरा ३-४-३९

मेरे पत्र के जवाब में आपका तार और पत्र मिला—विचार कर रहा हूँ। पन्त प्रस्ताव के सम्बन्ध में आपने और कुछ लोगों ने मेरी स्थिति गलत समझी, गोकि प्रस्ताव की धारा बिलकुल अवैधानिक है, मगर मैंने उसे पेश होने दिया और अब मैं कांग्रेस के निर्णय से बाध्य हूँ। मैं समझता हूँ स्थिति साफ करने के लिये छोटा सा वक्तव्य आवश्यक है। लिखिये कि आपको कोई आपत्ति है क्या? प्रणाम। सुभाष!

[महात्माजी ने जवाब में तार दिया कि अखबार हमारे पत्र व्यवहार के सम्बन्ध में तरह तरह के सवाल कर रहे हैं। मैंने सहयोगियों और साथियों के सिवा किसी को कुछ नहीं कहा।]

× × × ×

जीलगोरा

५ अप्रैल १९३९

श्री बोस ने गांधीजी को तार दिया कि एसोसियेटेड प्रेस अधिकृत वक्तव्य माँग रहा है कहता है, युनाइटेड प्रेस भविष्य-वाणी कर रहा है। मैंने कुछ नहीं कहा। पहले एक को और इस

सप्ताह तीन मित्रों को कागजात दिखलाये। पत्र व्यवहार ठीक से व्यवस्था हो प्रकाशित होना चाहिये। नयी दिल्ली के पत्र कहते हैं आलइण्डिया कांग्रेस कमेटी २८ को होगी। लेकिन आपका जवाब नहीं मिला।

महात्माजी ने जवाब दिया, "यहाँ से कोई तारीख नहीं दी गयी। प्लेग के कारण गांधी-सेवा-सङ्घ की बैठक स्थगित हो गयी। कोई भी सुविधाजनक तारीख तय करो। पत्र व्यवहार प्रकाशन का भार तुम्हारी इच्छा पर है। प्रेम, बापू।"

श्री सुभाष ने तार दिया कि—"अमृत बाजार पत्रिका की रिपोर्ट बतलाती है कि दिल्ली से खबर प्रकाशित हो रही है। सुभाष!"

श्री बोस ने दूसरा तार दिया कि—"लीडर आदि पत्र देखने से मालूम होता है कि दिल्ली से खबर फैल रही है, कृपया आवश्यक कार्य कीजिये।"

महात्माजी ने कहा, अखबार वाले समाचार बहुत आश्चर्य-जनक हैं, मैं नहीं जानता यह सब कैसे हो रहा है, मैं इतना कह सकता हूँ कि मेरी जानकारी में कोई व्यक्ति खबर फैलाने के लिये जिम्मेदार नहीं है कहो, मैं क्या करूं ? प्रेम, बापू।

राष्ट्रपति सुभाष बोस का पत्र

जीलगोरा

६ अप्रैल १९३९

प्रिय महात्माजी !

मेजदा (शरत्) की चिट्ठियों में से एक में आपने दोनों दलों के नेताओं की खुले दिलों से बात-चीत होने का सुझाव रखा है,

ताकि संयुक्त कार्य के लिये भूमि तैयार हो सके। मुझे यह विचार बहुत पसन्द हैं। कृपया लिखिये कि इस संबंध में मुझे क्या करना चाहिये। व्यक्तिगत तौर से मैं सोचता हूँ आपकी चेष्टा और प्रभाव से एकता के काम में बहुत कुछ हो सकता है। क्या आप सब को एक साथ करने की अन्तिम चेष्टा न करेंगे। पेश्तर इसके कि हम एकता की सब आशा छोड़ दें मैं प्रार्थना करता हूँ कि आप जरा सोचिये देश आपको क्या मानता है। आप पक्षपाती नहीं हैं इसलिये लोग आपकी ओर ही देखते हैं, आप ही दोनों जुझाऊ दलों को एक कर सकते हैं।

कार्यकारिणी गठन के सम्बन्ध में आपने जो सलाह दी मैं उस पर गम्भीर विचार कर रहा हूँ। मैं अनुभव करता हूँ आपकी सलाह निराशा की युक्ति है। यह एकता की सब आशा नष्ट करती है। यह कांग्रेस को फूट से नहीं बचाती मगर फूट का रास्ता साफ करती है। इस समय एक मन के केबिनेट के निर्माण का अर्थ दलों को अपने-अपने रास्तों पर अलग-अलग जाने देना है। क्या यह भीषण जिम्मेदारी नहीं है? क्या आप का विश्वास है कि संयुक्त कार्य बिलकुल असम्भव है। हम ऐसा नहीं समझते। मैंने सुझाया है कि कांग्रेस जैसी है, उस हालत में संयुक्त कार्यकारिणी ही सर्वोत्तम है, जिसमें यथा संभव सब दलों का प्रतिनिधित्व हो। आपका विचार संयुक्त केबिनेट के प्रतिकूल है। आपका विरोध सिद्धान्तों के कारण है या आप समझते हैं केबिनेट में गान्धीवादियों को अधिक स्थान मिलने चाहिये! पिछली बात हो तो लिखिये ताकि मैं इस पर

विचार कर सकूँ, पहली बात हो तो कृपया अपनी सलाह पर फिर विचार कीजिये। हरिपुरा में जब मैंने केबिनेट में सोशलिस्टों को रखने की बात कही तब आपने साफ कहा था कि आप ऐसा करने के पक्ष में हैं। क्या तब से परिस्थति इतनी बदल गयी कि आप एक दलीय केबिनेट पर जोर दे रहे हैं ?

आपने अपने पत्र में लिखा है, दोनों दल आपस में विरोधी हैं, आपने यह स्पष्ट नहीं किया यह विरोध कार्य-क्रम का है या व्यक्तिगत। व्यक्तिगत सम्बन्ध मेरे राय में कोई बात नहीं, हम झगड़ सकते हैं और फिर मिल सकते हैं। स्वराज्य पार्टी की मिसाल ही लीजिये, स्वर्गीय देशबन्धु और पण्डित मोतीलालजी के साथ आपके सम्बन्ध काफी मधुर थे। जरूरत पड़ने पर ग्रेट ब्रिटेन की तीन पार्टियाँ एक साथ मिलकर काम कर सकती हैं। फ्रांस जैसे देश में तो हर केबिनेट संयुक्त होता है। क्या हम अंग्रेजों फ्रेंचों से कम देशभक्त हैं।

अगर आपका विरोध कार्य-क्रम आदि पर है तो मैं इस मामले में आपका दृष्टिकोण जानना बहुत पसन्द करूँगा। कहाँ हमारे प्रोग्राम में फर्क है और वह भी इतना कि संयुक्त कार्य असम्भव है। हममें मतभेद है किन्तु जैसा कि मैंने कार्यकारिणी के भूतपूर्व साथियों के इस्तीफे के उत्तर में लिखा है, मतभेद से मतैक्य अधिक हैं।

मेरे अल्टीमेटम के विचार के सम्बन्ध में आपने लिखा है देश में अहिंसात्मक जन आन्दोलन व्यापक वातावरण ही नहीं है लेकिन क्या राजकोट का कार्य अहिंसात्मक जन आन्दोलन

नहीं था ? क्या और रियासतों में यह नहीं हो रहा है ? ये रियासती सत्याग्रह में अपेक्षाकृत कम दक्ष है। हम ब्रिटिश भारत में अधिक अनुभव और शिक्षा का दावा कर सकते हैं। अगर देशी रियासतों की जनता को सत्याग्रह की अनुमति मिल सकती है तो हम ब्रिटिश भारत में क्यों नहीं पा सकते ?

त्रिपुरी कांग्रेस में राष्ट्रीय माँग के प्रस्ताव को ही लीजिये जो गांधीवादियों के समर्थन से पास हुआ है, गोकि उसमें सुन्दर शब्द-जाल भी है, फिर भी इसमें मेरे अल्टीमेटम का भाव और देश को संग्राम के लिये तैयार करने की भावना है। क्या आप इस प्रस्ताव को पसन्द करते हैं ? अगर हो तो एक कदम और आगे बढ़कर मेरी योजना क्यों नहीं मानते ?

अब मैं पन्त प्रस्ताव के सम्बन्ध में लिखता हूँ—इसके प्रधान भाग में दो बातें है, पहली बात एक कार्यकारिणी में आपका पूर्ण विश्वास होना चाहिये, दूसरी बात यह है कि इसका गठन आपकी इच्छा के अनुसार होना चाहिये। अगर आप एक दलीय केबिनेट को सलाह देते हैं और वह बनता है तो यह कहा जा सकता है कि उसका गठन आपकी इच्छा के अनुसार हुआ लेकिन यह नहीं कहा जा सकता कि उसे आपका विश्वास प्राप्त है ! क्या मैं ए० आई० सी० सी० में कह सकूँगा कि एक दलीय केबिनेट आपकी सलाह से बनाया गया और उसे आपका विश्वास प्राप्त है ? अगर आप ऐसे केबिनेट की सलाह देते हैं जिसे आपका विश्वास प्राप्त नहीं है तो क्या यह पन्त प्रस्ताव के अनुकूल है ? और क्या यह आपकी दृष्टि में ठीक है ?

आपको कार्यकारिणी के सम्बन्ध में सिर्फ अपनी इच्छा ही प्रगट करनी है बल्कि ऐसी कार्यकारिणी निर्माण करवानी है, जिसे आपका विश्वास प्राप्त हो।

पन्त प्रस्ताव के सम्बन्ध में आपने कुछ नहीं कहा, क्या आप उसे 'एप्रूव' (स्वीकार) करते हैं ? इस प्रस्ताव के पास होने के बाद कार्यकारिणी की नियुक्ति के सम्बन्ध में कांग्रेस सभापति की क्या स्थिति रहती है ? मैं इसलिये यह सवाल फिर कर रहा हूँ कि वर्तमान विधान आपका ही है, आपकी राय का मेरी दृष्टि में बहुत महत्व है। क्या यह मेरे अन्दर अविश्वास का प्रस्ताव है ? क्या मुझे इस्तीफा देना चाहिये। बिला शर्त ? मेरे पक्ष के लोगों में दो तरह के मत हैं, एक तो यह है कि मैं बातचीत बन्द कर इस्तीफा दे दूँ। मगर मैं चाहता हूँ मैं अन्त तक एकता कायम करने की चेष्टा करूँ ? मैं जानता हूँ मेरे इस्तीफे का परिणाम क्या होगा ? आप जानते हैं मैं आपका अन्धानुकरण नहीं करता किन्तु फिर भी मैं कहता हूँ अगर आपकी दृष्टि में उक्त प्रस्ताव अविश्वास का अर्थ रखता है तो मैं इस्तीफा दे दूँगा। इसका साफ कारण यह है कि मैं नहीं चाहता कि अगर भारत का सर्वश्रेष्ठ पुरुष चाहे साफ कहे नहीं मगर यह अनुभव करता हो कि उक्त प्रस्ताव का अर्थ अविश्वास है तो मैं सभापति बना रहूँ। इस रुख का कारण आपके प्रति अपार श्रद्धा है।

शायद जैसा कि कुछ पत्र कहते हैं, आपका विचार है पुरानों को फिर पदों पर बैठाना चाहिये। ऐसा है तो कृपया कांग्रेस के सदस्य बनकर कार्यकारिणी की बागडोर अपने हाथ में ले

लीजिये! आपमें और आपके लेफ्टीनेण्टों में बहुत फर्क है। पुरानों की सलाह के खिलाफ पिछले चुनाव में कुछ प्रान्तों में गांधीवादियों ने मुझे मत दिया। त्रिपुरी में वे कहते हैं उनकी विजय हुई। किन्तु दरअसल न उनकी विजय हुई न मेरी हार! वहाँ आपकी विजय हुई!

मैं आपसे अपील कर रहा था कि कृपया आगे आकर कांग्रेस की बागडोर संभालिये! इससे मामला सुलझ जायगा, पुरानों के प्रति जो विरोध है वह अपने आप मिट जायगा।

अगर आप ऐसा नहीं कर सकते तो एक दूसरा सुझाव है। स्वाधीनता का संग्राम छेड़ दीजिये और जैसा हम चाहते हैं ब्रिटिश सरकार को अल्टीमेटम दीजिये, ऐसी हालत में हम खुशी से अपने आपसी दल पदों से हट जायँगे, अगर आप चाहेंगे तो जिसे आप कहेंगे उसे अपने पद और स्थान सौंप देंगे। सिर्फ एक शर्त पर कि आजादी की लड़ाई अवश्य आरम्भ होनी चाहिये। मेरे जैसे आदमी—अनुभव करते हैं कि जो सुयोग हमें आज मिला है, वह राष्ट्र के जीवन में दुर्लभ है, इस कारण से युद्ध आरम्भ करने में कोई भी बलिदान करने के लिये हम तैय्यार हैं।

अगर आखीर तक आप इसी पर जोर दें कि संयुक्त कार्यकारिणी नहीं बल्कि एक दलीय कार्यकारिणी ही गठित होना चाहिये और अगर आप चाहते हैं कि मैं अपनी पसन्द की कार्यकारिणी चुनूँ तो मैं प्रार्थना करूँगा कि आप अगली कांग्रेस तक अपना विश्वास मुझे दे दीजिये। इस बीच अगर अपनी

सेवा और बलिदान से हम अपनी योग्यता न स्थापित कर सके तो कांग्रेस के सामने दोषी होंगे, स्वभावतः पदों से ढकेल दिये जायँगे। अगर आप अपना विश्वास नहीं दे सकते और एक दलीय कार्यकारिणी के लिये जोर देते हैं तो आप पन्त प्रस्ताव को कार्यान्वित नहीं करते।

अपने पत्र में आपने लिखा है, भगवान मुझे पथ दिखलाये। महात्माजी! मैं इन दिनों हर वक्त भगवान से यही प्रार्थना करता रहा हूँ कि भगवान मुझे वही रास्ता दिखलायें जो मेरे देश और मेरे देश की स्वाधीनता के लिये सर्वोत्तम हो। मेरा विश्वास है कि वह राष्ट्र हमेशा जीवित रहता है, जिसके नागरिक जरूरत पड़ने पर अपने देश के लिये मरने को तैय्यार रहते हैं। यह नैतिक या आध्यात्मिक आत्महत्या आसान चीज नहीं है। लेकिन भगवान मुझे वह शक्ति देगा कि जब देश के लिये आवश्यक हो यह बलिदान मैं कर सकूँ।

आशा है आपका स्वास्थ्य ठीक होगा मैं अच्छा हो रहा हूँ। प्रणाम।—सुभाष।

[इस पत्र के बाद सुभाष बाबू ने महात्माजी को एक तार दिया जिसमें उनसे प्रार्थना की कि दिल्ली से राजकोट रवाना होने के पहले मिलना बहुत आवश्यक है। अगर आप न आ सकें तो मैं डाक्टरों की राय की पर्वा किये बिना दिल्ली आ सकता हूँ। मैं चाहता हूँ कार्यकारिणी और दोनों दलों में एकता के लिये मैं भरसक प्रयत्न करूँ उसका असर स्वास्थ्य पर जो भी पड़े। अगर

A. I. C. C. तक मामला अनिश्चित रहा तो मामला बिगड़ता जायगा और जनता के मन में अशान्ति बढ़ेगी।]

इसके जवाब में महात्माजी ने लिखा, राजकोट जा रहा हूँ, वहाँ से खाली होते ही तुम्हारे हाथ में हूँ। मेरी सलाह मानो केबिनेट बनाओ, कार्य-क्रम प्रकाशित करो। राजकोट रविवार को सवेरे पहुँच रहा हूँ।

एक और तार में गांधीजी ने लिखा, "शरत् आदि किसी को राजकोट भेज दो वहाँ दस दिन लगेंगे।"

जीलगोरा से सुभाष बाबू ने १० अप्रैल को दूसरा पत्र लिखा जिसमें उन्होंने महात्माजी को कांग्रेस में फैले हुए अनाचार और अहिंसा के सम्बन्ध में लिखा कि कार्यकारिणी पिछले महीनों से इस समस्या पर विचार कर रही है, लेकिन मैं यह नहीं मानता कि यह अनाचार इतना ज्यादा है कि हम राष्ट्रीय आन्दोलन नहीं चला सकते। मैं युरोप की राजनैतिक पार्टियों से भिड़ा हूँ और दावे के साथ कह सकता हूँ कि हमारा सङ्गठन कुछ मामलों में उनसे बेहतर है। हिंसा के सम्बन्ध में भी मेरा कथन है कि कांग्रेस और कांग्रेस के समर्थकों में जितनी अहिंसात्मक भावना इस समय है उतनी कभी नहीं थी, यह मुमकिन है कि जो कांग्रेस के विरोधी हैं उनमें हिंसा वृत्ति वर्तमान हैं और जिसकें परिणाम स्वरूप दंगे होते हैं जिन्हें कांग्रेसी सरकारों को दबाना पड़ता है। लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि कांग्रेस या उसके समर्थकों में हिंसा वृत्ति बढ़ी है। यह आशा करना बहुत अधिक है कि जब तक हमारे विरोधी सङ्-

ठन जैसे मुस्लिमलीग भाव और कार्य में अहिंसक न हो जायँ, लड़ाई न छेड़ी जाय।

पण्डित पन्त के प्रस्ताव के बारे में जानना चाहता हूँ कि आप उसे मौलिक रूप में या परिवर्तित रूप में पास किया जाना पसन्द करते हैं? क्या आप इस प्रस्ताव को मेरे अन्दर अविश्वास का प्रस्ताव समझते हैं?

इसके बाद श्रीबोस ने पन्तजी के मौलिक प्रस्ताव और परिवर्तित रूप दोनों का उल्लेख किया।

कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी के सम्बन्ध में अपनी राय जाहिर करने के बाद राष्ट्रपति बोस ने लिखा कि मैंने संयुक्त कार्यकारिणी के सम्बन्ध में आपके तर्कों पर विचार किया किन्तु सन्तुष्ठ न हो सका। यहाँ उन्होंने फिर हरिपुरा की घटना का उल्लेख किया।

शरत् बाबू को लिखे गये पत्र में दोनों दलों के नेताओं का आपस में मिलकर भय-भाव मिटाने के सम्बन्ध में जो सुझाव था, उस सम्बन्ध में लिखा कि हम तैयार हैं। उन्होंने लिखा कि पुराने नेताओं और उनके अनुयायियों को ही नहीं, अगर आप हमारे कुछ विचारों और योजनाओं को अपना सकें तो आप सब कांग्रेसियों को गान्धीवादी गिन सकते हैं।

पहले के पत्र में जो तीन प्रकारान्तर श्री बोस ने सुझाये थे उन्हीं का उल्लेख करने के बाद बात-चीत के विषय में महात्माजी को चुप रहने के लिये क्यों लिखा था इसका खुलासा करते हुए श्री बोस ने कहा, मेरा मतलब था कि जब तक दोनों पक्ष की बातें न सुन लें आप सार्वजनिक तौर से कोई वक्तव्य न दें, न

कुछ कहें। आपने मेरी बात मान ली इसके लिये मैं बहुत कृतज्ञ हूँ। लेकिन अब अगर आप चाहें तो आप सार्वजनिक वक्तव्य दे सकते हैं या आप जो उचित समझें कह सकते हैं। मैं सिर्फ यह प्रार्थना करूँगा कि कृपया यह ख्याल रखें कि सब कांग्रेसी आपके बारे में क्या सोचते हैं। और आपसे क्या आशा करते हैं।

आपके दिल्ली से राजकोट जाने के समाचार से मैं बहुत निराश हुआ। श्री राजेन्द्र बाबू ने आपसे टेलिफो द्वारा कहा था कि मै आपसे मिलने के लिये कितना उत्सुक हूँ फिर मेरे डाक्टर ने भी बिड़ला हाउस और श्री महादेव देसाई को फोन किया था। अगर राजकोट के मामले में आप न लग जाते तो त्रिपुरी का इतिहास कुछ और ही होता। लोग समझते है कि आप बिना रियासती प्रजा का नुकसान पहुँचाये, राजकोट संग्राम कुछ सप्ताह के लिये मुलतवी कर सकते थे।

राजकोट के फैसले के सम्बन्ध में मै आपका ध्यान खींचना चाहता हूँ, सर मोरिस गियर ने, उस पर व्यक्तिगत हैसियत से नहीं, भारत के चीफ जस्टिस की हैसियत से दस्तखत किये हैं।

महात्माजी ने राजकोट से १० अप्रैल को इस आशय का एक पत्र श्री बोस को भेजा। इस पत्र में गान्धीजी ने लिखा कि मैंने दोनों दलों के नेताओं के मीटिंग का सुझाव रखा था, किन्तु अब उसकी उपयोगिता नहीं दिखती। भेद और सन्देह बहुत बढ़ गया है। मुझे एक ही रास्ता दिखता है कि भेद को मान लिया जाय और हर एक दल अपना-अपना काम करें। मैं दोनों

दलों को एक करने में अपने को असमर्थ पाता हूँ। मैं आशा करता हूँ वे दोनों बिना कटुता के अपनी नीति के अनुसार कार्य ।, अगर ऐसा हुआ तो देश के लिये अच्छा होगा। पण्डित पन्त के प्रस्ताव की मैं व्याख्या नहीं कर सकता, मैं जितना इसका अध्ययन करता हूँ उतना ही उसे नापसन्द करता हूँ, लेकिन इससे वर्तमान मुश्किल आसान नहीं होती। तुम इसकी अपनी व्याख्या करो और बिना हिचकिचाहट के उसी के अनु-सार] कार्य करो।

मैं तुम्हारे ऊपर कोई केबिनेट न लाद सकता हूँ, न लादूँगा और न तुम्हारे केबिनेट और नीति का A. I. C. C. द्वारा ' जूर होने की गारण्टी कर सकता हूँ। मेम्बरों को अपनी राय देना चाहिये, अगर तुम्हें बहुमत न मिले तो, जब तक बहुमत पक्ष में न कर लो, विरोधी दल का नेतृत्व करो।

क्या तुम्हें मालूम है जहाँ भी मेरा प्रभाव है, मैंने C. D. भद्र अवज्ञा स्थगित कर दी। ट्रावनकोर और जयपूर उज्वल उदाहरण हैं। राजकोट में भी मैंने बन्द कर दिया। मैंने बार-बार कहा है मुझे हिंसा की गन्ध मिलती है। मैं अहिंसात्मक आन्दोलन के लिये वातावरण नहीं पाता। क्या रामपूर से कुछ सबक नहीं मिलता? हम दोनों एक ही चीज को दो तरह से देखते हैं और दो नतीजों पर पहुँचते हैं तब हम एक प्लेटफार्म पर कैसे आ सकते हैं?

मेरा विश्वास है कि अपने विश्वास के अनुसार काम कर हम देश की अधिक सेवा कर सकते हैं। मैं धन्यवाद नहीं पा सकता

था, राजकोट की उपेक्षा नहीं कर सकता था। मैं अच्छा हूँ। बा, मलेरिया से पीड़ित है।

एक बात भूल गया था, किसी ने तुम्हारे खिलाफ मुझे नहीं रखा। मैंने नगाँव में जो कहा था वह मेरी धारणा के अनुसार था! यह गलत है कि अगर तुम सोचते हो पुरानों में एक ही तुम्हारा व्यक्तिगत शत्रु है। प्रेम, बापू।

१३ अप्रैल को श्री बोस ने महात्माजी को एक पत्र फिर लिखा. इसमें श्री बोस ने कुछ और बातों का खुलासा किया। सेगाँव के सम्बन्ध में श्री बोस ने लिखा कि सेगाँव में जो बात हुई थी उससे यह तो लगता था कि हमारे अन्दर मत वैभिन्न है, पर वह विभिन्नता आधारभूत सिद्धान्तों की नहीं है। उदाहरण के तौर पर आपने अनाचार और हिंसा के सम्बन्ध में अपनी राय जाहिर की, आपने अल्टीमेटम और स्वराज्य संग्राम फिर से चलाने का भी विरोध किया, किन्तु क्या यह मतभेद आधारभूत सिद्धांतों पर है। कार्य-क्रम का फैसला करना कांग्रेस का काम है।

हम कांग्रेस के सामने अपने विचार और योजना रख सकते हैं, यह कांग्रेस पर निर्भर है कि उसे स्वीकृत करे या अस्वीकृत। त्रिपुरी में मेरे दोनों विचारों को अस्वीकृत कर दिया गया मगर मैं इसकी शिकायत नहीं करता, डेमोक्रेसी में ऐसा होता ही है। मेरा अभी था विश्वास है कि मैं ठीक था, कांग्रेस इसे एक दिन अनुभव करेगी मैं आशा करता हूँ वह दिन बहुत देर बाद नहीं आयेगा। मान लीजिये, मतभेद है। फिर भी हम एक साथ का . क्यों नहीं कर सकते। ये रहे हैं और रहेंगे।

संयुक्त और एक दलीय कार्यकारिणी के विषय में हमारी बात-चीत हुई थी, मैंने कहा था मैं सरदार पटेल का सहयोग पाने की चेष्टा करूँगा। अगर मैं बीमार नहीं पड़ता या वर्धा में २२ को हम मिल पाते तो शायद संयुक्त कार्य का रास्ता निकल आता। आपने लिखा है, A. I. C. C. मेरी नीति और योजना मान लें तो मुझे अपनी नीति वालों की कार्यकारिणी बनानी चाहिये, किन्तु मेरी राय है कि कार्यकारिणी ऐसी होनी चाहिये जो कांग्रेस गठन को पूर्णरूप से प्रतिविम्बित करे। समय ऐसा है कि हमें अपना राष्ट्रीय मोर्चा बढ़ाना चाहिये।

अनाचार के सम्बन्ध में हम सहमत हैं, राय यह है कि आप के दृष्टिकोण में कुछ अतिरेक है। फिर मेरा मत है कि राष्ट्रीय संग्राम आरम्भ होने से यह भी घट जायगा।

श्री राजेन्द्र बाबू ६ तारीख को पधारे थे। श्रमिक विषय पर विचार करने के बाद हमने कांग्रेस के सम्बन्ध में बातचीत की। राजेन्द्र बाबू ने फोन किया, मेरे डाक्टर ने फोन किया, तार दिये गये पर आप राजकोट में लिप्त रहे। मेरी दृष्टि में कांग्रेस का कार्य राजकोट से हजार गुना महत्वपूर्ण है। ७ अप्रैल के तार में आपने शरत् या किसी अन्य व्यक्ति के राजकोट आने की बात लिखी किन्तु जब पत्र व्यवहार से मामला तय नहीं हुआ तो किसी दूसरे द्वारा ऐसा नाजुक और गम्भीर मसला हल नहीं हो सकता।

आपके १० तारीख के पत्र के सम्बन्ध में मुझे दुख के साथ कहना पड़ता है कि आपके जवाब ज्यादातर निराशाजनक हैं।

पूरे पत्र में निराशा है, जिसमें मैं भाग नहीं ले सकता। आपको हमारी देशभक्ति में विश्वास रखना चाहिये था कि आवश्यक होने पर हम बलिदान कर सकते हैं। पन्त प्रस्ताव के सम्बन्ध में आपने कोई सलाह नहीं दी।

अगर आप जन आन्दोलन के सम्बन्ध में इतने निराश हैं तो देशी रियासतों में नागरिक स्वतंत्रता और उत्तरदायी शासन की स्थापना की आशा कैसे करते हैं। आपने कहा है जहाँ आपका प्रभाव है आपने आन्दोलन स्थगित कर दिया और सारी जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ली, मगर क्या आपकी जिन्दगी, राष्ट्र की नहीं है ? क्या देश नहीं आशा करता कि आप उसका उपयोग राजकोट से बड़े मामले में करें ? राजकोट वाले अगर अपने प्रयत्न से नहीं आपके प्रताप से स्वराज्य पावेंगे तो वे राजनैतिक दृष्टि से अविकसित रहेंगे।

राजनीति के साथ आपने हमारे आर्थिक मामलों में भी अलग-अलग रहने का उल्लेख किया है, क्योंकि शायद आप हमारी भारत के औद्योगीकरण की योजना को पसन्द नहीं करते, गोकि उसमें गृह उद्योग को प्रश्रय दिये जाने की योजना भी सम्मिलित है। राजनीति में हमारा आधारभूत सिद्धान्तों का भेद मुझे नहीं दिखता। मैं आशा करता था, आपके द्वारा खाई पाट दी जायगी।

आज अगर संयुक्त कार्य असंभव है तो हमेशा ही असंभव है, क्योंकि देश में जो वृत्ति आगयी है, वह रहेगी ही। आपने पत्रों में लिखा मैं अपना कार्य-क्रम A. I. C. C. के सामने रखूँ,

लेकिन कांग्रेस ने मुझे एक खास तरह से कार्यकारिणी बनाने का हुक्म दिया है, मेरे भाषण में मेरा प्रोग्राम पेश किया गया था, जिसे कांग्रेस ने स्वीकार नहीं किया। जब तक कार्यकारिणी का मामला तय नहीं हो जाता, तब तक मैं A. I. C. C. के सामने कार्य-क्रम नहीं रखना चाहता।

आपने लिखा था, समस्या का हल मेरे पास है उसी के अनुसार मैं अपने विचार और समस्याओं का हल आपके सामने पेश कर रहा हूँ। लेकिन अधिकांश सुझाव आपको पसन्द नहीं। अब आप ही कार्यकारिणी के सदस्यों के सम्बन्ध में अपनी इच्छा से अवगत कराइये। पन्त प्रस्ताव कहता है, कार्यकारिणी का निर्माण न सिर्फ आपकी इच्छा से हो बल्कि वह आपकी पूर्ण विश्वास भाजन भी हो। मैं एक दलीय कार्यकारिणी की नियुक्ति के सम्बन्ध में आपकी सलाह को कार्य रूप नहीं दे सकता, क्योंकि वह आपकी विश्वास भाजन नहीं होगी। फिर मेरी राय में एक दलीय कार्यकारिणी देश के स्वार्थों के विपरीत होगी।

आशा है, त्रिपुरी कांग्रेस ने जो कार्य-भार आप पर दिया है, उसे पूर्ण करेंगे। अगर आप यह करने से भी इन्कार करें तो मैं क्या करूँ? क्या मैं A. I. C. C. को कार्यकारिणी चुनने को कहूँ! या आप और कोई सलाह देंगे? आशा है, बा अच्छी होंगी और शीघ्र ही आरोग्य हो जायँगी। आपका स्वास्थ्य खासकर ब्लड प्रेसर कैसा है? मैं अच्छा हो रहा हूँ। प्रणाम सुभास।

P. S. आपने लिखा है, मेरे द्वारा नियुक्त कार्यकारिणी पर

A. I. C. C. के मेम्बरों को राय देने देना चाहिये। तब उन्हें भी कार्यकारिणी की नियुक्ति में अपना फैसला प्रकट करने दिया जाय। अगर मैं आपकी सलाह को कार्यरूप न दे सकूँ जो पन्त प्रस्ताव के खिलाफ है, तो A. I. C. C. को कार्यकारिणी चुनने का दायित्व लेना चाहिये? क्या आप और कोई हल बतला सकते हैं?

१४ तारीख को श्री बोस ने महात्माजी को तार दिया कि आपकी उपस्थिति आवश्यक है। क्या मई का पहला सप्ताह ठीक होगा?

महात्माजी ने तार दिया, मेरा विश्वास है कि अपने पसन्द की कार्यकारिणी चुनना चाहिये।

श्री बोस ने लिखा, मैं आपकी सलाह को कार्यरूप नहीं दे सकता अब यही उपाय है कि आप कार्यकारिणी चुन दें। अगर किसी कारण से आप कार्यकारिणी नामजद नहीं करते तो, विषय A. I. C. C के सामने जायगा फिर भी आखिरी चेष्टा करनी चाहिये। कृपया जवाब दीजिये।

इस तार के बाद श्री बोस ने महात्माजी को फिर पत्र लिखा। बहुतों की राय है, A. I. C. C. के पहले कार्यकारिणी बन जाना चाहिये। A. I. C. C. में आपकी उपस्थिति आवश्यक है। आप पसन्द करें तो A. I. C. C. स्थगित कर दी जाय। मैं चाहता हूँ पत्र व्यवहार से समझौता न हो तो A. I. C. C. के पहले हमें मिलना चाहिये। मैं एक दलीय कार्यकारिणी के विषय में आपकी सलाह को कार्यरूप नहीं दे सकता, आप

कार्यकारिणी नामजद कर दें, कार्यकारिणी की बैठक होगी और उसके बाद A. I C. C. की। अन्यथा, मामला A. I. C. C. के सामने जायगा।

श्री बोस ने कार्यकारिणी की नामजदगी के लिये A. I. C. C. के पहले व्यक्तिगत मुलाकात पर बहुत जोर दिया।

महात्माजी ने जवाब दिया, २८ तारीख ही रहने दो, मीटिंग में आऊँगा, कार्यकारिणी लाद नहीं सकता। कार्यकारिणी बनाओ या A. I. C. C. को फैसला करने दो। संयुक्त केबिनेट अव्यवहारिक! समय हुआ तो वक्तव्य दूँगा।

श्री बोस ने लिखा, अगर आप वक्तव्य दें तो पत्र व्यवहार प्रकाशित करने की अनुमति दें।

महात्माजी ने जवाब दिया—२४ को रवाना हो, २७ को पहुँच रहा हूँ। श्री बोस ने लिखा, जवाहरलालजी कल यहाँ थे, यह बेहतर है कि आप कलकत्ते के पास यात्रा भङ्ग करें ताकि हम मिल सकें। यह विचार पसन्द हो तो, तार दें। इसके बाद ही श्री बोस ने दूसरा तार दिया कि—जवाहरलालजी और मैं आशा करता हूँ कि हमारी मुलाकात का परिणाम उत्तम निकले। हम दोनों मिलने के पहले पत्र व्यवहार प्रकाशित करना अवांछनीय और अनावश्यक समझते हैं।

श्री बोस ने २० अप्रैल को भी एक पत्र लिखा और सहयोग की अपील की। और लिखा कि जवाहर से मैंने साथ रहने और बात-चीत में भाग लेने के लिये कहा और उन्होंने स्वीकार कर लिया।

इसके बाद कलकत्ते के पास सतीश बाबू के चुने हुए स्थान में महात्माजी का ठहरना सबने पसन्द किया। इसके बाद ही बोस ने ५ मई को पत्र व्यवहार प्रकाशित करने की अनुमति माँगी। और महात्माजी ने लिखा—पत्र व्यवहार प्रकाशित कर दो। प्रेम, बापू!

भारत क्यों छोड़ा ?

—::०::—

[नेताजी ने बर्लिन रेडियो द्वारा अपने भारत छोड़ने का वास्तविक उद्देश्य इस प्रकार बतलाया है ।]

सबसे पहले मैं आप से अपने बारे में कुछ कहूँगा । मैं चाहता हूँ कि आप सब लोग यह जान लें कि मैं क्या हूँ और मेरा व्यक्तिगत जीवन क्या है ?

विश्व-विद्यालय की शिक्षा के बाद मैंने राजनैतिक दुनिया में प्रवेश किया । उस समय सब से मुख्य सवाल यह था—"गत महायुद्ध में भारतीयों ने क्या किया, उसका परिणाम क्या हुआ तथा भविष्य के लिये हमें कौन सा अनुभव मिला और हमने कौन सा पाठ सीखा ?" भारत और इंग्लैण्ड में हमें यह अनुभव हुआ कि हमारे नेताओं की नीति गलत थी । किन्तु कार्य करने के लिये हम अपने नेताओं पर ही अवलम्बित थे । हम तरुण और विद्यार्थीवर्ग सम्पूर्ण रूप से निराश हो गये । एक यही ख्याल हमारे मन में था—"जो गलती हमारे नेताओं ने पिछले महायुद्ध में की वह अब दुहराई न जाय ।" हमने महसूस किया कि अगर भविष्य में हम लोगों को अवसर दिया गया तो यह गलती हम नहीं करेंगे ।

एक बड़ा सवाल और भी था । यूरोप में लड़ाई के बाद सम्

१५१८-१९१९ के वर्षों में बहुत परिवर्तन हुए। नई सल्तनतें बन रही थीं। जेक जाति के लोग, आस्ट्रो-हंगेरियन-साम्राज्य से अलग हो गये। एक दूसरी जाति—पोल जाति ने—अपनी सरकार अलग बना ली। जब मैं यूरोप गया, तब वहाँ मुझे दो-तीन भारतीय नेताओं से मिलने का अवसर आया। उन लोगों ने मुझे सलाह दी कि यदि मैं अपनी जन्मभूमि के लिये कुछ करना चाहता हूँ तो मुझे युद्ध का इतिहास पढ़ना चाहिये। ब्रिटेन के विरुद्ध अपनी लड़ाई में तत्कालीन इतिहास के अनुभवों को उपयोग में लाना चाहिये। हम लोगों ने सीखना और समझना शुरू किया। हमने यह जाना कि कुछ जेक-नेता किस प्रकार प्रचारकार्य के लिये तथा आस्ट्रिया और हंगरी के दुश्मनों से सहायता प्राप्त करने के लिये बाहर गये। उन्होंने फ्रांस और ब्रिटेन के साथ सहयोग किया और इन दोनों सरकारों ने जेक-नेताओं को मदद दी और युद्ध के बाद स्वतंत्र सरकार की स्थापना का उनका हक भी स्वीकार कर लिया। ब्रिटेन और फ्रांस ने, उनके प्रयत्नों में हर तरह की सहायता देने का आश्वासन दिया। उन्होंने उचित लगन से अपने कार्य प्रारम्भ कर दिये। अपने देश के बाहर के समस्त जेकों को उन्होंने रंगरूट बनाया। आस्ट्रो-हंगेरियन सेना के जेक जाति के सैनिक, जो शत्रुओं के हाथ बन्दी हुए, उन्होंने भी जेक-नैशनल आर्मी (जेक राष्ट्रीय सेना) को अपनी सेवाएं स्वेच्छा से प्रदान की। इस सेना में बीस हजार सिपाही थे। ब्रिटेन और फ्रांस से मिलकर यह सेना आस्ट्रिया हंगरी और जर्मनी से लड़ी।

पोल जाति के लोगों ने भी ३० हजार की सेना संगठित की। उन्होंने युद्ध में भाग लिया। यह उनका सौभाग्य था कि जर्मनी और उसके साथी राष्ट्र हार गये, और युद्ध के बाद वे (पोल और जेक-जाति के लोग) अपनी सरकार कायम कर सके।

कोई कारण नहीं कि हम उसी रास्ते पर क्यों न चलें और अन्तःराष्ट्रीय परिस्थितियों का इतिहास पढ़कर सम्पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिए भारत से बाहर जाकर ब्रिटेन के शत्रुओं के कंधे से कंधा मिलाकर युद्ध क्यों न करें।

आयर्लैण्ड के लोगों ने भी युद्ध से लाभ उठाया। सीन-फीन दल की अधीनता में उन्होंने ब्रिटेन के विरुद्ध खुला विद्रोह किया। डब्लिन नगर में, सीन-फीन पार्टी की ३००० सेना थी। देशभर में उनकी सेना की संख्या १० हजार थी। उनकी योजना में कुछ त्रुटि रह गई जिससे डब्लिन में जो विद्रोह उन्होंने उठाया, वह गाँवों में फैल न सका। किसी प्रकार ८ दिन तक उन्होंने डब्लिन नगर पर अधिकार रखा। यह विद्रोह ईस्टर के दिनों शुरू हुआ। अतएव उसका नाम ईस्टर विद्रोह पड़ा। सन् १९१६ में यह विद्रोह सफल नहीं हुआ। युद्ध के बाद तत्काल सन् १९१९ में यह फिर भड़का। विद्रोहियों के पास केवल ५ हजार सैनिक थे। इसबार परिणाम भिन्न हुआ। युद्ध समाप्त हो गया। उन्हें दबाने के लिये इँगलैण्ड से सेना लायी जा सकती थी। तथापि, केवल ५००० सैनिकों की यह सेना अपनी लड़ाई चलाती रही। अन्त में ब्रिटिश जाति को घुटने टेकने पड़े।

गत महायुद्ध के इतिहास के अध्ययन से प्राप्त अनुभवों के

आधार पर सन् १९२१ में हमने भारत में कार्य प्रारम्भ किया। उस समय आप लोग जानते हैं, महात्मा गांधी ने असहयोग आन्दोलन छेड़ दिया था। खिलाफत कमेटी भी कांग्रेस के साथ मिलकर काम कर रही थी। असहयोग आन्दोलन में हम लोगों ने भी भाग लिया। अँग्रेजों के भयानक दमन के मुकाबले में, राष्ट्र की इज्जत बचाने और अपनी लड़ाई चलाने का कोई दूसरा जरिया न देखकर हम लोग सन् १९२१ में महात्मा गांधी के अधीन कांग्रेस में शामिल हो गये। हिन्दू और मुसलमान मिल गये थे। किन्तु हम लोग निश्चित रूप से जानते थे कि भद्रअवज्ञा आन्दोलन से भारत को पूर्ण स्वतन्त्रता नहीं मिल सकती। इस आन्दोलन से जनता में राजनैतिक जागृति पैदा हुई। इस आन्दोलन ने जनता को सशस्त्र संघर्ष के लिये तैयार कर दिया।

यह व्यक्तिगत मत नहीं; यह उन अनेक तरुणों का मत है जो सन् १९२१ में महात्मा गांधी से प्रभावित हुए। कुछ तरुण जरूर ऐसे थे जिनका विश्वास अहिंसा में था; किन्तु उनमें से अधिकांश हिंसा के जबर्दस्त समर्थक थे।

सन् १९३३ में मैं युरोप गया। वहाँ १९३५ तक ठहरा। युरोप जाने का मेरा उद्देश्य यह अध्ययन करना था कि वहाँ अब कौन सी घटना घटनेवाली है। युरोप में रहते हुए मैं बर्लिन गया। वहाँ के कुछ सरकारी कर्मचारियों से परिचय प्राप्त किया और फ्युहरर हिटलर से मुलाकात की। मैंने उनसे यह साफ-साफ पूछा कि वे कब युद्ध ठानने जा रहे हैं। उन्होंने उत्तर दिया कि वे ब्रिटेन से बिलकुल लड़ना नहीं चाहते। उन्हें आशा थी कि

ब्रिटेन द्वारा उनकी माँगें पूरी कर दी जायँगी। वे ब्रिटेन से सुलह करने के पक्ष में थे। किसी कदर उन्होंने भारत की स्वतन्त्रता के साथ अपनी सहानुभूति प्रकट की।

यह सब कुछ कहने का अर्थ यह है कि मैं जब युरोप से लौटा तब आगे होनेवाली घटनाओं का विश्वास लिये लौटा। जर्मनी में जो दल सत्तारूढ़ हुआ, वह सदा लड़ाई के पक्ष में था। मैं यह स्पष्ट समझ गया कि ब्रिटेन जर्मनी की माँगें पूरी नहीं करेगा और ज्योंही ब्रिटेन देख लेगा कि जर्मनों की शक्ति थोड़ी और बढ़ गई है त्योंही वह नाजियों से युद्ध छेड़ देगा। सन् ·९३८ में जब मैं युरोप गया तब मैंने कुछ परिवर्त्तन देखे। जर्मनी समझने लग गया कि ब्रिटेन उसकी स·पूर्ण माँगों की पूर्ति कभी नहीं करेगा। सन् १९३८ के सितम्बर में, जर्मनों ने सुडेटन जर्मनों का मामला पेश किया। ब्रिटिश प्रधान मन्त्री श्री० चेम्बरलेन हर हिटलर से सुलह करने म्यूनिख दौड़े। एक समय था, जब अन्तःराष्ट्रीय महत्त्व की समस्त चर्चाएँ लन्दन में हुआ करती थीं। जब मैंने ब्रिटिश प्रधान मन्त्री को अपना देश छोड़-कर जर्मनी भागते देखा तब यह जाना कि ब्रिटेन कमजोर होता जा रहा है और जर्मनी मजबूत।

तब मैंने यह प्रचार करना शुरू कर दिया कि युरोप में युद्ध अवश्यंभावी है। भारतीयों का कर्त्तव्य है कि वे सावधान रहें तथा ब्रिटेन को अपनी माँगें मंजूर करने को विवश करें। और यदि ब्रिटेन अस्वीकार करे तो भारत लड़ने की तैयारी करे। मैं जनता में होनेवाली अपने प्रचार की प्रतिक्रियाओं को देख रहा

था। मैं जानता था कि मुझे जनता का सम्पूर्ण समर्थन प्राप्त है। किन्तु हमारे नेता दूसरी तरह सोच रहे थे—खासकर महात्मा गांधी। उनकी नीति ठहरने और परिणाम देखने की थी। तथापि हम तरुण उनकी इस नीति से विचलित नहीं हुए। हमने दूने वेग से अपने प्रयत्न और प्रचार प्रारम्भ कर दिये। हम लोग भारत की जनता से कह रहे थे कि निकट भविष्य में जो स्वर्ण-अवसर उसके हाथ आयेगा, उससे वह पूरा लाभ उठावे।

मार्च १९३९ में भारत की राष्ट्रीय महासभा कांग्रेस का अधिवेशन त्रिपुरी में हुआ। मैंने ६ महीने में भारत को सम्पूर्ण स्वतन्त्रता देने और सरकार को इसकी अन्तिम सूचना देने का प्रस्ताव पेश किया और कहा कि यदि हमारी यह माँग उस अवधि के भीतर पूरी न की जाय तो हमें जो भी शक्ति हमारे पास है उसे लेकर ब्रिटेन से युद्ध करने के लिये जनता को तैयार करना चाहिये। ये बातें एक सूचना के रूप में कही गयी थीं और अगले छः महीनों में युद्ध छिड़ जाने की पूरी जानकारी और अन्तःराष्ट्रीय परिस्थिति की गंभीरता को अच्छी तरह ध्यान में रखते हुए, यह प्रस्ताव रखा गया था।

१९३९ के सितम्बर में युरोप में युद्ध छिड़ गया तब जनता समझने लगी कि मार्च में जो कुछ मैंने कहा था वह सही था। उस समय हमारा यह कर्तव्य था कि अपनी तमाम शक्तियों को एकत्रित करके, ब्रिटेन को हम मजबूर करें कि वह हमारी माँगों को मंजूर करे और यदि इसमें हमें सफलता न मिले तो हम अपनी माँगों की पूर्ति के लिये लड़ाई छेड़ दें। किन्तु हमारे

नेताओं के विचार और कार्य इससे भिन्न थे। उनकी यह धारणा थी कि युद्धकाल में ब्रिटेन कमजोर पड़ जायगा, और भारत से सहायता पाने के लिये वह भारत से समझौता कर लेगा। मैंने इस धारणा को गलत साबित करने की कोशिश की, और कहा कि लड़ाई के समय चाहे ब्रिटेन की जो भी कमजोरी हो, वह भारत में अपनी शक्ति घटने नहीं देगा। ज्यों-ज्यों वह कमजोर पड़ता जायगा, त्यों-त्यों भारत पर उसकी पकड़ सख्त होती जायगी। भारत के बिना वह युद्ध को सफलता से चला ले जाने में समर्थ नहीं होगा। और ज्यों-ज्यों कमजोर होता जायगा, त्यों-त्यों वह इस देश के साधनों का शोषण करता जायगा।

मार्च १९४० में जब कांग्रेस का अधिवेशन जारी था, हमने क़दम आगे बढ़ाने की उम्मीद की। किन्तु गांधीजी अपने पथ-पर अड़े रहे। वे अब भी प्रतीक्षा करने और परिणाम देखने की इच्छा रखते थे। हम अपने मन को इस रूप में तैयार करने लगे कि चाहे जो हो, हमें अपना आंदोलन जारी कर देना चाहिये। देशभर में युद्ध विरोधी आन्दोलन प्रारम्भ हो गया। आन्दोलन गहरा होता गया। बहुत लोग जेल गये। इसी बीच मुझे खबर मिली कि चूँकि सरकार कुछ नहीं कर रही है अतएव नवम्बर महीने में महात्मा गांधी खुद सत्याग्रह-आन्दोलन शुरू करेंगे। मैंने सुख की साँस ली। मैं सोचने लगा—अब तमाम दुनिया जान जायगी कि भारत अपनी स्वतन्त्रता के लिये लड़ रहा है। सब राष्ट्र यह सोचेंगे कि भारत स्वाधीन होने योग्य है। हमें निश्चित रूप से संसार की सहानुभूति प्राप्त होगी!

किन्तु मैंने सोचा कि केवल सत्याग्रह के शस्त्र से हम स्वाधीनता नहीं ले सकेंगे। सत्याग्रह से सरकार पर दबाव जरूर पड़ेगा और उससे युद्धोद्योग में बाधा पड़ेगी; किन्तु इतने से सरकार हमारी माँगों पर ध्यान नहीं देगी। यह मेरा खयाल था। हम लोग विचार कर रहे थे कि करना क्या चाहिये। बमों और रिवाल्वरों से नवजवान, जो थोड़ा बहुत करते थे, वह कर रहे थे। हमलोग इन क्रान्तिकारियों के संपर्क में आये। मैं इनकी शक्ति को जानता था। ये लोग ऊँची भावनाओंवाले सच्चे क्रान्तिकारी थे। किन्तु इनकी शक्ति और इनके त्याग हमारी मातृभूमि को पूर्ण स्वाधीन करने के लिये प्रर्याप्त नहीं थे।

तब हमने पुनः इतिहास के पन्ने टटोलने शुरू किये। हमें उनमें अनेक उदाहरण और यथार्थ पाठ मिले। एक उदाहरण अमेरिका का हमारे सामने था। मैंने यह जाना—और इसी निष्कर्ष पर पहुँचा भी—कि, बगैर किसी बाहरी सहायता के भारत की क्रान्ति सफल नहीं होगी। संयुक्त साम्राज्य (अमेरिका) ने फ्रांस से बहुत बड़ी सहायता प्राप्त की थी। दुनिया के इतिहास में, किसी देश के लिये, अपनी स्वतन्त्रता हासिल करने के वास्ते विश्व के अन्य राष्ट्रों की मदद लेना, कोई नई बात नहीं थी। भारत में जो संवाद मिलते थे वे तोड़-मरोड़ और अधिकतर प्रचारात्मक ढङ्ग के हुआ करते थे। यह करना ब्रिटेन के लिये स्वाभाविक था। भारत में रहकर बाहर की दुनिया की वस्तु-स्थिति समझ लेना सम्भव नहीं था। युद्ध का परिणाम क्या होगा, उसकी समाप्ति किस रूप में होगी, और अन्त में जीत

किसकी होगी ? विदेशों में निवास करने वाले भारतीयों के क्या विचार हैं, भारत की स्वतन्त्रता की लड़ाई के बारे में वे किस विचार-प्रणाली से सोचते हैं, भारतीय स्वतन्त्रता के युद्ध में किस प्रकार उनकी सहायता प्राप्त की जाय, और क्या यह सम्भव है कि वे ब्रिटेन के शत्रुओं से कुछ ठोस सहायता प्राप्त कर सकें ?

इन्हीं अनुभवों के आधार पर मैं इस निर्णय पर पहुँचा हूँ कि भारत के भीतर से हम ज्यादा से ज्यादा जितना भी प्रयास करें वह अपने देश से अंग्रेजों को हटाने के लिये पर्याप्त न होगा। अगर हमारे देश का आन्दोलन हमारे देशवासियों को मुक्ति के लिये पर्याप्त होता तो मैं इतना मूर्ख नहीं हूँ कि अनावश्यक इतना बड़ा खतरा और जोखिम मोल लेता।

भारत छोड़ने का मेरा उद्देश्य संक्षेप में यह है कि देश में जो आन्दोलन चल रहा है, उसे बाहर से मदद दूँ। बाहर की इस अतिरिक्त सहायता के बिना भारत को स्वाधीन करना किसी के लिये भी असम्भव है। देश के राष्ट्रीय संग्राम को जिस अतिरिक्त सहायता की आवश्यकता है, वह वस्तुतः बहुत छोटी है, क्योंकि एक्सिस शक्तियों ने अँग्रेजों को जिस कदर हराया है उसने ब्रिटिश शक्ति और सम्मान को इस कदर छिन्न-भिन्न कर दिया है कि हमारा काम अपेक्षाकृत सहज हो गया। हमारे देशवासियों को जिस सहायता की जरूरत थी और अभी भी है, वह दो तरह की है, एक नैतिक और दूसरी भौतिक। प्रथम उन्हें मन में यह विश्वास होना चाहिये कि आगे चलकर विजय उनकी ही

होगी, दूसरे उन्हें बाहर से सैनिक सहायता मिलनी चाहिये। पहली सहायता की पूर्ति करने के लिये अन्तर्राष्ट्रीय युद्धस्थिति का अध्ययन करना चाहिये और यह मालूम करना चाहिये कि युद्ध का क्या परिणाम होनेवाला है और दूसरी सहायता की पूर्ति के लिये यह जानना चाहिये कि भारत के बाहर के भारतीय अपने देशवासियों की क्या सहायता कर सकते हैं और ब्रिटिश साम्राज्यवाद के दुश्मनों से अगर संभव हो तो कैसी सहायता लेनी चाहिये ?

इसलिये 'मेरी योजना के अनुसार भारत के प्रति एक्सिस पावर के रुख के संबंध में सोचना भी जरूरी नहीं है।' अगर भारत के भीतर और बाहर के भारतीय अपना कर्तव्य पालन करें तो भारतीय जनता के लिये यह संभव है कि भारत से अंग्रेजों को निकाल दें और अपने ३८ करोड़ देशवासियों को स्वाधीन कर दें। विदेश जाना अपने जीवन, भविष्य और अपने दल के भविष्य की जोखिम उठाना था। अगर मुझे जरा भी आशा होती कि भारत के बाहर की कार्यवाही के बिना हम स्वाधीनता प्राप्त कर सकते हैं तो संकटकाल में मैंने भारत कदापि न छोड़ा होता। अगर मुझे कोई भी आशा होती कि अपने जीवनकाल में हम दूसरा मौका—ऐसा स्वर्णसुयोग जैसा कि वर्तमान महायुद्ध ने हमें दिया है, आजादी हासिल करने के लिये पावेंगे तो मैं घर से बाहर नहीं जाता।

गान्धीजी और कांग्रेस से मेरा तत्वतः कभी गहरा मतभेद नहीं रहा। मतभेद हो ही कैसे सकता है? कांग्रेस चालीस

करोड़ दलितों के दुखदर्द का प्रतिनिधित्व करने वाली तपोपुंज संस्था है। भारत के लाखों शहीदों ने सीना तानकर अपने प्राणों की जो सहर्ष बलि अर्पित की—कांग्रेस उसकी ज्योतिर्मयी प्रतीक है। बलिदानों और तपस्या के अमरत्व से अनुप्राणित संस्था भौतिक ही क्या किसी दैविक दमन से भी पराभूत नहीं हो सकती। अतः ऐसी संस्था का सदस्य होना 'मनुष्य' कहलाने वाले प्रत्येक व्यक्ति के लिये गौरव और सौभाग्य की बात है। मैंने अपने जीवन के प्रत्येक क्षण में इस गौरव को अनुभव किया और जब कभी मेरे मन, वचन और कर्म ने कांग्रेस के सन्देश को किसी न किसी रूप में कार्यान्वित किया—स्वतंत्रता की प्यासी जनता के सामने व्यक्त किया तो मेरा मस्तक सदैव गर्व से ऊँचा हो गया।

मेरा जीवन साहसिक योजनाओं का एक उग्र और अप्रतिहत प्रवाह कर रहा है। आशा, उल्लास और सफलता की अपेक्षा जीवन का वृहत अंश उद्वेग, द्वन्द्व और विषाद से ओत-प्रोत रहा किन्तु कांग्रेस की साधना ने सदैव मेरे पराजित मन पर विजय पाई और जीवन के गहरे से गहरे अंधकार में भी मुझे इस शहीदों की संस्था से नया प्रकाश और शक्ति मिली। त्रिपुरी के बाद कांग्रेस की सिद्धांत प्रगति में एक नई धारा का और समावेश हो गया। वाम पक्ष जो कांग्रेस को 'उदारता भरी प्रतीक्षा' (Wate and s03) की नीति से असंतुष्ट हो रहा था और देश को स्वाधीन देखने को उतावला हो रहा था वह अपनी ठोस टोली लेकर आगे बढ़ने को कटिबद्ध हो गया। किन्तु कांग्रेस के

मूलभूत सिद्धांत के प्रति उसने कभी अवज्ञा नहीं दिखलाई। थोड़े दिनों तक भारतीय राष्ट्रीय संग्राम की दोनों फौजें आजादी की लड़ाई लड़ती रहीं। इसी बीच युरोप में महायुद्ध की आग भड़की। कांग्रेस से मुझे उम्मीद थी कि वह अब अपने आखिरी संग्राम का बिगुल बजावेगी। किन्तु कांग्रेस ने अपनी प्रतीक्षा की नीति नहीं छोड़ी। मेरा मन उद्विग्न हो उठा। मेरे साथियों ने भी मुझे मजबूर किया कि मैं इस अवसर से देश को लाभान्वित करूँ। किन्तु मुझे कांग्रेस में कुछ तैयारियों का आभास मिला। साथ ही कांग्रेस के कुछ नेताओं से मेरी बात-चीत भी इस विषय की हुई। मैंने अपने मानसिक द्वन्द्व के निराकरण के लिये इस विषय में गांधीजी से भी मुलाकात की। इन सब बातों का परिणाम यह हुआ कि कांग्रेस निश्चित रूप से आजादी की लड़ाई का ऐलान करेगी—अभी अवसर की प्रतीक्षा है। किन्तु जब मेरा ध्यान ब्रिटेन की टोरी हुकूमत की तरफ गया और पार्लियामेंट में दिये गये मि० चर्चिल के भाषण मैंने पढ़े तो मुझे संदेह होने लगा कि कांग्रेस शायद अपनी अहिंसावादी युद्ध-योजना में सफल न हो। देश की आजादी का सवाल था—संसार के अन्य देश अपने भाग्य का निर्णय कर रहे थे और मानवीय अधिकारों की रक्षा के लिये रक्त की नदियाँ बह रही थीं। मेरा संदेह गहरा होता गया। मुझे भय था कि कहीं हम हाथ पर हाथ धरे बैठे न रह जावें। मुझे महसूस हो रहा था कि आजादी हमारे दरवाजे पर खड़ी है और प्राणों की बाजी लगा कर हमें उसका अभिनंदन करना चाहिये। साथ ही मैंने यह भी सोचा कि देश

के भीतर तो कांग्रेस का आन्दोलन शुरू होगा ही चाहे जल्दी हो या देर से। कांग्रेस चुपचाप नहीं बैठी रहेगी। किन्तु यदि देश के बाहर भी एक आन्दोलन प्रारम्भ किया जावे तो सफलता और भी शीघ्रता से प्राप्त हो सकेगी। शत्रु सदियों से जमे हुए हैं। उन्हें आमूल उखाड़ फेंकने के लिये अन्दर और बाहर दोनों मोर्चों से आक्रमण करना आवश्यक है। मेरा विचार परिपक्व होता गया। साथ ही अपने मित्रों के साथ मैं योजना भी बनाने लगा कि किस प्रकार भारत से भी बाहर एक स्वतंत्र आंदोलन शुरू किया जावे? किसको बाहर भेजा जावे। यह जटिल समस्या मेरे सामने थी जिसको हल करना मुझे आवश्यक था। काफी विचार विमर्श के बाद आखिरी निश्चय यही रहा कि मैं ही बाहर जाऊँ और राष्ट्रीय स्वातंत्र्य का आंदोलन शुरू करूँ। कांग्रेस हाई कमाण्ड के सामने भी मैंने अपनी योजना रक्खी। वहाँ से भी मुझे सहानुभूतिमय स्वीकृति मिली। अहिंसा कांग्रेस की बुनियादी नीति है और अपने महत्वपूर्ण जीवनकाल में कांग्रेस ने सदैव अहिंसा को सर्वोपरि प्रश्रय दिया है। अतः गान्धीजी ने मुझे अशीर्वाद तो दिया किन्तु सशस्त्र आन्दोलन के खतरों और जिम्मेदारी की ओर भी उन्होंने मेरा ध्यान आकृष्ट किया। भारत छोड़ने के निश्चय को कार्यान्वित करने के पूर्व गान्धीजी ने जो आशीर्वाद मुझे भेजे वे ये थे—

"आपकी ईमानदारी, शक्ति और उत्कट देशभक्ति का मैं कायल हूँ। देश की स्वतंत्रता की बागडोर आपके हाथों में सुरक्षित है। आपकी योजना, यद्यपि, मेरे सिद्धान्तों के प्रतिकूल

पड़ती है किन्तु आपके प्रति मेरा स्नेह और आपका शौर्य मुझे आशीर्वाद देने के लिये विवश करता है। मैं भगवान से प्रार्थना करता हूँ कि आप अपनी योजना में सफलता प्राप्त करें।" मेरे साथियों ने भी मुझे हर तरह का प्रोत्साहन दिया। मेरी योजना में अनेक कमियाँ थीं और मैं भारत से बाहर दस कदम भी नहीं जा सकता था यदि मेरे सहयोगी मुझे अपनी मूल्यवान सहायता न देते। हफ्तों तक हम लोग बैठते और बाहर जाकर काम शुरू करने की योजना पर विचार करते—कई-कई रात तो हम लोग जागते ही रहे। आखिर बाहर से लड़ाई छेड़ने की पूरी स्कीम मैंने तैयार कर ली।

मास्को के प्रति मेरा स्वाभाविक आकर्षण था। मुझे उम्मीद थी कि मास्को से मुझे अवश्य फौजी सहायता मिल जावेगी। अतः मेरी पहली स्कीम किसी न किसी प्रकार मास्को पहुँचने की थी। उस समय रूस युद्ध में नहीं उतरा था और जो तटस्थता का दृष्टिकोण उसने अख्तियार कर रक्खा था उससे मुझे आशा थी कि वहाँ मेरी योजना पर सहानुभूति-पूर्वक विचार होगा। जन-युद्ध का सन्निपात उस समय भारतीय कम्यूनिस्टों के दिलो-दिमाग पर सवार नहीं हुआ था। साम्राज्यवाद के विश्व-व्यापी शोषण के खिलाफ रूसी सिद्धांतों की दृढ़ता पूर्ववत् बनी हुई थी। धुरीराष्ट्रों और प्रजातन्त्रों के युद्धादर्शों का विश्लेषण करते हुए मार्शल स्टालिन ने जो वक्तव्य दिया था उससे भी मुझे विश्वास होता था कि रूस में 'जनक्रान्ति' की विचारधारा सारे विश्व के दलितों की आक्रान्त भावना का प्रतिनिधित्व करती है। इस

प्रकार रूस जाने का मेरा निश्चय दृढ़ हो गया। खोज करने पर मुझे भारत में ऐसे व्यक्ति भी मिल गये जो मुझे रूस ले जाने को तैयार थे। निरन्तर दस-बारह दिनों तक मैं उन लोगों से वाद-विवाद करता रहा। पहले तो वे हिचकिचाये। मेरे सिद्धान्तों से वे डरे और एक महानुभाव ने तो साफ इन्कार कर दिया कि मेरे जैसे फासिस्ट मनोवृत्ति प्रधान व्यक्ति को वे रूस जाने में किसी प्रकार सहायता नहीं पहुँचा सकते। किन्तु उनके अन्य साथियों ने मेरी योजना पर विचार किया और बड़े सोच विचार के बाद मुझे विश्वास दिलाया कि वे मुझे सकुशल रूस पहुँचा देंगे।

मुझे रूस पहुँचाने वाले साथी एक रोज मेरे पास आये और मेरे चुपचाप भाग जाने की सारी स्कीम भी अपने साथ लाये। उनकी योजना बड़ी चतुर और साहसिक थी। छोटी-से-छोटी बात भी उनकी योजना में स्पष्ट थी। मैं जाने को राजी हो गया और तैयारी करने लगा, किन्तु मुझे कुछ आशङ्कायें भी हुईं जो बेबुनियाद नहीं थीं। रूस ले जाने वाले साथी लोगों की कुछ हरकतों पर मुझे संदेह था। वे अजीब-अजीब शर्तें मेरे सामने पेश कर रहे थे और उनमें से कुछ मनमानी थीं। कुछ शर्तें मैंने स्वीकार कर ली। किन्तु अधिकांश मुझे मान्य नहीं हुईं। मैं सारी परिस्थिति पर नये सिरे से सोचने लगा। बड़े लम्बे अर्से तक मानसिक द्वन्द्व में उलझे रहने की बनिस्बत मैंने यही श्रेयस्कर समझा कि थोड़ा और रुक जाऊँ और अपनी तैयारियों पर शान्ति से विचार कर लूँ। अतः मैंने रूस ले जाने

वाले व्यक्तियों से थोड़ा समय माँगा। किन्तु वे शीघ्रता पर तुले हुए थे, उन्होंने जल्दी का तकाजा किया। बाहर मुझे निश्चित रूप से जाना था। मैं अपने ढङ्ग पर और दिशाओं में भी प्रयत्न करता रहा। अन्य व्यक्तियों से भी मैं मिला और अपने 'मिशन' के लिये मैंने उनकी सहायता माँगी। वहाँ से भी मुझे उम्मीदभरे जवाब मिले। अतः अन्दर ही अन्दर मैं भारत से बाहर निकल जाने की एक और नई योजना बनाता रहा। इधर रूस ले जाने-वाले व्यक्तियों का जल्दी करने का तकाजा और मनमानी शर्तें मंजूर करने की बात मुझे अग्राह्य हो रही थी—उधर मेरे साथी मेरे लिये एक नवीन योजना बना चुके थे। दोनों तरफ की तैयारियाँ बिना एक दूसरे की जानकारी के चलती रहीं। मेरी उलझनें धीरे-धीरे सुलझ रही थीं।

मेरे जाने की सारी तैयारियाँ पूरी हो चुकी थीं। मेरा अन्त करण बड़ा चिंतित और ऊबा हुआ था। बड़ी व्याकुल प्रतीक्षा के बाद आखिर मेरे वे सहयोगी आये जिन्होंने मुझे भारत से बाहर ले जाने की जिम्मेदारी ले रक्खी थी। सामान्यतः बाहर जाने के लिये भारत में मुख्य तीन मार्ग हैं। पहला बरमा के रास्ते जापान चले जाना, दूसरा किसी बन्दरगाह की राह जल-यात्रा की सुविधाएँ प्राप्त करके विदेशों में पहुँचना, तीसरा मार्ग है सीमान्त प्रदेश के पर्वतीय मार्गों से पेशावर होते हुए अफगानिस्तान में दाखिल हो जाना। पहले मेरी इच्छा हुई कि मैं बरमा के मार्ग से जापान चला जाऊँ और वहाँ से ब्लाडिवास्टक होते हुए रूस की राजधानी मास्को पहुँच जाऊँ। अपनी इस यात्रा से लगभग एक

साल पूर्व ही मैं जापानी कौंसल (Consal) से इस विषय में कई बार मिल चुका था एवं मेरे बाहर जाने की प्रत्येक प्रकार की योजना उन्हें हृदय से स्वीकार थी और साल भर का यह निरन्तर सम्पर्क और परामर्श अन्ततः घनिष्ठ मैत्री में परिणत हो गया था। यूरोप में ब्रिटेन और जर्मनी में भीषण युद्ध चल रहा था। रूस और जापान तब तक तटस्थ थे, किन्तु पारस्परिक अविश्वास और संदेह का वातावरण घनीभूत होता जा रहा था। ब्रिटेन रूस और जापान को बड़ी शंकालु दृष्टि से देखता था। अनुभवी ब्रिटिश गुप्तचर जापानी कौंसल (कलकत्ता) के इर्द गिर्द सदैव घूमा करते थे और इस बात का पूरा पता ठिकाना रखते थे कि वहाँ कौन-कौन व्यक्ति मिलने जाया करते हैं और जापानी कौंसल का किन-किन देशी लोगों से निकट सम्पर्क है। मैं गुप्तचर विभाग की इस जाँच-पड़ताल से अनभिज्ञ नहीं था। मेरे साथियों ने मुझे गुप्तचर-विभाग में दर्ज एक विस्तृत रिपोर्ट बतायी थी कि भारत-सरकार मेरी जापान जाने की योजना को किसी न किसी प्रकार जानती है और गुप्तचर विभाग इस तलाश में है कि मेरी परिपूर्ण योजना क्या है यह जान जाये। मेरा अकेले एकान्त निवास करना और बाहर से किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं रखना भी सरकार की नजरों में रहस्यात्मक होता जा रहा था। मेरी चिन्ता बढ़ती जा रही थी कि किस प्रकार मैं शीघ्रातिशीघ्र अपनी योजना को कार्यान्वित कर डालूँ और रहस्य और गोपनीयता के वातावरण में पनपनेवाले संदेह और शंका को अधिक न बढ़ने दूँ। जापान के मार्ग से रूस जाने की योजना अभी

पूरी तरह व्यर्थ नहीं समझी गई थी। सुविधा और सफलता के अंदाजों की अपेक्षा थी। जापानी कौंसल अब भी अपने दिये गये वचन पर दृढ़ थे और जापान से रूस की सारी यात्रा सम्बन्धी सुविधाएँ देने को वह तैयार थे। मेरी चिन्ता देखकर उन्होंने जापान सरकार से इस विषय में परामर्श किया था और मुझे बताया था कि जापान गवर्नमेण्ट को मेरी प्रत्येक प्रकार की सहायता करने में बड़ी प्रसन्नता होगी। साथ ही श्री रासबिहारी बोस का भी एक सन्देशा था जिसमें उन्होंने मुझसे बड़े प्रेम भरे शब्दों में आग्रह किया था कि मैं जापान अवश्य जाऊँ और उनसे मिलकर भावी कार्य-क्रम की रूपरेखा निश्चित करूँ। मैंने जापानी कौंसल को उनकी सहायता और मैत्रीपूर्ण व्यवहार के लिये धन्यवाद दिया और उनके द्वारा जापान सरकार को अपनी कृतज्ञता का सन्देश भी भिजवाया। साथ ही मैंने एक पत्र श्री रासबिहारी बोस को भी लिखा जिसमें मैंने उनको वचन दिया था कि भारत से बाहर जो भी आन्दोलन शुरू किया जावेगा उसमें सभी प्रवासी भारतीयों का सहयोग होगा और इस आन्दोलन के सङ्गठन में उनकी अपेक्षा किससे अधिक सहायता मिल सकेगी? मैंने उनको विश्वास दिलाया था कि उनके प्रेम पर विश्वास रखकर ही मैं यह काम करने जा रहा हूँ। अतः किसी न किसी प्रकार काम शुरू करने से पूर्व उनसे मिलूँगा अवश्य।

जापानी कौंसिल की सहृदय सहायता पर हम लोगों ने फिर विचार किया। अन्य योजनाओं की अपेक्षा उनमें सुविधाएँ अवश्य थीं। मेरे भागने की बहुत कुछ जिम्मेवारी जापानी

कौंसल ले रहे थे और जापान पहुँच जाने पर तो मेरे रूस जाने की सारी योजना जापानी सरकार द्वारा पूरी हो सकती थी—ऐसा अश्वासन मुझे दिया गया था। किन्तु खतरा और संदेह भी इस मार्ग में कम नहीं था। भारत सरकार मेरे और जापानी-कौंसल के सम्पर्कों से परिचित थी। गुप्तचर मेरे रहस्यमय भविनव्य का पूरा पूरा भेद मालूम करने की तलाश में थे। हमारा ख्याल था कि मेरे गायब होने की खबर पाते ही भारत सरकार सिंगापुर के मार्ग पर ही पहले मेरी तलाश करवायेगी और इस प्रकार गुप्तचरों की गिद्ध-दृष्टि से बचकर निकल भागना मुझे असम्भव लग रहा था। मेरा अनुमान सही निकला। उस शाम को ही मुझे एक खबर मिली कि सरकार ने एक आदेश जारी किया है कि जापानी कौंसल से कोई व्यक्ति बिना सरकारी मध्यस्थता के न मिले और जापानी कौंसल को भी इसी प्रकार की चेतावनी मिली। ब्रिटिश गवर्नमेंट जर्मनी के खिलाफ युद्ध में संलग्न है। अतः सैनिक भेदों की गोपनीयता के लिये यह आवश्यक है कि कोई भी विदेशी सरकारी विभाग भारत में किसी प्रकार का जन-सम्पर्क न रक्खे। भारत से बाहर जाने वाले विदेशी जहाजों पर जाँच-पड़ताल भी प्रारम्भ हो गयी थी। किन्तु जापानी कौंसल इतने पर भी मेरे भागने की जिम्मेदारी लेने को तैयार थे। बड़े विचार-विमर्श के बाद आखिर हम लोगों ने जापान जाने की योजना मुल्तवी कर दी। क्योंकि भारत सरकार पर वह भेद प्रकट हो चुका था और सरकारी गुप्तचर बरमा के रास्ते पर और सिंगापुर में मेरी प्रतीक्षा कर रहे थे।

जापान जाने की योजना मुल्तवी करने के बाद मेरे सामने दो विकल्प शेष रह जाते थे—समुद्री माग और सीमान्त के प्रांतों से अफगानिस्तान पहुँचना। समुद्री मार्गों से बाहर जाने की कोई गुञ्जाइश ही नहीं थी। अतः बाहर निकल भागने के लिये सीमा-प्रान्तों के पर्वतीय मार्ग ही थे। मेरी प्राथमिक योजना भी यही थी जो दाढ़ी बढ़ाने तक चरितार्थ हो चुकी थी। जापान जाने की योजना जितनी शीघ्रता से पेश हुई थी उसी तूफान से छिन्न-भिन्न भी हो गयी। बाद में मुझे बड़ा पश्चात्ताप रहा। इतना समय व्यर्थ नष्ट हुआ। समय के बेकार जाने के साथ-साथ मेरे सामने सरकार के परिवर्धित सन्देह और सतर्कता के खतरे की भी समस्या थी। किन्तु पश्चात्ताप और अधैर्य के बीच कभी-कभी मैं रासबिहारी बाबू के स्नेह भरे शब्दों को स्मरण करके आह्लादित भी हो उठता था। कई दिनों से मेरी उत्कट लालसा थी कि मैं जापान जाकर रासबिहारी बाबू से मिलूँ। हिन्दुस्तान की आजादी की लड़ाई में रासबिहारी बाबू की उत्तप्त कुरबानी की भी शक्ति है। भारतवासियों के हृदय में उनके पुरुषार्थी कर्तृत्व के प्रति आपार श्रद्धा और कृतज्ञता रहगी। अस्तु।

हाँ तो मेरे सामने सीमांत जाने का ही विकल्प था। इसके सिवाय दूसरा और कोई चारा न था। अतः बड़े विचार परामर्श के पश्चात् हम लोगों ने जाने के दिन और समय को निश्चित कर लिया और ठीक निश्चित समय पर मैं भारत से काबुल के लिये विदा हो गया। काबुल पहुँच कर वहाँ मेरे रूस जाने की योजना में बाधा उत्पन्न हो गयी। अतएव अपना असल रूप

बदल कर मैं जर्मनी राजदूत की सहायता से सकुशल बर्लिन पहुँच गया।

अपनी जन्मभूमि को छोड़ने के बाद मुझे अनेक अनुभव हुए। मैं दोनों पक्षों के रेडियो सम्वाद को वहाँ सुना करता था।

जर्मन अधिकारियों द्वारा मुझे यह अधिकार मिल गया था कि मैं दुश्मनों का रेडियो सम्वाद और प्रचार सुनूँ। युरोप के समस्त मोरचों और किले-बंदियों को देखने का मौका मुझे मिल गया।

अब सवाल यह था कि ऐसी स्थिति में भारत की हालत क्या है? तीन उपाय थे—(१) युद्ध से अलग और तटस्थ स्थिति में रहना, (२) ब्रिटेन के पास जाकर स्वतंत्रता की भीख माँगना और (३) ब्रिटेन के शत्रुओं के साथ मिलकर युद्ध में भाग लेना और स्वतंत्रता प्राप्त करने की योग्यता प्राप्त करना।

ब्रिटेन के शत्रुओं से मिलकर युद्ध करना और ब्रिटिश साम्राज्य के विनाश में भाग लेना ही मुझे ठीक रास्ता मालूम हुआ।

भारत की भीतरी अवस्था बहुत चिन्ताजनक थी। भारत में जो शक्तियाँ ब्रिटेन के खिलाफ कुछ कर रही थीं उसका समर्थन करना और उन्हें प्रोत्साहन देना हमारा कर्त्तव्य था। भारत की समस्त जनता ब्रिटिश सरकार के खिलाफ थी।

मेरे विचार से भारत को आजाद करने वाली सेना के दो कर्त्तव्य होने चाहिये। सबसे पहला और महत्त्वपूर्ण कर्त्तव्य यह कि ब्रिटेन से लड़ा जाय और अपनी मातृभूमि को स्वतंत्र किया

जाय। दूसरा काम भारत में इतनी बलवान सेना तैयार करना है जो किसी भी एकराष्ट्र अथवा समस्त राष्ट्रों की एक सम्मिलित शक्ति के आक्रमण से भारत की सर्वदा रक्षा कर सके।

मित्रों, हम सबको सोचना चाहिये कि हम गुलाम नहीं रहेंगे। गुलामी का मजा हम चख चुके हैं। विदेशी आक्रमणकारियों से अपनी मातृभूमि की रक्षा के लिये आप लोगों का कर्त्तव्य है कि दुनिया में सबसे अधिक बलवान सेना संगठित करें। योग्यता और सामर्थ्य का जहाँ तक ताल्लुक है, मैं आपको बतला दूँ कि भारतीय सिपाही किसी से पीछे नहीं हैं हम लोगों को उचित शिक्षा और अवसर नहीं दिया जा रहा है। जब-जब ये दोनों बातें भारतीयों को प्राप्त हुई है तब-तब उन्होंने साबित कर दिया है कि वे किस धातु के बने हैं। केवल सैनिक मामलों में ही नहीं, बल्कि राजनीतिक, अर्थशास्त्र, विज्ञान, खेल, वगैरह में भी हम भारतीय किसी भी तरह पिछड़े हुए नहीं हैं। भारतीय योग्य हैं बल्कि अधिक योग्य हैं। परमात्मा ने उन्हें बनाया ही इस रूप में है। दुनिया से हमें बहुत कुछ सीखना है, और हम सीखने को तैयार हैं। इसी शिक्षा, अपनी नैसर्गिक योग्यता तथा सामर्थ्य और आत्म-विश्वास के बल पर हम लोग इस सेना का संगठन कर रहे हैं।

आज़ादी की लड़ाई

—::o::—

[पिछले २६ जून को सिंगापुर रेडियो से वेवेल प्रास्ताव के दिनों में नेताजी ने हिन्दोस्तान के विद्रोहियों को यह सन्देश दिया था]

साथियों ! आज मैं तुमसे उसी हैसियत से बोल रहा हूँ जिस हैसियत से एक विद्रोही दूसरे विद्रोही को विद्रोह का आमंत्रण देता है। हिन्दोस्तान आज भयानक राजनीतिक संकट में पड़ा है और अगर आज आपने कोई भी गलत कदम उठाया तो आप की मञ्जिल महज एक सपना बन कर रह जायगी। आप नहीं समझ सकते कि आज मेरे दिल की धड़कनों में कितनी चिन्तायें आगयीं हैं जब कि एक तरफ तो आजादी को इतने करीब देख रहा हूँ और दूसरी तरफ आपकी मनोवृत्ति से आजादी को कोसों दूर हटते हुए पा रहा हूँ।

मुझे यह देख कर ताज्जुब हो रहा है कि अँग्रेजी सरकार अपने धोखेबाज प्रचार में इतनी सफल हो गई है कि तीन साल पहले जिस मुल्क ने करवट बदल कर आजदी की लड़ाई का एलान किया था और करो या मरो का नारा लगाया था आज उसी मुल्क के रहनुमा चन्द सीटों और पदों से सन्तुष्ट होने के लिए तैयार हैं। हम जो इस वक्त विदेशों में हैं भारत की स्थित को

निरपेक्ष रूप से देख सकते हैं और इसलिये मेरा कर्तव्य है कि मैं आपको वास्तविकता से परिचित कराऊं।

आज के राजनैतिक संकट का मुख्य कारण यह है कि हमारे देश के वे प्रभावशाली व्यक्ति जिनके दिल में तीन साल पहले आजादी के घाव कसक उठे थे वे आज समझौते के लिये अपना अभिमान बेचने को तैयार हैं। यह कदम बहुत गलत है। आजादी के मसले पर समझौते नहीं लड़ाइयाँ हुआ करती हैं, संधियाँ नहीं बलिदान हुआ करते हैं। फिर आपकी निराशा का क्या कारण है यह मेरे समझ में नहीं आता। मुझे यकीन है कि जल्द और बहुत जल्द हम अपनी आजादी जीतेंगे।

सवाल उठ सकता है कि मेरे इस असाधारण आशावाद का कारण क्या है? कारण यह है कि मुझे विश्वास है कि बर्मा में हार हो जाने के बाद भी पूर्वी एशिया में शान्ति नहीं होगी, एक और बड़ी खूनी लड़ाई का सूत्रपात्र होगा जिसके दौरान में भारत को भी कन्धे से कन्धा लगाकर अपनी आजादी जीतनी होगी!

फिर हिन्दोस्तान आज एक अन्तर्राष्ट्रीय समस्या बन चुका है। वह महज पार्लियामेन्ट नहीं वरन विश्वशान्ति की शर्त बन गया है। लेकिन अपने मसले को दुनिया के सामने ठीक तौर से रखने और दूसरों की सहानुभूति जीतने के लिये हमें दो कार्य करने होंगे।

पहले तो हमें हर तरह के समझौतों को ठोकरों से चूर कर देना होगा। दूसरी बात यह कि हमें अपनी आजादी का एलान

हथियारों की झंकार की लय पर करना होगा। अगर आप वहाँ हथियारों की लड़ाई नहीं लड़ना चाहते और सत्याग्रह आन्दोलन भी नहीं चला सकते तो कम से कम अपमान जनक समझौते के कड़वे घूँट पीकर उन लोगों के माथे पर कलंक का टीका न लगाइये जो अपने घर-बार से दूर निर्जन विदेशों में मातृभूमि की आजादी के लिये जान तोड़ कर लड़ रहे हैं।

हमारे भारत के गुप्तचरों ने बताया कि कुछ कांग्रेस के नेता मुझसे नाराज हैं। मैं उनकी नाराजगी को समझते हुए भी स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि मैं समझौते का हमेशा विरोधी रहा हूँ और रहूँगा। फिर कांग्रेस वर्किंग कमेटी को अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की पीठ के पीछे अगस्त प्रस्ताव वापस लेने और समझौता करने का कोई वैधानिक और नैतिक अधिकार भी नहीं है मगर मैंने सुना है कि कुछ लोग मुझ पर यह आरोप लगा रहे हैं कि मैं जापानियों की सहायता ले रहा हूँ।

मैं स्पष्ट कह देना चाहता हूँ कि मैंने जापान की सहायता ली है और मैं इसके लिये जरा भी शरमिन्दा नहीं हूँ। जापान ने हिन्दोस्तान की आजादी का एलान कर दिया है। अस्थायी आजाद हिन्द सरकार को स्वीकार कर लिया है, इसी आधार पर हमने समझौता किया है, मगर आप ? आप तो उस सरकार से समझौता करने जा रहे हैं जो सदियों से आपका खून चूस रही है। फिर भी आप हम पर आरोप करते हैं ? हाँ अगर आप ब्रिटेन से इस शर्त पर समझौता करें कि वह आपको आजाद राष्ट्र का अधिकार दे दे उस हालत में तो बात ही दूसरी हो जायगी।

यह ठीक है कि जापन ने हमें लड़ाई के लिये हथियार दिये है, मगर फिर भी वह एक आजाद मित्र राष्ट्र की सहायता है। हमारी सेना सर्वथा हमारी सेना है। इस सेना को हिन्दोस्तानी शिक्षकों द्वारा राष्ट्र भाषा में शिक्षा दी गई है। हमारा खुद सैनिक स्कूल है जिसमें हिन्दोस्तानी अफसर शिक्षा देते है। इस सेना का झण्डा राष्ट्रीय झण्डा है, छोटे से छोटे सैनिक से लेकर ऊँचे से ऊँचा अफसर तक हिन्दोस्तान की आजादी का दीवाना है। आप हमारी सेना को कठपुतली सेना कहने का साहस कैसे करते हैं? कठपुतली सेना तो सरकारी सेना है जो चाँदी के टुकड़ों के लिये साम्राज्यवादी लड़ाई लड़ती है।

क्या मैं यह सोचूँ कि ढाई लाख सरकारी सेना में कोई भी ऐसा व्यक्ति नहीं जो जेनरल बनाया जा सके? क्या हिन्दोस्तानियों ने ही सब से ज्यादा विक्टोरिया तमगे नहीं जीते हैं, फिर भी कठपुतलियों को जेनरल का पद देने की बेवकूफी कौन कर सकता है?

साथियों! मैं अभी कह चुका हूँ कि मैं जापानियों की सहायता लेना कुछ भी गलत नहीं समझता। अगर अपने को सर्वशक्तिमान समझने वाली गोरी साम्राज्यशाही भी आज भीख की झोली लेकर दर-बदर ठोकरें खा सकती है और अमेरिका के सामने घुटने टेक कर भीख माँग सकती है तो हम तो आखिर एक गुलाम और पद दलित कौम हैं। हमें अपने किसी भी दोस्त की सहायता स्वीकार कर लेने में क्या गुनाह है? आज हम जापान की मदद ले रहे हैं, हो सकता है कल हमें दूसरे की

सहायता लेनी पड़े। हमें हिन्दोस्तान की मदद के लिये जिससे भी सहायता लेनी होगी हम कभी न हिचकेंगे।

अगर बिना किसी बाहरी मदद के हम हिन्दोस्तान की आजादी जीत सकते तो मुझसे ज्यादा और कोई खुश न होता। मगर आज तक मैंने इतिहास में कोई आजादी का आन्दोलन नहीं पढ़ा जो बिना बाहरी मदद के सफल हुआ हो। और गुलामों के लिये यह ज्यादा प्रतिष्ठा जनक है कि वे अपने शासकों के दुश्मनों का साथ दें, बनिस्बत इसके कि वे अपने शासकों से समझौता करके घुटने टेक दें। हमारी सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि हमारे नेताओं ने हमें अपने दुश्मन से नफरत करना नहीं सिखाया है—यद्यपि वे हमें दूसरे देशों के दुश्मनों से नफरत करने का उपदेश देते रहे हैं। ताज्जुब है कि हमारे देश के कुछ नेता बाहरी फैसिज्म का विरोध करते हैं पर अपने शासक फैसिज्म से हाथ मिलाने के लिये तैयार हैं।

साथियों! मुझे कुछ भी कहने की जरूरत न होती अगर मैं एक कुर्सी तोड़ क्रान्तिकारी होता! मगर मैं और मेरे साथी यहाँ विदेश में आजादी या मौत की लड़ाई लड़ रहे हैं। हमारे बहादुर लड़ाकों को मोर्चे पर मौत से खेलना पड़ता है। हम जब बरमा में थे तो मशीनगन और बम तो हमारे आसपास के तमाशे बन गये थे। मैंने अपनी आँखों से अपने साथियों को ब्रिटिश बमों से आहत होकर तड़प-तड़पकर मर जाते हुए देखा है। मैंने देखा है कि यूनियन जैक वाले हवाई जहाजों ने आजाद हिन्द फौज रंगून वाले सम्पूर्ण आस्पताल को जानबूझ कर मशीनगनों और बमों

से जमींदोश कर दिया है। उनके घाव मेरी पसलियों में चिपक गये हैं, उनकी आहें मेरे गले में रूँध गई हैं, उनका खून मेरी आँखों में उतर आया है।

अगर मैं और मेरे कुछ साथी अब भी जिन्दा हैं तो यह केवल ईश्वर की कृपा है। हमको आप से बोलने और आपको सलाह देने का पूरा अधिकार है क्योंकि हम मौत की छाया में जिन्दा रहे हैं और लड़ते रहे हैं। आप जो बड़े-बड़े बँगलों में रहते हैं आपको नहीं मालूम कि बमबाजी का क्या असर होता है। आप नहीं जानते कि जिस वक्त आपके सरों पर ब्रिटिश जहाज मड़रा रहे हों, आपकी इमारतें बमों से चूर-चूर हो रही हों, आपसे हाथ भर के फासले पर सन्नाती हुई मशीनगन की गोलियाँ उड़ रही हों, बच्चे मर रहे हों औरतें अस्तव्यस्त भाग रही हों, खून बह रहा हो, पसलियाँ टूट रही हों, मुर्दे सड़कों पर बिछ रहे हों, उस वक्त का अनुभव कितना गहरा होता है। हमारे दिलों पर इन खूनी लकीरों के दाग पड़ गये हैं मगर फिर भी हमने अपना सिर ऊँचा रक्खा है। हमसे फिर भी आप उम्मीद करते हैं कि हम समझौतों की ओर नजर उठा कर भी देख सकेंगे? नहीं, कभी नहीं, हिन्दुस्तानी खून इतना पतला नहीं होता!

साथियों! फिर आज हमें सोचना है कि हम क्या करें? अगर वर्किङ्ग कमेटी समझौते के लिये तैयार भी हो जाती है तो आपको बराबर अपना आन्दोलन जारी रखना है। आप वर्किङ्ग कमेटी को मजबूर कीजिये कि वह सभी राजनीतिक कैदियों को छुट-

कारें की मंजूरी के बिना समझौते का ख्याल भी मन में न लाये। फिर आप इस बात का विरोध कीजिये कि हिन्दुस्तानी सिपाही पूर्वी एशिया में गाजर-मूली की तरह कटने के लिये भेजे जायँ। अगर इसमें आप सफल नहीं होते तो आपको सरकार का सक्रिय विरोध करना होगा। ब्रिटेन ने पिछले वर्षों में अपनी सेनाओं को गुप्त आदेश दिये हैं जिन पर चलकर वह विदेशों में अपनी शक्ति बढ़ावे। आप उन आदेशों को अपने पक्ष में, अपने सङ्गठन में प्रयुक्त कीजिये। भारतीय सेना अब पुरानी भारतीय सेना नहीं रही। उसमें बहुत से सचेत और देशभक्त सिपाही और अफसर हैं। जब इस सेना को भंग किया जायगा उस समय विद्रोह की चेतना जगना स्वाभाविक है। इस युद्ध को धन्यवाद है कि आज ढाई लाख हिन्दोस्तानी हथियार चलाना सीख गये हैं। सेना के भंग होने के समय वे शस्त्रागार लूटकर ब्रिटिश शासकों पर हमला बोल सकते हैं।

मैं ज्यादा कुछ नहीं कहना चाहता हूँ। मगर आपको याद रखना होगा कि विद्रोही वह है जो सत्य में विश्वास रखता है और विश्वास रखता है कि आखिरी में सत्य और न्याय की ही विजय होती है। जो असफलताओं से, क्षणिक असत्यों से निराश हो जाता है उसे अपने को विद्रोही कहने का कोई हक़ नहीं। विद्रोही का बाना है—आँखों में आशा के सपने, हाथों में मौत के फूल और दिल में आजादी का तूफान !

मुझे विश्वास है कि अगर हम अपने मोहरे ठीक चलते गये तो इस युद्ध के अन्त में हमारी विजय होगी मगर यदि हम हार

भी गये तो निराशा की जरूरत नहीं। हम युद्ध के बाद एक क्रान्ति करेंगे; अगर हम उसमें भी असफल रहे तो तीसरा महा-युद्ध हमें फिर लड़ाई का सफल मौका देगा।

मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि १० साल के अन्दर अगला विश्व युद्ध आ रहा है। हिन्दोस्तान आज़ाद होगा यह तो निश्चित है—कब तक? यह हम पर निर्भर करता है! हो सकता है अभी कुछ दिन और लगें किन्तु इसमें इतना निराश होने की क्या जरूरत है कि हम वायसराय भवन में घुटने टेकने के लिये तैयार हो जाँय। मेरे साथी विद्रोहियों! तब तक अपना तिरंगा झण्डा ऊँचा रखो जब तक कि वह खुद वायसराय भवन और लाल किले पर न फहराने लगे।

हिन्दोस्तान के आधार पर अंग्रेज साम्राज्य का भवन खड़ा है। हर अंग्रेज चाहे वह लेबर दल का हो या टोरी हो, वह अच्छी तरह से जानता है कि अपनी जिन्दगी कायम रखने के लिये उसे भारत का खून चूसना जरूरी है। इसलिये हिन्दोस्तान को अपने कब्जे में रखने के लिये हर अंग्रेज पागल होकर लड़ रहा है। इसीलिये अपनी आखिरी सांस तक अंग्रेज हिन्दोस्तान को अपने कब्जे में रखने की कोशिश करेगा।

इसलिये मैं साफ़-साफ़ कह देना चाहता हूँ चाहें अंग्रेज राज-नीतिज्ञ मरते-मरते मर जायँ मगर वह हिन्दोस्तान की आज़ादी कभी न स्वीकार करेंगे। यह सोचना कि अंग्रेज अपने मन से हिन्दोस्तान का राज छोड़ देंगे, केवल पागलपन है।

इसलिये अंग्रेजों से किसी तरह के समझौते की उम्मीद हमें

हमेशा के लिये छोड़ देनी चाहिये। आज़ादी के लिये समझौते बेमाने होते हैं। आज़ादी दी नहीं जाती वह ख़ून का मोल चुका कर खरीदी जाती है।

हिन्दोस्तान की आज़ादी के लिये लड़ने का काम हमारा है। हम और किसी पर इसकी जिम्मेवारी लादना अपनी शान के ख़िलाफ समझते हैं।

मगर हमारा शत्रु जानवरों से बदतर है और वह हथियारों से लैस है। इस तरह के दुश्मन से सविनय अवज्ञा, सत्याग्रह आदि बेकार हैं। हमें कांटे को कांटे से निकालना होगा। दुश्मन ने अपनी तेग निकाल ली है। हमें भी मौका नहीं चूकना चाहिये।

अब पीछे हटने का मौका नहीं है। हमें आगे, आगे और हमेशा आगे बढ़ना है—विजय की ओर! आज़ादी की ओर!!

स्वतन्त्रता के लिये बलिदान

—::o::—
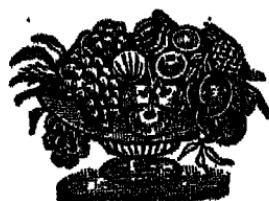
[नेताजी का स्योनान (सिंगापूर) में दिया हुआ ओजस्वी भाषण ।]

साथियों,

इस सम्मेलन में आये हुए भाई बहिनों का मैं दिल से स्वागत करता हूँ । मुझे यकीन है कि यह सम्मेलन हमारे लिये बहुत महत्वपूर्ण साबित होगा । मुझे बार-बार भरोसा दिलाया गया है कि आप लोग अपनी स्वतन्त्रता के लिये सजग हैं, सचेष्ट हैं, आज यह अवसर आया है कि आप उसे सत्य सिद्ध कर सकते हैं ।

ये बलिदानी मौके लम्बे भाषणों के लिये नहीं होते हैं । मैं आपको याद दिलाना चाहता हूँ कि हिन्दुस्तान की आज़ादी जीतने की ज़िम्मेवारी आपके ऊपर है ।

जब कोई सेना लड़ने जाती है तो लड़ाई की जीत और

हार का उत्तरदायित्व छोटे से छोटे सैनिक से लेकर बड़े से बड़े अफसर पर होता है। हर एक उसमें अपना भाग अदा करता है। आप याद रखिए कि पूर्वी एशिया के हिन्दुस्तानी आज एक जीती-जागती संगठित फौज है। मोर्चे के सिपाहियों की तरह आप पर भी एक गम्भीर उत्तरदायित्व है, क्योंकि आप जिस आजादी की लड़ाई लड़ रहे हैं उसका मोर्चा घर-घर में ही नहीं हर दिल में खुला हुआ है। मैं जानता हूँ कि आप में से कुछ गरीब हैं, कुछ अमीर, कुछ शिक्षित, कुछ अशिक्षित। लेकिन इन सब विषमताओं के बावजूद आप सब अपने कर्त्तव्यों के प्रति समान रूप से उत्तरदायी है। जब सेना में कोई सेनापति नियुक्त होता है उस समय उसका कर्त्तव्य हो जाता है कि वह सबसे आगे आकर खतरा उठाये। स्योनान (सिंगापूर) आज हिन्दुस्तान की आजादी की लड़ाई में सबसे आगे है और इसीलिये यह निश्चित है कि जो आवाज स्योनान से उठेगी वह पूर्वी एशिया की सुदूर सीमाओं से टकरा जायगी। आपका उत्तरदायित्व बहुत ज्यादा है क्योंकि आपको आगे बढ़कर नेतृत्व करना है।

मैं यह चाहता हूँ कि आप क्षण भर के लिये कल्पना कीजिये कि अगर हमारी आजाद सरकार होती तो हम क्या करते? आजाद सरकार ने अनिवार्य भर्ती की होती और हर नागरिक ने उसे स्वीकार किया होता क्योंकि आजाद कौम अपना उत्तरदायित्व समझती है। आजाद सरकार इस तरह से धन की भीख भी नहीं माँगती फिरती, वरन् उसने एक बजट

तैयार किया होता और उसके लिये धन एकत्रित करना प्रारम्भ कर दिया होता।

कानूनी और नैतिक तौर से जब देश युद्ध की अवस्था में हो उस वक्त व्यक्तिगत सम्पत्ति का कोई भी अर्थ नहीं होता है। और हम लोग भी आज अपनी आजादी की लड़ाई लड़ रहे हैं।

अगर आप समझते हैं कि यह दौलत और सम्पत्ति आपकी है तो आप भूल कर रहे हैं। युद्ध के समय में सारे देश की सम्पत्ति राष्ट्र की होती है। आपकी जिन्दगी आज आपकी नहीं है, वरन् आपके देश की है, केवल आपके देश की है।

मुझे यकीन है कि आप अच्छी तरह समझते हैं कि आज आपको किसी न किसी तरह से आजाद होना है और जिस दिन आप यह सोच लेंगे उसी दिन आपका सम्पत्ति का मोह छूट जायगा। आपके सामने साफ रास्ता है। अगर आपके दिल में अपने देश का प्यार है तो सामने आइये और अपना तन, मन, धन अर्पित कर दीजिये अगर आप ऐसा नहीं महसूस करते तो दूसरा रास्ता आपके लिये खुला है। लेकिन याद रखिये जो आजादी के लिये नहीं लड़ता, आजाद हिन्दुस्तान में उसके लिये कोई स्थान नहीं रहेगा। आजाद हिन्द उस पर ज्यादा से ज्यादा यही दया दिखा सकती है कि वह उन लोगों को तीसरे दर्जे का टिकट कटाकर विलायत भेज दे।

मुझे हिन्दुस्तान को आज़ाद करना है किसी भी तरीके से, किसी भी हालत में। मैं आप सबसे अपील करता हूँ कि आप मेरे साथ रहें। अगर आप इस रास्ते को नहीं अपनाते तो स्पष्ट कहिये कि आप आज़ादी नहीं चाहते और उस हालत में आपके सामने दूसरा मार्ग स्पष्ट है।

मैं आपसे पिछले भाषण में कह चुका हूँ कि अब मैं आपसे धन के लिये प्रार्थना नहीं करूँगा। मैं यहाँ पर भिखारी की तरह हाँथ फैलाये नहीं खड़ा हूँ। मैं आज आज़ाद हिन्द सरकार के प्रतिनिधि के रूप में हूँ जिसको आप अपनी जान-माल का अधिकार सौंप चुके हैं।

मैं आपको स्पष्ट बता दूँ कि मेरी आदत केवल बातें करने की और धमकी देने की नहीं है। मैं जो कुछ कहता हूँ वह सोच समझकर कहता हूँ और मेरे दुश्मन भी जानते हैं कि मैं जो कुछ कहता हूँ वह पूरी तौर से अर्थवान होता है।

हर एक आदमी आज या तो हमारा साथी हो सकता है या दुश्मन। जो हमारी मदद करने से इन्कार करता है वह स्पष्ट तौर से मेरा दुश्मन है, हम आज आज़ादी या मौत की लड़ाई लड़ रहे हैं।

मैं आपसे कहता हूँ कि आज़ाद हिन्द फौज की ओर देखिये। इन बहादुर लड़ाकों ने अपनी जान बाजी पर लगा दी है और

वे नहीं जानते कि वे मरेंगे या बचेंगे। मगर कुछ भी हो वे लड़ाई से भागेंगे नहीं। लड़ाई से भागने की आदत तो वेवेल और उसके सिपाहियों की है।

अँग्रेजों ने उसे भागने के उपलक्ष में तरक्की दी है और उसे वायसराय बनाया है क्योंकि एक के बाद दूसरी शिकस्त खा कर उसने अपने को भागकर जान बचाने में सिद्धहस्त साबित कर दिया है।

आज़ाद फौज के सामने अपनी जान बचाने का सवाल ही नहीं है। जब सब लोग अपनी जान की बाजी लगाते जा रहे हैं उस समय कुछ अमीर सेठों ने मुझसे पूछा है कि अनिवार्य भर्ती के अर्थ ५ प्रतिशत या १० प्रतिशत होता है। मैं उनसे पूछना चाहता हूँ कि जब कोई सिपाही लड़ता है तो क्या वह १० प्रतिशत खून बहाता है और ९० प्रतिशत धन बटोरने के लिये, जिन्दा रहने के लिये बचा रखता है?

जिस वक्त वे दीवाने अपनी जान बाजी पर लगा रहे हैं, क्या आप अपने धन को भी मातृभूमि पर न्योछावर नहीं कर सकते? मेरे पास गरीब हिन्दुस्तानी, घड़ीसाज, धोबी, नाई, छोटे-छोटे दूकानदार और ग्वाले आये, उन्होंने अपना सर्वस्व दे डाला, अपनी बैंक की किताबें दे दीं और आज़ादी की फौज में भर्ती हो गये। मगर क्या किसी अमीर में अपने सर्वस्व दे डालने की हिम्मत है?

हम हिन्दुस्तानी तो त्याग के सिद्धान्त में विश्वास करते हैं। हिन्दू संन्यासी और मुसलमान फकीरों के आदर्शों में विश्वास करते हैं और मैं आप सबसे पूछता हूँ कि क्या ४० करोड़ मनुष्यों को गुलामी की घुटन से मुक्त करने से बड़ा भी कोई काम हो सकता है ? क्या आप उसके लिये सर्वस्व त्याग करने के लिये तैयार हैं ?

नेताजी के हृदयोद्गार

—::o::—

हमारे लिए समाजवाद तात्कालिक प्रश्न नहीं है फिर भी समाजवादी प्रचार देश को स्वतंत्रता के उपरान्त समाजवाद के लिए तैयार रखने के हेतु आवश्यक है।

× × ×

सारे संसार में भारत के विरुद्ध प्रचार किया जाता है कि हम असभ्य हैं और उससे यह निष्कर्ष निकाला जाता है कि हमको सभ्य बनाने के लिए अंग्रेजों की आवश्यकता है। इसका उत्तर यही है कि हम संसार को समझा दें कि हम क्या हैं और हमारी संस्कृति क्या है।

× × ×

संसार की राजनीति में स्वतंत्र भारत एक स्वस्थ और समृद्ध शक्ति होगी और विदेशों में अपने देशवासियों के हितों की रक्षा कर सकेगा।

× × ×

आज कांग्रेस ही जन आन्दोलन की एकमात्र सर्वोच्च संस्था है। इसके अन्दर उग्र विचार वाले हों और दक्षिण पक्षी हों पर यह भारतीय स्वतंत्रता के लिए प्रयत्नशील तमाम साम्राज्य-विरोधी संस्थाओं का मंच है।

× × ×

सम्पूर्ण भारत उत्कंठापूर्वक आशा एवं प्रार्थना करता है कि महात्मागांधी हमारे राष्ट्र हित वर्षों-वर्षों जीवित रहें। अपनी जनता को एक रखने के लिए उनकी आवश्यकता है। अपने युद्ध को कटुता एवं घृणा से दूर रखने के लिए हमको उनकी आवश्यकता है। भारतीय स्वतंत्रता के महान कार्य के लिए उनकी आवश्यकता है। और इससे भी आगे वे मानवता के हेतु आवश्यक हैं कारण भारत स्वतन्त्र होने के अर्थ हैं मानव का उद्धार।

× × ×

यदि हम केवल अपने पारस्परिक मतभेद को भुला दें। अपनी सम्पूर्ण शक्ति को एकत्रित करें और राष्ट्रीय संग्राम में अपनी पूरी ताकत लगा दें तो ब्रिटिश साम्राज्यशाही पर हमारा हमला निर्णायक और अकाट्य हो जाएगा।

× × ×

हमको पदलोलुपता के कारण अपने बीच पैदा हो जाने वाली गन्दगी और निर्बलता को शीघ्रता से हटाना पड़ेगा।

× × ×

देश के सब उग्र विचार वालों को निकट सहयोग एवं मित्रता से कार्य करना चाहिये और देश की तमाम साम्राज्यविरोधी शक्तियों को ब्रिटिश साम्राज्यवाद पर अन्तिम चोट करने के लिए आगे बढ़ना चाहिये।

× × ×

मेरे स्वर्गीय गुरु देशबन्धुदास और पूजनीय मोतीलालजी

तथा भारत के अन्य महान पुत्रों की आत्मा हमको वर्तमान संकट में प्रेरणा प्रदान करे और महात्मा गांधी, जो अभी भी हमको सहायता देने तथा मार्गप्रदर्शन करने के लिए हमारे बीच उपस्थित हैं, कांग्रेस को वर्तमान जंजाल से निकालें, यही मेरी प्रार्थना है।

× × ×

ईश्वर के नाम पर, उन बीती हुई पीढ़ियों के नाम पर जिन्होंने भारतीयों को राष्ट्र का स्वरूप दिया है तथा उन मृतक वीरों के नाम पर जिन्होंने हमारे लिए वीरत्व और आत्मत्याग की परम्परा स्थापित की है—हम भारतीय जनता का आह्वान करते हैं कि वह भारतीय स्वतन्त्रता के लिए अन्तिम चोट करने के लिए हमारे झंडे के नीचे एकत्रित हों।

× × ×

हम उनका आह्वान करते हैं कि वे अन्तिम संग्राम छेड़ दें और उस संग्राम को वीरता और धैर्य के साथ और अन्तिम विजय पर विश्वास के साथ चलावें—जब तक भारतीय स्वतन्त्रता के दुश्मन भारत-भूमि से निकाल बाहर नहीं फेंक दिए जाते और भारत फिर एक स्वतन्त्र राष्ट्र नहीं हो जाता।

× × ×

अपने सन्मुख कार्य पूरा करने के लिये अपनी कमर कस लो। यह आशा करना कि तुम स्वतन्त्र भारत को देखने के लिये जीवित रहोगे भारी भूल होगी—यह समझ कर भी कि विजय अब अति निकट है। यहाँ पर किसी की यह इच्छा नहीं होनी

चाहिये कि वह जीवित रह कर स्वतंत्रता का आनन्द उठाएगा। अभी भी हमारे सन्मुख एक लम्बी और कठिन लड़ाई है।

× × ×

आज हमारी केवल एक इच्छा होनी चाहिये—मरने की इच्छा ताकि भारत जीवित रह सके—शहीदों की मौत मरने की इच्छा, जिससे स्वतन्त्रता का मार्ग शहीदों के खून से सींचा जा सके।

× × ×

आज मैं आपसे एक सर्वोच्च बलिदान चाहता हूँ। मैं तुमसे खून चाहता हूँ। खून ही उस खून का बदला लेगा जिसे हमारे दुश्मनों ने बहाया है। खून ही स्वतन्त्रता का मूल्य चुका सकता है। मुझे दो खून और मैं तुम्हें दूँगा आज़ादी।

× × ×

हमारा काम आसान नहीं है। हमारी लड़ाई लम्बी और कठिन होगी पर मुझे अपने कार्य की न्यायोचितता तथा अजेयता पर पूर्ण विश्वास है। ४० करोड़ मानव, मनुष्य समाज के पाँचवें अंश को स्वतन्त्र होने का पूर्ण अधिकार है और वे आज स्वतन्त्रता का पूरा मूल्य चुकाने को तैयार हैं।

× × ×

फल स्वरूप संसार की कोई भी शक्ति नहीं है जो हमारे स्वतन्त्रता के जन्मसिद्ध अधिकार से हमको वंचित रख सके।